प्रेमपत्र जिल्द अौव्वल जो कि पहली मई १८६३ ई० से ३० अप्रैल सन् १८६४ ई० तक समाप्त हुआ उसके बचनों का सूचीपत्र ॥

॥ इति ॥

॥ राधास्वामी दयाल की दया राधास्वामी सहाय ॥

॥ प्रेमपत्र राधास्वामी ॥

जिल्द पहिली

बचन पहिला

राधास्वामी दयाल को कुल्ल मालिक और सर्ब समरथ और कुल्ल दयाल और सर्ब प्रेरक समझ कर उनके चरणों की शरण इस तौर पर लेवे कि जो काम करे उस का फल मौज पर रक्खे जैसी मौज हो उस में राजी हो और जिस क़दर बन सके भजन सुमिरन और ध्यान और पोथी का पाठ और सेवा और सतसंग करता रहे और भरोसा दृढ़ करके दया का रक्खे इतने में कुल्ल जीवों का जो इस तौर पर बर्ताव करे गुज़ारा मुमकिन है । जो करतूत करे अगर उसका फल मौज पर जोड़ दे तो बंधन नहीं होगा करम करता हुआ निःकर्म हो जावेगा और अंतर में अभ्यास करके जब ऐसी शरण दृढ़ करी है तो दया का आसरा लेकर जो कुछ पिछले और संचित कर्म हैं आहिस्ता २ कट जावेंगे और मौज के आसरे पर जो कर्म करेगा तो क्रियावान

करम नहीं लगेंगे और प्रारब्ध करम का भी ज़ोर बहुत कम हो जावेगा इस तरह पर सहज गुज़ारा और उद्धार मुमकिन है। इस रीति से तीनों क़िस्म के कर्म अपने जीते जी कटते हुए देख सकता है और राधास्वामी दयाल के चरणों का निशाना बांध कर और इरादा ऐसा पक्का कि वहीं पहुंच कर ठहरूँ और कहीं न ठहरूँ करके अभ्यास करे और दिन २ चरणों में प्रीति प्रतीति बढ़ावे और संसार की तरफ़ से चित्त को (ज़रूरत के मुवाफ़िक़ तवज्जह रख कर) हटाता जावे तो एक या दो जन्म में धुर मुक़ाम पर पहुंचना मुमकिन है और जो कुछ कसर रही है तो तीन जन्म में मगर जो जन्म इसको इसके बाद मिलेगा वह हाल के जन्म से बेहतर होगा यानी कमाई ज़्यादह बनेगी और दुनियां का आराम भी ज़्यादह मिलेगा और सतगुरु से ज़रूर मिलेगा और उनका सतसंग एक दो रोज़ करने में ही इस जन्म की कमाई खुल जावेगी और जितने दिन कि चोला छोड़ने और देह धरने में गुज़रेंगे तब तक ऊंचे स्थान पर रहेगा और सतगुरु के दर्शन और बचन मिलेंगे और फिर दूसरे जन्म में भी दर्शन सतगुरु के मिलेंगे और सतसंग भी मिलेगा और जिस क़दर कि कमाई

पहले जन्म में कर चुका है उसके आगे से कमाई करना शुरू करेगा इस तरह पर जन्म धरने में किसी तरह का हर्ज और नुक़सान नहीं है बल्कि ख़ुशी की बात है कि काम पूरा होवे और धुर मुक़ाम पर बासा पावे। यह शरण जिसका जिकर ऊपर हुआ दरजा अव्वल की शरण है हर एक शख़्स को चाहिये कि इसके मुवाफ़िक़ शरण लेवे और अभ्यास करे। जिस दरजे की शरण होगी उसी कदर फ़ायदा जीते जी और अन्त समय पर मालूम होगा। शरण में दरजे बहुत हैं मगर अपनी परख कि किस दरजे की शरण हासिल है आप कर सकता है यानी जिस क़दर मौज पर राज़ी हो और जिस क़दर दया का भरोसा कर के अभ्यास में लगे उसको मालूम कर के परख हो सक्ती है। पूरी शरणवाले का एक ही जन्म में काम बनेगा और बाक़ी जिस क़दर शरण कम होगी उसी क़दर देर होगी।

जैसे कि सुरत हर एक देह में बैठ कर कुल देह की कार्रवाई अपनी धारों की ताक़त से करती है और कुल देह में प्रेरक वही है इसी तरह से राधा-स्वामी दयाल कुल सुरतों के ताक़त देनेवाले और प्रेरक हैं और हर एक के घट में अंग संग मौजूद

हैं इस से उनका सर्व समरथ होना साबित है। फिर इस तरह प्रतीत करने में कोई दिक़्क़त मालूम नहीं होती है लेकिन मन का क़ायदा है कि यह अपनी चतुराई और तदबीर से बाज़ नहीं आता और पूरा पूरा भरोसा राधास्वामी दयाल की दया का नहीं करता। वजह इसकी यह है कि जिस काम में या जिस चीज़ में इसका बंधन बिशेष है उस काम के करने में पूरा २ भरोसा दया का न लाकर अपना जतन और तदबीर ज़रूर करता है और जो इसकी मरज़ी के मुवाफ़िक़ काम न होवे तो रूखा फीका या दुखी होकर ऐसा ख़याल करता है कि अगर फ़लां तदबीर करता तो काम दुरुस्त होता या फ़लां बात के मेरे करने में कसर रह गई और मौज को भूल जाता है और उसके साथ मुवाफ़िक़त नहीं करता। जो ऐसे मन हैं वह पूरी तौर पर शरण का भरोसा नहीं रखते। वे चाहते हैं कि राधास्वामी दयाल उनकी ख़्वाहिश के मुवाफ़िक़ हर एक काम को पूरा करें और जो ऐसा नहीं होता तो मौज का आसरा छोड़ कर अपनी तदबीर में जहां तक बनता है कोशिश करते हैं। ऐसी शरण कसरवाली है मगर जो इरादा पूरी शरण लेने का सच्चा और पक्का है और

मिहनत और अभ्यास करता रहेगा तो एक दिन पूरी शरण हासिल हो जावेगी। ऐसी शरण दृढ़ करने के वास्ते किसी क़दर वैराग संसार के पदार्थ और भोगों से ज़रूर है। ज़रूरत के मुवाफ़िक़ चाह उठानी चाहिये और फ़ज़ूल और बेज़रूरत चाह जिस क़दर हो सके रोकनी और हटानी चाहिये और मालूम होवे कि जतन करना मने नहीं है पर मौज के आसरे करना चाहिये।

हाल के करमों के फल की प्राप्ती में पिछले करमों का भी असर संग रहता है जो पिछले करम दुरुस्त हैं तो हाल की करतूत दुरुस्त पड़ेगी नहीं तो उसके फल के मिलने में कमी और बेशी ज़रूर होगी हरचन्द कि राधास्वामी दयाल हर वक़्त मददगार हैं लेकिन हर काम जीव की मरज़ी के मुवाफ़िक़ नहीं हो सक्ता और जो पिछले करम नाक़िस यानी दुखदाई हैं तो उनका फल भी ज़रूर थोड़ा या बहुत भोगना पड़ेगा। इसमें घबड़ाना नहीं चाहिये जब तक कि संसार की आशा है तब तक करमों का असर रहा आवेगा जब संसार से निराश हो जावेगा तो करम का बंधन नहीं रहेगा।

सवाल ९—जो सिर्फ़ परमारथ की चाह रखता है

और संसार की कोई आश नहीं है तो उसको भी पिछले करमों का भोग भोगना होगा या क्या ?

जवाब १–जिस ने सच्ची और पूरी शरण ली है और संसार से सच्चा निराश हो गया है उस को जो कुछ आराम या तकलीफ़ आवे वह राधास्वामी दयाल की मौज से होगी और उस में उसका परमार्थी फ़ायदा यानी सफ़ाई मन और सुरत की और चढ़ाई ऊंचे देश की तरफ़ मंज़ूर होगी।

सवाल २–जब कोई शरण में आ गया तो क्या फिर भी काल के साथ डोरी लगी रहेगी ?

जवाब २–जिस ने सच्ची और पूरी शरण ली है तो डोरी काल के साथ नहीं रहेगी मगर क़रज़ा जो पिछले करम का है ज़रूर दिलवाया जावेगा लेकिन मुलायमत के साथ यानी मन भर का सेर भर और ऐसी जीव आइन्दा को यानी हाल के जन्म में काल से ब्यौहार नहीं बढ़ावेगा और काल के साथ ब्यौहार से यह मतलब है कि संसार के भोगों की आशा मन में रख कर उनकी प्राप्ती के लिये जतन करना और मौज का आसरा छोड़ देना।

बचन दूसरा

सन्तों ने भक्ती मार्ग की महिमां विशेष की है

और यह कहा है कि भक्ती मार्ग दयाल मत और गुरु मत का है और जिस मत में प्रेम और भक्ती नहीं है वह मन मत है। कोई २ मत ऐसे भी हैं जहां कुछ भक्ती और प्रेम है मगर वह मूरतों और जड़ निशानों में भूले हुए हैं और सच्चे मालिक का पता और खोज बिलकुल नहीं है। सन्तों ने सिर्फ़ उस भक्ती की महिमा की है जो सच्चे मालिक के चरणों में होवे और अन्तर में अभ्यास कर के भगवंत से मिलने का इरादा होवे। ऐसी भक्ती सतगुरु द्वारा हासिल होगी क्योंकि कुल्ल मालिक का भेद देनेवाले सन्त सतगुरु ही हैं॥

और जानना चाहिये कि कुल्ल मालिक राधास्वामी प्रेमस्वरूप हैं और सत्तपुरुष भी प्रेम स्वरूप हैं और आत्मा परमात्मा और ब्रह्म और पारब्रह्म भी प्रेम रूप और सतगुरु भी प्रेमस्वरूप और जीव भी प्रेमस्वरूप है। बग़ैर प्रेम के मिलना सच्चे मालिक से नहीं हो सकता। आपस में इतना फ़र्क़ है कि राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक प्रेम का सोत और पोत है यानी ख़ज़ाना और भंडार और सत्तपुरुष प्रेम का सिंध है और ब्रह्म और पारब्रह्म प्रेम की लहर है और जीव प्रेम की बूंद है। जीव के साथ इच्छा लगी हुई है और ब्रह्म के साथ माया लगी

हुई है सिन्ध यानी सत्यनाम पद में माया बहुत कम है मगर सिन्ध के साथ सिन्धरूप हो रही है पर सोत पोत में यानी राधास्वामी पद में माया का नाम और निशान बिलकुल नहीं है। जो कोई सच्चा उद्धार और सच्ची मुक्ती चाहे उस को प्रेम अंग ले कर सच्चे मालिक का पता लगाना चाहिये और सच्चे मालिक का पता सतगुरु यानी भेदी गुरू से मिल कर मालूम होगा और जब सतगुरु मिल जावें और सच्चे मालिक का पता और भेद मालूम हो जावे तो उसको चाहिये कि सुरत शब्द योग अभ्यास करके अंतर में चढ़ाई करे यानी सुरत को शब्द में लगावे जिस की धुन की धार सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के देश से आती है और घट २ में मौजूद है। उसी धार पर सवार होकर सिन्ध में और सोत में पहुंचे और जब वहां पहुंच जावे उसी का नाम सच्ची मुक्ती और सच्चा उद्धार है॥

मालूम होवे कि जो शब्द की धार है वही नूर और जान की धार है और वही प्रेम की धार है और सुरत उसी धार के साथ उतर कर पिण्ड के नाके पर बैठी हुई है इसी मुक़ाम से उसको अव्वल समेट कर और फिर चढ़ाई कर के निज घर में

पहुंचना होगा और यही संतों का मत है। ऐसे उद्धार के हासिल करने के वास्ते या तो ऐसे सत-गुरु का मिलना ज़रूर है जो धुर मुक़ाम तक पहुंचे हुए हों या ऐसे साध का जो सतगुरु से मिल कर धुर मुक़ाम के पहुंचने की साधना कर रहे हों। इन दोनों में से जो मिले उस से जुगत दरयाफ़्त कर के और उस के बमूजिब अभ्यास कर के घर पहुंचना मुमकिन है और प्रीति के साथ उन का बाहर से सतसंग करना चाहिये ॥

संतों के घर का भेद किसी और मत में नहीं है और न सिवाय सतगुरु के या जिस को वे बतावें दूसरा उस से वाक़िफ़ है और जितने मत दुनियां में हैं सब का सिद्धांत संतों के देश से बहुत नीचे है यानी ब्रह्म और पारब्रह्म पद के आगे कोई नहीं गया यह दोनों अस्थान और बाक़ी नीचे के मुक़ा-मात मिसल सहसदल कंवल और छठा चक्र वग़ैरः माया के घेर में है और जो कोई अभ्यास कर के इन मुक़ामों तक पहुंच कर ठहर गये या ठहर जावेंगे वह माया की हद्द के पार नहीं जावेंगे और इस वास्ते जन्म मरण से भी नहीं छूटेंगे क्योंकि माया के ग़िलाफ़ बारीक या अस्थूल सुरत पर चढ़े हुए हैं

और वही ग़िलाफ़ सुरत की देह हो रहे हैं इन ग़िलाफ़ों से छुटकारा बग़ैर माया के देश के पार जाने के किसी सूरत में मुमकिन नहीं है यह ग़िलाफ़ हमेशह बदलते रहते हैं। इसी बदलने का नाम जन्म मरण है। जितने मत कि दुनियां में जारी हैं और जिनका सिद्धांत कि माया की हद्द में है यह सब मन के मत कहलाते हैं क्योंकि यह देश मन और माया का है ब्रह्माण्डी मन और ब्रह्माण्डी माया का या पिण्डी मन या पिण्डी माया का। जिस मत में भक्ती सच्चे मालिक की नहीं है वह छिलके के मुवाफ़िक़ है यानी बीज से ख़ाली है उस में सच्चा उद्धार किसी सूरत मे हासिल नहीं होगा इस वास्ते सन्त मत में सतगुरु और शब्द की भक्ती पर ज़्यादह ज़ोर दिया गया है और जो कि धुर मुक़ाम तक पहुंचे हैं उन का ही नाम सतगुरु है और शब्द उनका निज रूप है गोया शब्द ने ही देह धरी है इस वास्ते यही भक्ती सच्ची है। जब ऐसी भक्ती अंतर और बाहर कर के सुरत संत देश में पहुंचेगी तब कार्य इसका पूरा होगा। बाहर मुख भक्ती या और किसी मुक़ाम तक की अन्तरमुख भक्ती जो माया के घेर में है करने से सच्चा उद्धार और सच्ची मुक्ती हासिल नहीं

होगी इस वास्ते इस क़िस्म की भक्ती को संतों ने नहीं पसन्द किया है।

और मालूम हो कि सिवाय शब्द के अभ्यास के अन्तर में ब्रह्माण्ड की हद्द के परे चढ़ाई मुमकिन नहीं है। जिस मत में निशाना संतों के देश का नहीं है और न चढाई है तो जो शब्द का अभ्यास भी करते होवें तो भी उस से सच्ची मुक्ती और सच्चा उद्धार नहीं होगा। जो कोई पातञ्जलि योगशास्त्र के बमूजिब दश प्रकार के शब्द अन्तर में सुनते हैं और उस में मन एकाग्र हो कर रस पाता है पर जो चढ़ाई का भेद और जुगत नहीं है यानी न तो पता मालूम है कि कौन शब्द की आवाज किस मुक़ाम से आती है और न किसी तरह उस मुक़ाम तक रास्ता तै करना चाहते हैं तो भी सच्चा और पूरा उद्धार नहीं हो सक्ता है यानी इस तरह शब्द के अभ्यास से जीव का देश यानी मुक़ाम और हाल नहीं बदलेगा खुलासा यह कि माया के देश से जहां जन्म और मरण जारी है न्यारा न होगा इस वास्ते जो जीव अपना सच्चा उद्धार चाहते है उनको मुनासिब है कि सतगुरु का खोज कर के उन की शरण लेवें और सुरत शब्द योग का भेद और युक्ती दरयाफ़्त कर के अभ्यास शुरू करें और सतसंग कर

के सतगुरु से प्रीत बढ़ावें और निज स्वरूप राधास्वामी दयाल के चरणों में प्रीति और प्रतीत बढ़ाते जावें तब आहिस्ता २ एक दिन सुरत कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों में पहुंच जावेगी और पूरा काम बन जावेगा।

बचन तीसरा

परमार्थ के हासिल होने में सब से ज्यादः विघ्नकरता संसार के भोगों की चाह है और मन में मान और ईर्षा का होना। भोगों की चाह बनिस्बत भोग करने के ज़्यादा बिकार करती है इस से परमार्थी को मुनासिब है कि फ़ज़ूल चाह भोगों की न उठावे नहीं तो वह भजन में रस नहीं पावेगा क्योंकि भजन के वक़्त उसका मन गुनावनें भोगों की उठावेगा और जो मान और अहंकार की जगह दीनता चित्त में लावे तो प्रेम हिरदे में दिन २ बढ़ता जावेगा। मालिक और सतगुरु के चरणों में तो थोड़ी बहुत दीनता कर भी लेवे मगर जीवों के साथ दीनता से बरतना मुशकिल है। जिस के मन में सच्ची चाह परमार्थ की है और सतगुरु और शब्द के रूबरू सच्चा दीन आधीन है तो उस को आम तौर पर सच्ची दीनता आती जावेगी और परमार्थ में शामिल होकर मन

में ईर्षा को तो बिल्कुल रखना ही नहीं चाहिये। अगर परमार्थ की चौंप उसके हिरदे में पैदा होवे तो वह फ़ायदेमन्द होगी यानी जो सच्चे परमार्थी को देख कर यह इरादः करे कि हम भी ऐसी सेवा और प्रेम और परमार्थ की कमाई करें यह मुफ़ीद है मगर एक की तारीफ़ सुन कर जलना और बैर बिरोध करना और उसकी तारीफ़ को काटना सख़्त बिघ्न परमार्थ में डालता है।

परमार्थी को चाहिये कि हमेशा अपने वक़्त की सम्हाल रक्खे और उसको बेफ़ायदा यानी फ़ुज़ूल कामों में ख़र्च न करे अपने उद्यम यानी नौकरी वग़ैरः में उतनाही वक़्त ख़र्च करे जिस क़दर कि उसमें ज़रूर है और अपने घर बार और देह के कामों में मुनासिब वक़्त लगावे और बाक़ी वक़्त भजन सुमिरन ध्यान पोथी का पाठ मनन विचार और परमार्थ की बात चीत में ख़र्च करे इस में तरक़्क़ी उस के परमार्थ की होती जावेगी।

संसारी लोगों से जिनके दिल में संसारी बासना बहुत भरी हुई हैं मेल कम रक्खे क्योंकि वह इधर उधर की बातें और पिछले हाल सुना कर दुनियां और उसके भोगों की याद पैदा करायेंगे और उस

के चित्त को दुखी कर देंगे और ऐसी तरंगें और हालत और बासना परमार्थी के अभ्यास में विघ्न यानी ख़लल डालेंगी। जो कोई सतसंग में आ कर संसारी बातें सुनाते हैं निहायत ही अभागी हैं क्या उनको घर में फ़ुरसत इस काम के लिये काफ़ी नहीं मिलती है और उनसे ज़्यादा अभागी वह लोग हैं जो उन की बातें चित्त दे कर सुनते हैं और अपने वक़्त की क़दर नहीं जानते।

जो कोई किसी की बुराई बे मतलब तुम्हारे सामने करता है तो ख़्याल करना चाहिये कि वह तुम्हारी भी बुराई दूसरे के आगे करेगा यह आदत परमार्थ में बड़ा बिघ्न डालती है और ऐसा शख़्स मुफ़्त में अपने को पापी बनाता है।

अपने मन की हालत को हमेशा और हर एक जगह पर देखना और परखना चाहिये और परमार्थ में ख़ास कर इसकी होशियारी रखनी चाहिये कि मन में अहंकार न आने पावे नहीं तो प्रेम उस हिरदे में कभी नहीं ठहरेगा।

जहां तक मुमकिन होवे हर एक परमार्थ के चाहने-वाले को जिस क़दर हो सके मदद देवे। जो मदद न कर सके तो उसका किसी तरह परमार्थी नुक़सान

करने का इरादा न करे इन बातों का ख़याल हर एक परमार्थी को दिल में रखना चाहिये जब उस के परमार्थ की तरक़्क़ी होगी और मालिक उससे ख़ुश हो कर प्रेम की बख़्शिश करेगा और कबीर साहब ने कहा है।

॥ दोहा ॥

लेने को सत नाम है देने को अन दान।
तरने को है दीनता डूबन को अभिमान ॥ १ ॥

बचन चौथा

संतों के परमार्थ में शामिल होने और उसकी कमाई करने में तीन विघ्न भारी हैं पहिले संशय, दूसरे भरम, तीसरे में पिछली टेक और रसमों में बंधन। (१) संशय–जो कोई सतसंग के बचन चेत करके सुने और जैसा कि संतों ने निर्णय किया है उस को ग़ौर के साथ विचार करे और समझे तो उस को कुल्ल मालिक राधास्वामी का निश्चय आसानी से हो सक्ता है क्योंकि ज़मीनी और आसमानी क़ुदरत और रचना को देख कर इरादह और कारीगरी और मतलब बनानेवाले का साफ़ ज़ाहिर होता है। अपनी देह का हाल जो कोई ग़ौर से नज़र करे तो साफ़ मालूम होता है कि जितने अंग बनाये गये हैं सब

में यह तीनों बातें पाई जाती हैं यानी हर एक अंग वास्ते एक २ काम के बनाया गया है और उस की बनावट में जैसी कुछ कारीगरी अमल में आई है साफ़ नज़र आती है और मतलब यह है कि सब अंग से मिल कर इस देह की हर तरह की कार्रवाई दुरुस्त बन आवे। इसी तरह से हर एक स्वरूप यानी देह ज़मीनी और आसमानी का हाल समझ में आ सक्ता है और हर एक देह में कूव्वत और ताक़त हर एक रूह की जो उस जिस्म में बिठाई गई है साफ़ नज़र आती है कि उसी की मदद से कुल्ल कार्रवाई अंग २ की जो बतौर औज़ार या कल के बनाये गये है जारी है और यह रूह संतों के बचन के मुवाफ़िक़ एक किरन है उस सूरज की जो कुल्ल रचना का भंडार है और उसी की ताक़त से हर एक रूह ताक़त रखती है। फिर ऐसा भंडार जहां से कि सब रूहें आई हैं कुल्ल का मालिक हुआ और उसी कुल्ल मालिक का नाम राधास्वामी दयाल है॥ यह हाल बतौर मुख़्तसिर बयान किया गया है रचना में बहुत दरजे हैं बतौर ग़िलाफ़ या तहों के और यह ग़िलाफ़ या तह बाहर रचना में एक २ भारी मंडल है और हर एक मंडल में सिवाय बहुत

सो रचना के एक २ बड़ी रूह मालिक उस मंडल की है जिसकी ताक़त से कुल्ल कार्रवाई उस मंडल की जारी है और नीचे के मंडलों में जो इसी तरह पर रूह हर एक मंडल की मालिक क़रार दी गई है ऊपर की रूह से मदद पाती है। बाद ख़तम होने इन दरजों के जो सब से ऊंचा और अख़ीर दरजा है वह राधास्वामी देश कहलाता है वहीं से आद में सुरत की धार उतरी और नीचे मंडल बांध कर रचना करती चली आई। इस बयान से कुल्ल मालिक और सर्ब समरत्थ होना राधास्वामी दयाल का साबित है। जब यह बात अच्छी तरह समझ में आजावे तो फिर किसी तरह का शक और शुभा उनके कुल्ल मालिक और सर्ब समरत्थ होने में बाक़ी नहीं रहेगा॥

२–भरम उस को कहते हैं कि जो पद या पदार्थ कि असली नहीं हैं उन को असली समझ कर उस में मन और चित्त का लगाना। जब कि राधास्वामी दयाल के कुल्ल मालिक और सर्ब समरत्थ होने में कोई शक बाक़ी नहीं रहा तब नीचे के मंडलों के जो मालिक हैं उनको कुल्ल मालिक समझना भरम में दाखिल है। नीचे के मंडलों के जो मालिक हैं वे सब हद्दवाले हैं और उन सब के ठहराव की तादाद

वक़्त मुक़र्रर है फिर जो कोई उन को कुल्ल मालिक गरदान कर उन का इष्ट धारन करेगा तो वक़्त परलय उनके और उन के लोक के उस का भी सिमटाव हो जावेगा और जब फिर रचना वहां होगी तब वह शख़्श भी फिर पैदा होगा ॥

इस वास्ते हर एक सच्चे परमार्थी को मुनासिब और जरूर है कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का खोज लगा कर मुख्य तवज्जः अपनी उन के चरणों में लगावे और उसी देश में पहुंचने का इरादः सच्चा और पक्का करके जिस क़द्र बन सके जतन रास्ता काटने का करता रहे तो राधास्वामी दयाल की दया से एक दो या तीन जन्म में मुताबिक़ उस की लगन और प्रेम के उस मुक़ाम में पहुंच कर अजर और अमर हो जावेगा और महा आनंद और सुख को प्राप्त होगा और जिस की तवज्जह दुनियां और दुनियां के पदार्थों में रही वह मुवाफ़िक़ अपने करमों के नीचे के लोक और नीचे दरजों की जूनों में भटकता रहेगा और देह के संग जो दुख सुख लाज़िमी है वे और जन्म मरण का दुख हमेशः सहता रहेगा ॥

इसी तरह दुनियां के जितने पदार्थ हैं उन में

निहायत दरजे का मन का बंधन होना भरम में दाख़िल है क्योंकि वे सब पदार्थ नाशमान है और उन के वसीले से एक ही वक्त़ और थोड़ी सी कार्रवाई जो देह और इन्द्रियों से तअ़ल्लुक़ रखती है हो सक्ती है पर पूरी कार्रवाई और हर वक्त़ मदद उन से नहीं मिल सक्ती है इस वास्ते मुनासिब है कि जरूरत के मुवाफ़िक़ उन से तअ़ल्लुक रक्खा जावे और उन मे इस से ज्याद: बन्धन मन का होना कुल्ल मालिक के चरणों में प्रीत करने में ख़लल डालेगा और नतीजा उस का यह होगा कि ऐसा शख़्स हमेशा दुखी सुखी होता रहेगा और जन्म मरण से रिहाई उस की नहीं होगी। इसी तरह पर हाल कुटुम्ब और परिवार और कुल्ल सामान दुनियां का समझ लेना चाहिये यानी इन सब में अपना मन इस क़दर लगाना चाहिये कि जिस में ज़रूरी कार्रवाई देह की जब तक यह क़ायम रहे जारी रहे और इस क़दर बंधन न होवे कि जो हालत वियोग में किसी शख़्स या सामान के सदमह सख़्त पहुंचे या उस की ज़िन्दगी को ख़राब कर दे और सच्चे मालिक की तरफ़ से तवज्जः हटा दे॥

३-पिछली टेक और रसमों में बन्धन हर एक शख़्स जिस देश और जिस क़ौम और जिस मत में

कि पैदा हुआ है और अक़ल और समझ के हासिल होने के वक़्त तक जैसा कि उस को संग मिला है और जैसा ब्योहार कि उस ने अपने कुटुम्बियों और पड़ोसियों और शहरवालों का देखा है उसी के मुवाफ़िक़ उस की समझ और ख़्याल और चाह और रहनी होवेगी हर एक मुल्क और हर एक फ़िरक़े में किसी न किसी का इष्ट मुवाफ़िक़ मालिक के और कोई न कोई चाल और रस्में जारी हैं। और बसबब आ़दत के हर एक शख़्स को वही पुरानी और बरताव की हुई रस्में और वही इष्ट और वही चाल और वही ख़्याल और उसी क़िस्म का ब्योहार और वैसी ही चाहें पसंद आती है। सिवाय दुरुस्त करने इष्ट सच्चे मालिक के संत मत किसी चाल ढाल में दख़ल नहीं देता है मगर बाज़ी रस्मे और ब्योहार और समझ और चाहें ऐसी है कि जब तक आदमी उन को ग़ौर से विचार कर और संतों के बचन की समझ लेकर हेच और पोच यानी छोटा और ओछा (जैसे कि वे असल में है) समझ कर और उन की कार्रवाई को फ़ज़ूल और अपने अभ्यास में थोड़ा बहुत ख़लल डालने वाला समझ कर उन की क़दर और आ़दत सच्चे दिल से कम या दूर न करेगा तब

तक वे उस के यक़ीन और अभ्यास की कार्रवाई में ज़रूर ख़लल डालेंगे। और इष्ट का तो फ़ौरन बदलना चाहिये यानी और सब का जो कि सिर्फ़ कामदार कुदरत के है और राधास्वामी देश से नीचे के मंडलों में तैनात यानी मुक़र्रर है इष्ट और यक़ीन हटाकर सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल का पूरा २ यक़ीन दिल में लाना चाहिये तब राधास्वामी मत का अभ्यास बन पड़ेगा और जो पुराने व्यौहार और चाल और रस्म वग़ैरः हैं उन को जो बिल्कुल न छोड़ सकें तो जब तक मुनासिब होवे ज़ाहिरी तौर पर अपने कुटम्ब और बिरादरी के साथ उन का बरताव करता रहे मगर ऐसे बरताव के वक़्त अपने दिल में ध्यान सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल का करता रहे ताकि जो नुक़सान कि उन रस्मों के ज़ाहिरी तौर पर बरतने से होना मुमकिन है दूर हो जावे और उस की भक्ती और संत बचन के मुवाफ़िक़ कार्रवाई में ख़लल न पड़े असल में जितनी रस्में और व्यौहार कि जहां तहां देशों में जारी हैं वह छोटे २ फ़िरक़े या गिरोहों के उन की समझ और विचार और तजरबे में मुवाफ़िक़ वास्ते आराम ख़ास लोगों या आम लोगों के बनाये हुये हैं। ज़माने

का हाल और आब व हवा भी थोड़ी और बहुत बदलती रहती है और आदमियों की काररवाई और ताक़त और समझ और ख़्याल भी बदलते रहते हैं इस सबब से जो क़ायदे और रस्म कि एक वक़्त में मुनासिब और ज़रूर समझे गये वह किसी अरसे के बाद क़ाबिल तरमीम हो जाते हैं यानी उनमें मुवाफ़िक़ चाल ज़मानः और तबिअत और समझ लोगों के कमी और बेशी और दुरुस्ती की ज़रूरत साफ़ मालूम होती है मगर मन जो आदत का निहायत दरजे का बंधुवा है वह हर क़िस्म की तरमीम को अपनी ओछी अक़्ल और ख़्याल और समझ से पसन्द नहीं करता इस वजह से चाहे उन रस्म और ब्योहार के सबब से दुख भी होवे मगर उनके छोड़ने में लोगों की जान जाती है और ज़ाहिर है कि हमेशा हर एक मुल्क में समझ बूझ वाले लोग बहुत कम और नादान बहुत ज़्यादः होते हैं इस सबब से नादानों का बंधन पुरानी चाल और रस्मों में ज़्यादः रहता है और वे अपनी ओछी समझ और पकड़ के मुवाफ़िक़ किसी रस्म को चाहे वह कैसी ही दुखदाई हो बदलना पसन्द नहीं करते और ऐसा ख़ौफ़ करते हैं कि बुज़ुर्गों की और पुराने वक़्त की चलाई हुई

रस्मों के छोड़ने में शायद उनका या उन के कुटुम्ब परवार का धन की आमदनी का किसी तरह का नुकसान न हो जावे और यह खौफ़ उन को ख़ास कर ग़रजमन्दों ने दिलाया है, यानी जो २ रस्में कि पुरानी चली आती हैं उन में किसी न किसी क़िस्म के लोगों का कुछ फ़ायदा और आमदनी है वे नहीं चाहते कि जिन लोगों को वह इस तौर पर धोखे देकर अपना रोजगार बनाते है अस्ल हाल मालूम पड़े या उन की अक़्ल की आंख खुले और वह अपने नफ़े और नुक़सान को आप बिचार कर चाल चलन मुनासिब तौर पर इख़्तियार करें यह खास और बड़ी वजह पुरानी चालों के जारी रहने की है। सतसंगी को चाहिये कि जब संतों के बचन सुनकर किसी क़दर उस की अन्तर की आंख खुले और दुनियांदारों का जैसा कुछ कि हाल है असली नजर आवे तो अपना नफ़ा और नुक़सान हाल और आइन्दा का विचार कर वह चाल इख़्तियार करे कि जिस से उस का सच्चा फ़ायदा यहां का और आइन्दा का हासिल होवे। अगर जाहर में उस की ताक़त किसी चाल ढाल के बदलने में पेश न जावे तो अन्तर में जरूर ही कार्रवाई संतों के बचन के मुवाफ़िक़ करे

नहीं तो उसके परमार्थ में ख़लल पड़ेगा मगर जिन रस्मों के जारी रखने में मिस्ल खान पान गोश्त और शराब और दूसरे नशे की चीज़ों के कि जिस में इसका भारी नुक़सान मालुम पड़े तो उन को फ़ौरन ही छोड़ दे और ऐसी रस्म के छोड़ने में किसी तरह का हरज उसकी ज़िन्दगी का मुमकिन नहीं है और न कुटुम्ब और बिरादरी के छोड़ने की जरूरत होगी और जो वह ग़ौर से अपनी बिरादरी के हाल और चाल को नजर करेगा तो मालूम हो जावेगा कि वे किस क़दर भले और बुरे काम कर रहे हैं और अपने मत और बुजुर्गों की चाल के ख़िलाफ़ दुनियां के फ़ायदे और मजों के लिये कैसे २ नादुरुस्त और बेजा कार्रवाई कर रहे हैं फिर जो इस ने अपने परमार्थ की तरक़्क़ी और फ़ायदे के लिये जो कोई ओछी या ख़राब रस्म पुरानी छोड़ दी तो उस में क्या हर्ज बिरादरी और कुटुम्ब वालों का होगा ॥

इस बयान से यह मतलब नहीं है कि कोई शख़्स अपने कुटुम्ब या बिरादरी से किसी काम में फ़ुज़ूल तकरार और झगड़ा कर के उनको छोड़ दे बल्कि संतों के सतसंगी को मुनासिब है कि जहां तक मुमकिन होवे उन लोगों के साथ अपना मेल जारी रक्खे

इस में उनका फ़ायदा बहुत है और इस का किसी तरह का हर्ज या नुक़सान नहीं है क्योंकि जो मेल रहा आया तो उम्मेद है कि उन लोगों की भी आहिस्ता २ इसके बचन सुन कर किसी क़दर समझ बढ़ती जावेगी और एक दिन वे भी संतों के बचन की बड़ाई और क़दर जान कर उसके बमूजिब कार्रवाई करने लगेंगे।

बचन पांचवां

अभ्यास में विघ्न और उनके दूर करने का जतन

कोई लोग भजन में रस न मिलने की शिकायत करते हैं या यह कि अन्तर में उनको कुछ नहीं खुला। इस का सबब यह है कि या तो उन का मन वक़्त अभ्यास के संसारी चाहों या कामों की गुनावन या ख़्याल में लगा रहता है या संसारी काम या उन की गुनावन कर के अभ्यास में बैठते हैं या उन को जो कुछ अन्तर में सुनाई या दिखाई देता है उस की उनको पहिचान और क़दर नहीं है।

ज़ाहिर है कि जब कोई अभ्यास के वक़्त दुनियां के कामों का ख़्याल या तरंग उठावेगा उस वक़्त उस के मन और सुरत की धार उसकी इन्द्री की तरफ़ जारी होगी। जो कि मन से एक वक़्त में एक

ही काम हो सक्ता है और रस ऊपर यानी ऊंचे की धार में है तो भजन का रस मन को जब तक कि उस की धार ऊपर के चैतन्य से चढ़ कर न मिले क्योंकर आ सक्ता है।

जो कोई संसारी काम या उसका ख़्याल कर के अभ्यास में बैठता है तो मन और सुरत उसके कामना की धार से भींगे हुए हैं और उस वक़्त उनका झुकाव और ख्याल नीचे की तरफ़ हो रहा है तो जब तक गहरा शौक़ और प्रेम अंग लेकर भजन में मुतवज्जह न होगा तब तक सुरत और मन निर्मल होकर न लगेंगे और रस नहीं आवेगा। इस सूरत में मुनासिब है कि कोई चितावनी या बिरह या प्रेम के शब्द का बड़ी पोथी सार बचन नज़्म से होशियारी से पाठ करे और अपने ख्याल को बदले तो अलबत्ता कुछ रस या आनन्द अभ्यास में मिल सक्ता है।

कोई शख़्सों का यह हाल है कि जैसा कि उन को भेद अस्थानों का मिला है जब अभ्यास में बैठते हैं तो चाहते हैं कि पहिला मुक़ाम तो फ़ौरन ही खुल जावे और जो कुछ उसकी झलक दिखलाई देवे तो चाहते हैं कि बराबर उनके सामने खड़ी या क़ायम

रहे और जो आवाज़ उनको पहले मुक़ाम की सुनाई देती है तो उस की जैसा कि चाहिये क़दर नहीं करते इस सबब से अभ्यास रूखा और फीका मालूम होता है तीसरे तिल या सहसदल कमल का नजर आना और उसका ठहरना आसान बात नहीं है क्योंकि यह मुक़ाम विराट स्वरूप और ब्रह्म के हैं ऐसी जल्दी इन मुक़ामों का देखना और ठहरना मुशकिल है लेकिन कभी २ उनके स्वरूप या झलक का दिखाई देना और आवाज़ घंटे की सुनाई देना यह भी बड़ा भाग है। आहिस्ता २ आवाज भी साफ़ और नजदीक मालूम होती जावेगी और कभी स्थान का स्वरूप भी दिखाई देगा।

प्रेम और प्रतीत के साथ अभ्यास करते रहना मुनासिब है और समझना चाहिये कि संत मत के अभ्यास का मतलब यह है कि सुरत और मन जो पिंड में बंधे हुए हैं ब्रह्माण्ड की तरफ़ और फिर उस के पार चढ़ कर पहुंचें। जो कोई ध्यान में अपने मन और सुरत को पहले या दूसरे मुक़ाम पर जमावे और थोड़ी देर तक ठहरावे तो चाहे उसे कुछ नज़र आवे या नहीं सिमटाव और चढ़ाई का रस तो उसे ज़रूरही मिलेगा इसी तरह जो ध्यान और भजन

के वक़्त अपने मन और सुरत को जोड़ेगा और जहां से कि आवाज़ आ रही है वहां तक आहिस्ता २ पहुंचावेगा तो ज़रूर उसको आनन्द भजन का आवेगा इस वास्ते मुनासिब है कि ध्यान और भजन के वक़्त दुनियां के ख़्याल छोड़ कर के अपने मन और सुरत को पहले स्थान पर जमावे और जो वह उतर आवे तो फिर वहां पहुंचा कर ठहरावे इसी तरह बारम्बार करता रहे तो थोड़ा बहुत शब्द भी सुनाई देगा और रूप भी दिखाई देगा और सिमटाव और चढ़ाई का जो आनन्द है वह भी ज़रूर मिलेगा मगर इन सब कामों के करने के वास्ते शौक़ और तड़प यानी बिरह और प्रेम थोड़ा बहुत ज़रूर दरकार है। जो अभ्यास के वक़्त मन क़ाबू में न आवे तो मुनासिब है कि बड़ी पोथी में से कोई बिरह या प्रेम या चितावनी का शब्द जिस का दिल पर असर ज़्यादा होता होवे ग़ौर से पढ़ कर भजन में बैठे तो मन की किसी क़दर हालत बदलेगी और भजन थोड़ा बहुत दुरुस्ती के साथ बनेगा।

और कभी २ अपने मन को इस क़दर समझौती देना चाहिये कि जब तू दुनियां के काम करता है तो परमार्थ का ख़्याल नहीं करता और जब परमार्थ

के काम करता है तो दुनियां के कामों का क्यों ख़्याल करता है । और जब तब सच्चे मालिक के चरणों में प्रार्थना करता रहे कि मन निरमल और निश्चल होकर भजन में लगे । ज़रा ग़ौर करने से मालूम होगा कि भजन और ध्यान के वक़्त दुनियां के ख़्याल उठाने में निहायत बेअदबी सच्चे मालिक के साथ होती है जैसे कि कोई अपने बाप या हाकिम के सामने जाकर बातें दूसरों से करे और उनका बचन न सुने और उनकी तरफ़ भी न देखे तो वह कैसे राज़ी होंगे इसी तरह मालिक भी राज़ी नहीं होता है और इसी सबब से अभ्यास में रस नहीं आता है इस वास्ते मुनासिब है कि जो ज़्यादा न बने तो थोड़ा ही अभ्यास करे पर जहां तक मुमकिन होवे दुरुस्ती और तवज्जह के साथ करे ।

जब कभी भजन या ध्यान के वक़्त देह सुस्त या शिथिल होती हुई मालूम होवे या नींद आती मालूम पड़े तो उस वक़्त अभ्यास को छोड़ कर थोड़ी देर के वास्ते हाथ और पैर फैला देवे और जो ज़्यादा सुस्ती होवे तो उठ कर दो चार क़दम टहले और फिर बैठ कर अभ्यास करे ।

जब भजन के वक़्त ग़फ़लत या बेहोशी होती

मालूम पड़े तो उस वक़्त नाम का सुमिरन और स्वरूप का ध्यान दो चार मिनट के वास्ते करे और जो ग़फ़लत दूर न होवे तो जब तक ख़ूब होशियार न हो जावे तब तक यही अभ्यास करे।

जब कोई ख़राब तरंगें या दुनियां के ख़्याल उठें तो नाम का सुमिरन और स्वरूप का ध्यान करके उनको हटाना चाहिये और जो ऐसे ख़्याल दूर न होवें तो भजन को मुल्तवी कर के थोड़ी देर के वास्ते सुमिरन और ध्यान का अभ्यास करे और जब वे ख़्याल दूर हो जावें तब फिर भजन में बैठ जावे लेकिन जब मन ज़्यादा ज़ोर करे और सुमिरन और ध्यान में भी न लगने देवे तो उस वक़्त भजन और ध्यान छोड़ देवे और एक शब्द का पाठ समझ २ कर करे यानी हर एक कड़ी को पांच २ चार २ दफ़े पढ़े और उसका मतलब समझ कर अपने ऊपर घटावे और फिर अभ्यास में लगे और जो फिर भी मन रुजू न होवे और बेफ़ायदा तरंगें उठावे तो उठ खड़ा होवे और फिर दूसरे वक़्त पर अभ्यास करे।

मालूम होवे कि राधास्वामी दयाल की दया की धार हर वक़्त जारी है और जब तक अभ्यासी की सुरत और मन की धार उस धार के साथ न जुड़ेगी

या उसको न छुएगी तब तक उस धार का असर प्रगट मालूम नहीं होगा और यह बात जब हासिल होगी जब कि मन और सुरत बिरह अंग या प्रेम अंग लेकर अभ्यास में लगेंगे या संसार की तरफ़ से किसी सबब से दुखी होकर और राधास्वामी दयाल की तरफ़ सच्चे मन से दया की चाहना कर के या किसी वक्त किसी तरह का सच्चा खौफ़ दिल में होगा और उस वक्त राधास्वामी की मदद सच्चे दिल से मांगने के वास्ते भजन में बैठेंगे ऐसे वक्त और हालत में कुछ न कुछ दया की परख ज़रूर होगी और थोड़ा बहुत रस और शान्ती ज़रूर आवेगी।

मालूम होवे कि जिस रोज खाने पीने में कुछ ज़्यादती या बेतरतीबी हो जावेगी तो भी भजन का रस नहीं आवेगा और जो कोई बुरा काम किसी से बन पड़ेगा जिस से किसी के काम में नुक़सान पहुंचता हो या पहुंचने वाला हो तो इस सबब से भी भजन में रस न आवेगा ज़्यादह खाने से भजन के वक्त धार ऊंची नहीं चढ़ती और पाप काम करने में सुरत और मन का झुकाव नीचे की तरफ़ रहता है इन दोनों बातों का अभ्यासी सतसंगी को ख़्याल रख कर अपनी सम्हाल जैसे मुनासिब होवे करते रहना चाहिये

जिस किसी का मन दुनियां के ख़ास कामों में या किसी खास शख़्स के साथ ज़्यादह बंधा है या किसी के साथ उसकी सख़्त दुश्मनी या ईर्षा है तो भी मालिक के चरणों का प्रेम उस के मन में बहुत हलका रहेगा और इस सबब से अभ्यास में कम लगेगा और रस कम आवेगा।

खुलासा यह है कि सच्चे सतसङ्गी को चाहिये कि जिस क़दर बने हर रोज़ दुनियां की प्रीत मन से कम करता जावे और मालिक के चरणों में शौक़ और प्रेम बढ़ाता जावे तो जिस क़दर मन दुनियां की मुहब्बत से खाली होता जावेगा उसी क़दर मालिक के चरणों में प्रीत बढ़ती जावेगी और उसी क़दर भजन और ध्यान का रस बढ़ता जावेगा और दया अन्तर में ज़्यादह मालूम होती जावेगी।

जो कोई अपने मन को भोगों की तरंग उठाने और फिर उन में बर्त्तने से बिल्कुल नहीं रोकता है और चाहता है कि दया ऐसी होवे कि मन उसका बिल्कुल निरमल हो जावे तो इस तौर से दया नहीं आती है उसको चाहिये कि जहां तक उसका बस चले मन को रोके और जब कभी रोके से न रुक सके तो शरमावे और पछतावे और मन को डर

दिखावे कि आइंदह बहुत दुख भोगने पड़ेंगे और जब तब प्रार्थना भी करता रहे तब शायद कुछ हालत मन की आहिस्ता २ बदले और ऐसे शख़्स को चाहिये कि सिवाय शरमाने पछताने और प्रार्थना करने के जिस रोज़ यह चूके और भूले तो उस रोज जहां तक बने ड्योढ़ा या दूना भजन सुमिरन और ध्यान करे इस से जो मलीनता कि भोगों में अंदाज़ से ज़्यादः बरतने के सबब से पैदा हुई है वह उसी दिन किसी क़दर साफ़ और हलकी हो जावेगी।

और मालूम होवे कि पांचों दूत, (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार और दसों इन्द्रियां) जिन का झुकाव संसार की तरफ़ हो रहा है यह सब परमार्थ के विरोधी हैं उन में काम क्रोध और ज़बान और आंख और कान इन्द्री जब मुनासिब और वाजिबी तौर से ज़्यादः संसार में बर्ताव करते हैं तब अभ्यास में ज़्यादः विघ्न डालते हैं उनकी सम्हाल हर वक़्त मुनासिब तौर पर रखनी चाहिये।

१-काम के ज़्यादः और ग़ैर वाजिब तौर के बरताव में सुरत और मन का नीचे को झुकाव और उतार होता है और इस सबब से अभ्यास में रस नहीं आवेगा।

२-क्रोध के वक़्त सुरत की धार देह में और बाहर देह के फैल कर बिखर जाती है और इस वजह से अभ्यास में रस नहीं मिलेगा।

३-आंख और कान इन्द्री बहुत सी फ़ुज़ूल सूरतों और चीज़ों को देख कर और सुन कर अन्तर में अभ्यास के वक़्त उनके ख़्याल पैदा करके हरज करती हैं और भजन का रस नहीं आने देती हैं।

४-जबान इन्द्री बहुत चिकना चुपड़ा और मज़ेदार खाना मिक़दार से ज्यादा खाकर और बेहूदह और फ़ज़ूल गुफ़्गू करके अभ्यास में सुस्ती और ग़फ़लत और नापाक ख़्याल यानी मलीन तरंगें पैदा करती है इस वास्ते मुनासिब है कि जिस क़दर बन सके उस क़दर इन के बर्ताव में सम्हाल और होशियारी रखनी चाहिये नहीं तो अभ्यास में हमेशा ख़लल पैदा करते रहेंगे।

बचन छठवां

उपदेश सतगुरु और सन्त भक्ती का

जिस किसी को कि सतगुरु मिलें तो मुनासिब है कि उनके चरनों में प्रीत करे और सुरत शब्द का उपदेश ले कर अभ्यास अन्तर में करे और स्वरूप का ध्यान और नाम का सुमिरन भी जिस नाम को

कि वे बतावें करे और पहिले ध्यान प्रथम मुक़ाम पर करना चाहिये और जब ध्यान करते २ वहां मन लग जाय और रस आने लगे और सुरत और मन दोनों लगते और ठहरते मालूम पड़ें तब फिर दूसरे मुक़ाम पर ध्यान करे फिर तीसरे मुक़ाम पर और इसी तरह सत्तलोक तक। और जो सचाई और प्रेम अंग लेकर अभ्यास करेगा उसको अपने मन और सुरत का मिल कर अन्तर में थोड़ा बहुत रेंगना यानी चलना मालूम हो सक्ता है इसी तरह ध्यान करता हुआ धुर मुक़ाम तक यानी संतों के देश तक पहुंच सक्ता है और जिस किसी ने सच्चे मन से आशा राधास्वामी धाम में पहुंचने की बांध कर अभ्यास सुरत शब्द का और ध्यान स्वरूप का शुरू किया है जिस क़दर कमाई कि उस से इस जन्म में बनेगी वह उस को ध्यान के अभ्यास से कि कहां तक उस की रसाई हुई है आप मालूम हो सक्ती है और अख़ीर वक्त़ पर उसको सतगुरु दयाल अपनी गोद में बैठा कर दर्शन कुल्ल मालिक राधास्वामी का करावेंगे फिर अगर अभ्यास पूरा है और उस धाम में ठहरने के लायक़ है तो वहीं रहेगा नहीं तो उलट कर दसवें द्वार में या एक दो मुक़ाम उस के नीचे

ठहराया जावेगा और वहां दर्शन और बचन मिलते रहेंगे और चरनों में प्रीत और प्रतीत बढ़ती रहेगी फिर जब संत सतगुरु संसार में वास्ते उद्धार जीवों के आवेंगे और सतसंग खड़ा करेंगे तो ऐसे जीवों को जो ऊंचे अस्थान पर ठहराये गये हैं अपने संग लावेंगे और जहां तहां जन्म देंगे और फिर वे सब जीव मौज से सतसंग में शामिल हो जावेंगे और उनको पहली कमाई एक दो या तीन रोज़ में ही संत सतगुरु का दर्शन कर के और बचन सुन कर याद आजावेगी और बाक़ी कमाई जो संत देश में पहुंच कर ठहरने के वास्ते ज़रूर होगी वे जीव उस जन्म में या एक और जन्म में कर लेंगे और सतगुरु का संग उनको बराबर मिलेगा जब तक कि धुर मुक़ाम यानी राधास्वामी दयाल के चरनों मे नहीं पहुंचेंगे।

बचन सातवां

चितावनी

संसार बिल्कुल नाशमान है और जीव को बार २ जन्म लेना और मरना होता है। कोई चीज़ यहां की इसके साथ नहीं जा सक्ती और हर शख़्स के हिस्से में सिवाय मामूली खाने और कपड़े वग़ैरह

के कुछ ज़्यादह नहीं आ सक्ता है। इतनी बात मर्द और औरत सब रोजमर्रह संसार के बरताव में देखते है फिर भी इस क़दर चेत और होशियारी किसी को नहीं है कि दरियाफ़ करें कि वे कहां से आये हैं और कहां जावेंगे और फिर वहां जाकर दुख या सुख पावे तो वह कैसे मिलेगा।

और उसका क्या जतन करना चाहिये। इस क़दर वे परवाही हैं कि जो कोई दूसरा शख़्स चितावे तो भी नहीं सुन्ना चाहते। और यह भी मालूम पड़ता है कि जो आशा संसार के पदार्थों और इन्द्री के भोगों में लिपटे रहे और इन्हीं के वास्ते मिहनत करते रहे और अपने कुटुम्बी और रिश्तेदारों की ख़ातिरदारी में उमरभर खोई तो ऐसी आदत और आशा और मंसा के मुवाफ़िक़ इसी चक्कर में और ऐसेही लोक में रहना होगा। और यह चक्कर जन्म मरण और दुख सुख का है क्योंकि जिस काम की जिसको ज़बर आदत होगी और जिस की चाह ज़बर होगी वहीं बासा ज़रूर होगा। यह बड़ी भारी ग़फ़लत का परदा आम की तबीअत पर पड़ा हुआ है।

और जो सतसंग करते हैं उनके ऊपर भी थोड़ी बहुत ग़फ़लत छाई रहती है। जानते है कि जिस

क़दर इस देह में अपनी रूह की सफ़ाई और चढ़ाई कर लें उतनाही फ़ायदह है और उतनी ही मदद मिलेगी और उतनाही बचाव होगा और फिर ग़ाफ़िल हैं कि यही काम दुरुस्ती से नहीं करते। और यह बात ज़रूरी है कि संसार के पदार्थों और इन्द्रियों के भोग में वाजिबी और ज़रूरी तौर पर बरतें और जहां तक हो सके अपने आप को भोग बिलास और ज़्यादह तर मेल और मिलाप संसारी लोगों के साथ से बचावें पर बारम्बार भूलते हैं और उनके मन का असली झुकाव उसी तरफ़ को ज़्यादह रहता है। इसका सबब यह है कि मन का ख़मीर बिल्कुल माया के मसाले का है।

और ज़ाहिर है कि यह मन निहायत दरजे का नादान और हठीला और निडर और बेपरवाह और बे फ़िकर है उसकी आदत है कि जब कोई तरंग ज़बर उठावे उस वक्त़ किसी का डर नहीं मानता बल्कि मौत का डर भी उस वक्त़ दिखलाओ तो उस को भी नहीं मानता। किसी किसी काम में दुख भी पाचुका है पर ज़बर तरंग के वक्त़ में उस को भी याद दिलाई जावे तो भी कुछ असर नहीं होता है और भूल और ग़फ़लत यहां तक है कि परमार्थ के बचन बिल्कुल

याद नहीं रखता पर दुनियां के साथ बरताव में चाहे हमेशह धोखा खाता रहे यानी जिन को अपने साथ प्रीतवान समझे और अकसर उन्हीं से दुख पावे पर उनके साथ ऐसा बंधा है कि उस बंधन को छोड़ नहीं सक्ता है।

और यह भी मालूम होता है कि इस के अन्तर में कोई समझाने वाली ताक़त ऐसी मौजूद है यानी जब किसी काम को उलटा सीधा करना चाहता है तो अंतर में कोई मना करता है और होशियार करता है कि ख़बरदार ऐसा काम मत करना वरनः यह नुक़सान होगा। पर यह एक नहीं सुनता और जो चाह उपजती है उसको कर गुजरता है।

संत महात्मा अनेक रीति से समझाते हैं और तरह २ के डर नरकों और चौरासी के दिखलाते हैं और अमर सुख और आनन्द का जो संतो के निज देश में प्राप्त होगा भेद और जुगत उसके प्राप्ती की बताते हैं और किसी क़दर यह मन भी अपने बरताव की परख कर के मालूम कर लेता है कि फ़लां बात में उस का नुक़सान है या फ़ायदह फिर भी झोका नुक़सान ही की तरफ़ खाता है और फ़ायदे के काम की सुध नहीं लाता है। ऐसा जो मन है उसकी तरफ़

से परमार्थी को ख़ूब होशियार रहना चाहिये और चाहिये कि सच्चे मालिक राधास्वामी और सतगुरु की दया का बल लेकर सतसंग ख़ूब होशियारी के साथ करे और सुरत शब्द के अभ्यास को बराबर शौक़ के साथ जारी रक्खे तो आहिस्ता २ कोई अरसे में मुमकिन है कि मन दुरुस्त हो जावेगा। सिवाय इसके और कोई जतन मन की दुरुस्ती का नहीं है।

जवानी में मन की तरंगों और इन्द्रियों के जोर का रोकना अलबत्तह किसी क़दर कठिन है पर अधेड़ अवस्था में और जब कि बुढ़ापे की अवस्था शुरू होती है मन और इन्द्रियों का भोग बिलास की तरफ़ से रोकना बहुत कठिन नहीं है पर जो सच्चा शौक़ीन और अनुरागी है तो राधास्वामी दयाल की दया से उसका यह काम जवानी में भी किसी क़दर आसानी के साथ बन सकता है जो उसको सतगुरु का संग भाग से मिल जावे।

सच्च तो यह है कि हर एक जीव पर फ़र्ज़ है कि मन की सम्हाल जिस क़दर हो सके जरूर करे। वाजिबी और मुनासिब तौर पर तो उसका बरताव दुरुस्त है पर किसी बात में ज्यादती नहीं होनी चाहिये नहीं तो परमार्थ की काररवाई और तरक़्क़ी

में ख़लल पड़ेगा और जो काम कि थोड़े दिन में बन सक्ता है उसको बहुत अरसा लगेगा।

जब तक कि मन और इन्द्रियां किसी क़दर क़ाबू में न आवेंगी तब तक सुरत शब्द अभ्यास का रस जैसा कि चाहिये प्राप्त नहीं हो सक्ता। इस वास्ते जो नहीं चेतेगा और नहीं होशियार होगा वह बड़ी दिक़्क़तें उठावेगा। यानी जो कोई चेत कर इस तरह की होशियारी नहीं करेगा तो वह मन और इन्द्रियों और काल और माया के हाथ से झटके खाता रहेगा। बड़ी पोथी सार बचन नज़्म में लिखा है—
जगत जाल सब धोखा जानो। मन मूरख संग कीन्ही यारी॥ इस का संग तजो तुम छिन २। नहिं यह लेगा जान तुम्हारी॥

इस वास्ते मुनासिब है कि इस बचन की प्रतीत करके और जो वक़्त कि हाथ में है उसको ग़नीमत समझ कर जिस क़दर काररवाई अपनी रूह यानी सुरत की चढ़ाई और मन से पीछा छुड़ाने की हो-सके ज़रूर होशियारी के साथ करे।

यह जीव इस संसार में जन्मान जन्म से बराबर धोखा खाता चला आता है। पर जिस जन्म में कि सतगुरु से मेल हुआ और भेद निज घर का

मिला और असली हालत संसार की मालूम पडी फिर धोखे के कामों में लिपट कर बर्तना और अपनी सुरत और मन की सम्हाल न रखना यह बड़ी भारी ग़फ़लत और बे परवाही की बात है।

यह सही है कि मन का जोर बड़ा भारी है और उसका रोकना किसी क़दर कठिन है और यह जीव बहुत निबल और कमजोर है पर राधास्वामी दयाल की दया और सतसंग की मदद से जो काम कि यह करना चाहे तो आहिस्तः २ उसका बनजाना और दुरुस्त होना कुछ मुशकिल नहीं है।

बचन आठवां

भेद मत का

जितने मत कि दुनियां में जारी हैं सब का मतलब यह है कि मुक्ती या नजात हासिल हो। मुक्ती बंधन और जन्म मरन से छूटने और परमानन्द के प्राप्त होने को कहते हैं। इस के वास्ते दरियाफ़्त करना जरूर है कि कौन जुगत, और तरकीब करके जीव को यह बात प्राप्त हो सक्ती है। दुनियां में जो २ सुख कि उमर भर उनकी चाह कर के हासिल होते हैं सब नाशमान हैं। सन्त कहते हैं कि ऐसा

देश भी है कि जहां अमर सुख और अमर आनन्द है। यहां इस लोक में दुख सुख मिला हुआ है। अगर्चे चैतन्य आनन्द स्वरूप है पर उस पर माया के ग़िलाफ़ चढ़े हुए है। उन में बंधन कर के दुख सुख होता है। जैसे जाग्रत में देह का बंधन कर के दुख सुख मालूम होता है पर सुपन में जो कि सुरत की धार देह के मुक़ाम से किसी क़दर हट जाता है तो इस देह का दुख सुख मालूम नहीं होता। संत कहते हैं कि ऐसी तरकीब करनी चाहिये कि ग़िलाफ़ों के बंधन से रिहाई हो जावे। सब मतों में किसी न किसी सूरत की नक़ल की पूजा बताते हैं या किसी निशान की पूजा या पोथी वग़ैरः की जैसे कि नानक पंथी ग्रन्थ को गुरू मानते हैं। इस में सुरत यानी जीव की तवज्जह बाहरमुख रहती है और निज घर का पता और भेद नहीं मिलता इस सबब से वहां सच्ची नजात हासिल होने का रास्ता ज़ाहिरा कोई मालूम नहीं होता है। और वास्ते हासिल होने सच्चे उद्धार या मुक्ती के ज़रूर है कि ऐसी तरकीब मालूम होनी चाहिये कि जिस से सुरत यानी रूह का भंडार की तरफ़ लौटना होवे।

सुरत का देह में दिमाग़ की तरफ़ से आना और

मरते वक्त उसी तरफ़ ऊपर को खिंच जाना इन आंखों से साफ़ दिखलाई देता है और सब कहते हैं कि मालिक सब जगह है और जीव उसकी अंश है। वह मालिक आनन्द स्वरूप है और जीव जो उसकी अंश है यह भी आनन्द स्वरूप है यानी जाव एक किरन उसी आनन्द स्वरूप सूरज यानी भंडार की है पर इसका उस भंडार से जुदा होकर इस दुनियां में जड़ पदार्थों के साथ मुहब्बत कर के बंधन हो गया है। और जितना कि स्वाद रस और मज़ा है सब सुरत की धार का है। इसकी धार जिस इन्द्री के मुक़ाम पर आती है तब उस इन्द्री के भोग का रस और मज़ा मालूम होता है। इससे ज़ाहिर है कि सब रस और मज़े और स्वाद और आनन्द इसी चैतन्य में हैं और जिस २ में जिस क़दर कि रूह चैतन्य की धार है उसी क़दर रस और आनन्द है।

संत कहते हैं कि जहां से यह सब धारें रूह की आई है वह भंडार महा सुख और आनन्द का है। इस लिये जो कोई सच्ची नजात और पूरा सुख और अमर आनन्द चाहे तो वह उस मुक़ाम में पहुंचे कि जहां से सुरत की धार आई है। वह देश भी अमर है और वहां का सुख भी अमर और अपार है और

यह सुरत भी वहां पहुंच कर बिदेह यानी ग़िलाफ़ों से अलहिदा हो जावेगी।

दुख सुख सिर्फ़ माया की मिलौनी यानी देह या ग़िलाफ़ के साथ बन्धन और भोगों की चाह के सबब से होता है इस वास्ते भोगों की चाह कम करके और ग़िलाफ़ों से रूह को हटाकर जिस क़दर फ़ुरसत मिले उस क़दर वक़्त अपना सुरत और मन की सफ़ाई और चढ़ाई में खर्च करे। संत इस की तरकीब बताते है उसके मुवाफ़िक़ काररवाई करना चाहिये। जैसे कि जाग्रत में सुरत की बैठक आंख में है चाहिये कि इसी मुक़ाम से उस ऊँचे देश की तरफ़ जिस को राधास्वामी धाम कहते हैं और जहां से शुरू में सुरत का उतार हुआ है आहिस्तह २ चलावे।

सच्चे मालिक का नाम राधास्वामी है और उन्हीं के चरनों में पहुंचना है।

और मालूम हो कि तरकीब संतों के अभ्यास की ऐसी आसान है कि जिसको लड़का जवान और वूढ़ा इस्त्री और पुरुष पढ़ा और अनपढ़ा ग्रहस्थ और बिरक्त सब कर सकते है। एक नशे की चीज़ और गोश्त का खाना मना है। गोश्त खाने से दिल

सख़्त और मोटा होता है और उसकी तवज्जह बाहर को तरफ़ होती है और जिस जानवर का कि गोश्त खाया जावेगा उसका भी असर तबीअत मे आवेगा और नशे की चीज़ के इस्तेमाल से दिमाग़ की रगों में ख़लल पैदा होता है। और एक यह भी शर्त है कि अभ्यासी किसी शख़्स को अपने ज़ाती फ़ायदे या मतलब के लिये दुख न दे मन कर के वचन कर के या काया करके और जहां तक बन सके सब को सुख पहुंचावे। नहीं तो दुख देने से तो बचे।

और खाने पीने में इस क़दर होशियारी रक्खे कि बहुत पेट भर के न खावे किसी क़दर हलका रहे जिस से सुस्ती और नींद न आवे सिर्फ़ यह शर्तें दरकार हैं और बाक़ी अभ्यास की तरकीब ऐसी है कि बहुत आराम के साथ उस की काररवाई हो सकती है और सब जगह और सब वक़्त बन सकता है किसी तरह की रोक टोक नहीं है और इस अभ्यास में स्वांस का रोकना नहीं होता है। और मतों में स्वांस का रोकना बताया है इस सबब से वह अभ्यास किसी से नहीं बना। और उसमें संजम और ख़तरे सख़्त हैं इस सबब से गृहस्थी से

तो वह अभ्यास हरगिज नहीं बन सकता और बिरक्त के वास्ते भी मुशकिल और खतरनाक है।

अब चाहिये कि सुरत को आशा अपने निज घर की बंधवा कर आहिस्तह २ चलावे। जो ऐसी आशा दृढ़ रही तो आहिस्तः २ काम चल निकलेगा पर इसकी मियाद मुक़र्रर नहीं हो सकती कि किस क़दर अरसे में काम पूरा होगा। यह अनुरागी के शौक़ पर मुनहसिर है जिस क़दर शौक़ तेज होगा उसी क़दर रास्ता जल्दी तै होगा।

चलने का रास्ता यह है कि जिस धार पर या सड़क से कि सुरत आई है उसी रास्ते जाना होगा।

रचना में कुल्ल कारखाना धारों का है ख़्वाह वह नज़र आवें या नहीं जैसे जब हम देखते हैं तब रोशनी की धार आती है जब सुनते हैं तब शब्द की धार जब सूंघते हैं तब खुशबू या बदबू की धार आती है और सूरज की रोशनी यहां किरनों के वसीले से आती है ऐसे ही सुरत किरन जिस धार पर कि उतर कर आई है उसी धार पर उसको सवार करा कर ऊंचे की तरफ़ को चलाना चाहिये।

आदि ज़हूर कुल्ल मालिक का शब्द है और वही जान की धार है। और जहां धार होगी वहां शब्द

भी ज़रूर होगा और शब्द की बराबर कोई रास्ता दिखाने वाला और अंधेरे में प्रकाश करने वाला नहीं है इस वास्ते चाहिये कि शब्द को पकड़ कर चढ़े और उसका भेद भेदी से मिल सकता है। रूह यानी सुरत की धार पिंड में पहले दोनों आंखों के मध्य में जो तिल है आकर ठहरी और वहां से सब देह में फैली चाहिये कि इसी मुक़ाम से इस धार को पकड़े। पहिले अभ्यास उस के समेटने का करे जैसे नाम का सुमिरन और स्वरूप का ध्यान और फिर शब्द का अभ्यास करे उस से चढ़ाई होगी।

शब्द अन्तर में जो हो रहा है वह हर एक अस्थान के मालिक के दरबार से आता है और हर एक अस्थान का शब्द जुदा २ है इस का भेद लेकर चलना चाहिये।

जैसे बाहर रचना धारों की है ऐसे ही इस देह में भी कुल्ल कारख़ाना धारों का है जिस को नर्वस-सिस्टम (Nervous system) यानी रगों का मंडल कहते हैं। इन्हीं रगों में होकर रूहानी क़ुव्वत तमाम बदन में फैली हुई है। कुल्ल रचना में शब्द भरपूर है और सब बदन में काम उसी की धारों से चल रहा है पर जो शब्द कि आसमानी है उसी को पकड़ कर चलना और

चढ़ना होगा। पहिले वक़्त में मूलाधार यानी गुदाचक्र से अभ्यासी चलते थे। संत कहते हैं कि असल बैठक जीव की आंखों के बीच में है इस वास्ते संतों का रास्ता आंखों के मुकाम से चलता है।

संतों ने रचना को तीन बड़े दरजों में तक़सीम किया है। एक निरमल चैतन्य देश जहां माया का नाम और निशान भी नही। दूसरा निरमल चैतन्य और निरमल माया देश ज़हां कि माया निहायत पाक और शुद्ध है। तीसरे निरमल चैतन्य और मलीन माया देश। हमारा देश मलीन माया के देश में है। जहां कि शुद्ध माया है वह ब्रह्म देश है। और निरमल चैतन्य देश में चैतन्य ही चैतन्य है और वही संतों का दयाल देश है।

और फिर हर दरजे में छोटे दरजे शामिल हैं। दयाल देश बतौर सिंध अपार है और ब्रह्म उस की लहर है और जीव बतौर बूंद के।

संत मत की सब तरह बडाई हैं कि वह धुर अस्थान का भेद देता है और बाक़ी मत ब्रह्म देश से आगे नहीं गये। और संत देश की किसी को ख़बर न पडी क्योंकि सहसंदलकँवल जोकि दूसरे दरजे में नीचे का मुक़ाम है यहां सब मतों का अंजाम

है यानी यही पद सब का सिद्धान्त है। और संत मत यानी राधास्वामी पंथ में जो आसान तरकीब अभ्यास की बताई जाती है वह हर एक शख़्स कर सकता है दूसरे मतों में जो जुगत चलने की मुक़र्रर है वह निहायत मुशकिल और ख़तरनाक* है और जो कि शब्द आदि ज़हूर कुल्ल मालिक का है इस सबब से इसकी धार को पकड़ कर अभ्यासी धुर अस्थान तक पहुंच सकता है। सिवाय शब्द के जो और धारें हैं वह नीचे के अस्थानों से निकली हैं उनको पकड कर अभ्यासी धुर तक नहीं जा सक्ता।

और मालूम हो कि सुरत शब्द का रास्ता प्रेम से तै होगा क्योंकि जिस को जिस बात का सच्चा शौक़ है वह उस काम को अच्छी तरह कर सक्ता है। और जो कि यह मारग निज प्रेम का है सच्चे मालिक के चरनों में इस वास्ते चाहिये कि ऐसी प्रीत राधास्वामी के चरनों में पैदा करे जैसे कि पुत्र पिता के साथ करता है। जिसके हिरदे में सच्चा शौक़ मालिक के मिलने का है वही अधिकारी इस मत का है और उसी को इस अभ्यास में रस और आनन्द आवेगा। और जिस के सच्चा शौक़ नहीं है

* विघन कारक।

उस से यह अभ्यास भी नहीं बन सक्ता क्योंकि यह काम इन्द्रियों और देह का नहीं है कि जबरदस्ती कराया जावे। जब तक मन में सच्चा शौक़ न होगा यह मारग चल नहीं सक्ता है। इन्द्रियों का काम ज़बरदस्ती भी आदमी कर सक्ता है पर अन्तर में मन का चलाना बग़ैर प्रेम के नहीं हो सक्ता है।

दान पुन्य वग़ैरः शुभ कामों में दाख़िल हैं पर इन से मुक्ती हासिल नहीं हो सक्ती और अन्तर का परम सुख और परम आनन्द प्राप्त नहीं हो सक्ता। और दरशन कुल्ल मालिक राधास्वामी का भी जब तक कि सुरत उलट कर ऊंचे देश में न जावेगी नहीं पा सक्ती है।

जिस शख़्स के सच्चा शौक़ हिरदे में है और मालिक के चरनों में प्यार है उस को शब्द सुनाई दे सक्ता है। और जो कि मालिक का मुक़ाम दूर है और उसका जल्दी दरशन हासिल नहीं हो सक्ता है इस वास्ते उस का जलवह कभी २ अभ्यासी को दिखलाई देना यह भी बड़ी बात है कि उसी को देख कर होश नहीं रहेगा और निहायत आनन्द और रस प्राप्त होगा और फिर इसी तरह दिन २ रस और आनन्द बढ़ता जावेगा और एक दिन काम पूरा बन जावेगा।

बचन नवां

उपदेश शब्द के अभ्यास का

इस दुनियां में सब जीवों के मन में चाह सुख की मालूम होती है और हर रोज़ उसके वास्ते मिहनत और मशक़्क़त करते हैं और जो कुछ सुख यहां के हासिल होते हैं वह पूरे २ नहीं मिलते और जो मिले तो वह सब नाशमान हैं और उनमें आनन्द थोडी देर का है।

अक़लमन्द वह है जो दुनियां के हाल और सुखों को देख कर कि कोई यहां ठहराऊ नहीं है खोज यानी तलाश करे कि परम सुख जो हमेशः एक रस क़ायम रहे वह कहां है और जब कि इस दुनियां के छोटे २ सुखों के वास्ते उमर भर खपता रहता है और फिर वे सब सुख यहां के यहीं छोड़ जाता है फिर उस सुख के लिये जो हमेशह एक रस रहे ज़रूर तवज्जह करना मुनासिब मालूम होता है।

दुनियां के सुखों की प्राप्ती की ख़्वाहिश में बार-म्बार जन्मना और मरना पड़ता है इसलिये हर एक को चाहिये कि इन मे प्रीत कम करे और ऐसे मुक़ाम के हासिल करने के वास्ते कोशिश करे कि जहां हमेशह पूरा आनन्द प्राप्त होवे।

विचारवान आदमी इस दुनियां की नाशमान हालत को देखकर जरूर दिल में ख़्याल करता है कि कोई ऐसा अस्थान भी है जो अमर होवे और जो सर्व सुख का भंडार हो और जिसकी प्राप्ती के लिये एक बार मिहनत करनी पड़े और फिर हमेशः का आनन्द प्राप्त होवे और बार २ मिहनत न करनी पड़े जैसे यहां हर जनम में नये सिरे से मिहनत करके दुनियां के सुख मिलते हैं और फिर वह मरने के वक्त़ एक दम सब छोड़ने पड़ते हैं।

संत कहते हैं कि यह परम सुख का भंडार तुम्हारे घट में मौजूद है।

आदि में सुरत राधास्वामी के चरनों से उतर के ब्रह्माण्ड में होती हुई और वहां से मन को संग लेती हुई दोनों आंखों के मध्य में आकर ठहरी और वहीं इस की असल बैठक है। फिर वहां से सुरत तमाम देह में फैली और एक २ सुख या एक २ क़िस्म का रस जो दस इन्द्रियों के वसीले से हासिल होता है सुरत की एक २ धार का है जो इन्द्री द्वारे बैठ कर लेती है। अगर सुरत की धार उस इन्द्री पर न हो तो वह इन्द्री कुछ काम नहीं दे सक्ती है और वह सुरत क़तरा या बूंद है सत्तपुरुष राधास्वामी

सिंध की। अब जब कि एक क़तरा इस क़दर सुख दायक है तो उस सिंध के सुख की क्या महिमां की जावे।

संत फ़रमाते हैं कि जो सुख कि सुरत के भंडार में है वह अबिनाशी है और वह देश भी अबिनाशी है और तुम भी अबिनाशी हो। पर मन और माया का संग करके इस मृत्युलोक में दुख सुख और जनम मरन भोगना पड़ता है। जब कि दुनियां के नाशमान और तुच्छ सुखों के लिये रात दिन उमर भर मिहनत करते हो तब उस सुख के लिये जो सर्व सुखों का भंडार है किस क़दर मिहनत करनी चाहिये। जिस क़दर मुमकिन हो कम से कम दो घंटे सुबह और शाम या चार घंटे सुबह और शाम तवज्जह के साथ इस काम के वास्ते अभ्यास करना मुनासिब है जो शौक़ होवे क्योंकि हर एक ग्रहस्ती चार घंटे अभ्यास दो तीन दफ़े करके हर रोज़ कर सक्ता है। बहुत से आदमी छः सात या आठ घंटे रोज़ नौकरी करते हैं और कोई २ दस घंटे और बारह घंटे रोज़ मिहनत करते हैं फिर जो कोई चाहे वह कम से कम दो घंटे और भी चार घंटे बल्कि छः घंठे परमार्थ के काम के वास्ते निकाल सक्ता है।

यह भी ज़ाहिर है कि सुरत यानी जीव का रास्ता आने जाने का घट में होकर है। पैदा होने के वक्त मस्तक से सुरत की धार पिंड में उतरती है और मरते वक्त उसी तरफ़ को खिंचती हुई नजर आती है तो जिस धार पर सुरत उतरती है उसी धार को पकड़ कर चलना चाहिये क्योंकि जब मरते वक्त चढ़ाव सुरत का मालूम होता है उस वक्त किस क़दर तकलीफ़ होती है। इस से पेश्तर से उस को रोजमर्रह आदत चढ़ने की उस मुक़ाम की तरफ़ डालनी चाहिये और इस अभ्यास में हर रोज़ नवीन आनंद मिलता जायगा और मरते वक्त जो कष्ट या तकलीफ़ ग्रहस्तियों संसारियों को होती है वह अभ्यासी को नहीं होगी बल्कि अंतर में खिंचाव के साथ आनंद बढ़ता जावेगा।

दुनियां का सब सामान और बाहरमुखी काम सुरत के बहकानेवाले और भरमानेवाले हैं। यह सुरत के निज घर में पहुंचने का रास्ता नहीं है। जो कुछ यहां का सामान है उस में से कोई चीज संग नहीं जाती इस वास्ते उनमें वाजिबी और ज़रूरत के मुवाफ़िक दिल लगाना चाहिये।

जो दुनियां के भोग बिलास की चाह रखते हैं

और जिन्हों ने इसी देश को अपना वतन[1] माना है और उसी के वास्ते मिहनत करते हैं ऐसों के वास्ते संत मत नहीं है वह करम कान्ड में यानी जो परमार्थी चाल कि उनके बुजुर्गों से चली आई है उसी में लगे रहें उसी में थोड़ा बहुत फ़ायदा उन को हासिल होगा यानी कुछ शुभ करम उन से बन जावेगा और उसका फल थोडा सुख मिल जावेगा पर यह जीव चौरासी के चक्कर और जनम मरन से बच नहीं सक्ते । जिनको दुनियां और कुदरत का कारखाना देखकर जनम मरन और देह के दुख सुख से बचने और मालिक से मिलने का शौक़ पैदा हुआ है उनके वास्ते राधास्वामी यानी संत मत है और उनको चाहिये कि जिस क़दर बन सके बिरह और प्रेम अंग लेकर सुरत और मन को शब्द में जो घट २ में भरपूर है लगावें । और शब्द का भेद और जुगत चलने की भेदी से मालूम होवेगी । कोई दिन के अभ्यास से अंतर में खुद मालूम होता जावेगा कि किस क़दर अभ्यास में तरक्क़ी हुई और परचे भी मिलते जावेंगे और दिन २ प्रेम बढ़ता जावेगा ।

---

[1] घर ।

जो कोई ऐसा मान रहे हैं कि मालिक सब जगह मौजूद है फिर जाना आना कहां है यह बात दुरुस्त नहीं है क्योंकि खुद जीव यानी सुरत इस क़दर परदों या ग़िलाफ़ों में पोशीदा है कि जब तक वह न फोड़े जावें तब तक अपना रूप नज़र नहीं आवेगा और फिर वहां से सच्चे मालिक यानी भंडार का दर्शन और भी दूर है और कितनेही परदों में गुप्त है। इसी तरह यह भी परदे फोड़ कर धुर मुक़ाम तक पहुंचना हो सक्ता है। इन लोगों की जब नज़र पड़ेगी तो बाहर के परदे या ग़िलाफ़ पर जिसको अस्थूल शरीर कहते हैं और यह हर दम बदलने वाला और नाशमान है फिर उनको सत्तपद का दर्शन कैसे मिल सक्ता है। वेदान्त शास्त्र कहता है कि अन्नमई कोश, प्राणमई कोश, मनोमई कोश, और ज्ञानमई कोश के परे जो आनन्दमई कोश है वहां जीव यानी आत्मा का बासा है। इन परदों को फोड़ कर जीव यानी सुरत का दर्शन हो सक्ता है। और जब इन पर्दों के फोड़ने का अभ्यास कुछ भी नहीं किया जाता तो इन बातों का कहना और सुनना बेफ़ाइदा है क्योंकि ख़ाली बातों से मुक्ती या सच्चा उद्धार हासिल नहीं हो सक्ता। देखो किसी

दरख़्त के बीज को कि उसकी रूह कितने परदों यानी तह या छिलकों में और फिर उसके मग़ूज़ के अंदर किसी जगह में पोशीदा है जहां से कि वक़्त उगने के कुला फूट कर धार रूप होकर निकलता है। इसी तरह सब शरीरों में रूह यानी जीव या सुरत कितने ही परदों में पोशीदा है और उसका दर्शन सब परदे हटा कर अंतर के चैतन्य यानी रूह की दृष्टी से हो सक्ता है। बाहर की रचना में यह एक २ परदा एक २ मंडल के साथ मुवाफ़िक़त रखता है। सो जब तक भेद इन परदों का दरियाफ़्त करके और उनके पार जाने की जुगती का अभ्यास नहीं किया जावेगा तब तक रास्ता तै न होगा और न जब तक सच्चे मालिक का दर्शन मिल सक्ता है। राधास्वामी मत में भेद इन परदों का और जुगत उनके तै करने की साफ़ २ बताई जाती है और उसका अभ्यास करने से आहिस्ते २ सुरत यानी रूह देह के मुक़ाम से ब्रह्मांड की तरफ़ सरकती जावेगी और जिस क़दर उस तरफ़ को चलती जावेगी उसी क़दर उसको अंतर में आनंद और रस मिलता जावेगा और देह और संसार के दुख सुख और भोगों की चाह का असर कम होता जावेगा।

सोते वक़्त रूह यानी सुरत की धार आंख और सब इन्द्रियों के मुक़ाम से किसी क़दर अंतर की तरफ़ हट जाती है फिर चिंता और दुख सुख देह और संसार का बिलकुल नहीं व्यापता है। इसी तरह से जब डाक्टर लोग शीशी की दवा यानी क्लोरोफ़ार्म सुँघाते हैं उस वक़्त बदन के काटने की तकलीफ़ नहीं मालूम होती। और ऐसे ही नशे की हालत में भी सुरत किसी क़दर मामूली यानी आंख के मुक़ाम से सरक जाती है कि उसी वक़्त सरूर यानी नशे का आनंद आ जाता है और चित्त भी उदार हो जाता है क्योंकि उस वक़्त कोई इसके पास आवे सब को उसी नशे की चीज़ चाहे जैसी कीमती होवे मिस्ल शराब या अफ़यून के खिला पिला कर अपने मुवाफ़िक़ नशे के सरूर में मस्त करना चाहता है। और दुनियां के सोच और फ़िकर और रंज किसी क़दर बिलकुल हट जाते हैं या दूर हो जाते हैं। और इस का मन भी निष्कपट हो जाता है क्योंकि नशे के वक़्त में जो कोई इस से कोई भेद की गुप्त बात पूछे तो बेतकल्लुफ फ़ौरन ज़ाहिर कर देता है।

अब ख्याल करना चाहिये कि जब कि नशे या

क्लोरोफ़ार्म की मदद से सुरत के थोड़े बहुत आंख के मुक़ाम से सरकने में इस क़दर दुख और दर्द और फ़िकर देह और संसार का दूर हो जाता है और अंतर में एक तरह का आनंद या रस आता है तो जो कोई अभ्यास की कमाई से बाइख़्तियार अपने यानी स्वतंत्रता के साथ चाहे जब अंतर में सुरत को इधर से हटा कर ऊपर को चढ़ाने की ताक़त हासिल करेगा उसको किस क़दर कुदरत की ताक़त नज़र आवेगी और आनंद प्राप्त होगा और सफ़ाई रूह और मन को होती जावेगी और देह और संसार के दुख सुख का असर दिन २ कम होता जावेगा। इस से ज़ाहिर है कि सच्ची मुक्ती और सच्चा उद्धार एक दिन इसी जुगत यानी सुरत शब्द की कमाई से हासिल होना मुमकिन है। और जो बाहर मुखी परमार्थी पूजा या चालें हैं या अंतर में हिरदे और नाफ़ के मुक़ाम के अभ्यास हैं उनसे सच्चा उद्धार और रूह की अपने निज घर की तरफ़ चढ़ाई मुमकिन नहीं है।

बचन दसवां

सतसंगियों की रहनी का बर्णन

सवाल १–राधास्वामी मत के सतसंगी की रहनी

क्या होनी चाहिये कि जिससे प्रीति और प्रतीत रोज़-मर्रह बढ़ती रहे और अभ्यास का भी रस मिलता रहे।

जवाब १—सतसंगी को चाहिये कि जब से राधा-स्वामी मत का उपदेश लेवे।

(१) अपना खाना आहिस्ते २ चार छः महीने के अरसे में अन्दाज़न चौथाई और जो ज़्यादह शौक़ीन अभ्यासी है तो तिहाई कम करे।

(२) और संसारी लोगों से मेल इस क़दर रक्खे कि जितना उसके ब्योहार की काररवाई के लिये ज़रूर है और फ़ज़ूल बैठक और बात चीत उनके साथ न करे।

(३) और अपने रोज़गार में किसी को धोखा न दे अपने फ़ायदे के वास्ते और न दूसरे का हक़्क़ बे वाजिब लेवे और काम अपना दुरुस्ती और होशियारी से करे।

(४) और जहां तक बन पड़े ऐसी बात चीत कि जिस में बे मतलब और बे ज़रूरत किसी की निंदा या अस्तुति करनी पड़े न करे और जहां तक बने किसी से ईर्षा और बिरोध और क्रोध न करे।

(५) और अपने फ़ुरसत के वक़्त में सिवाय मामूली अभ्यास यानी सुमिरन और ध्यान के परमार्थी

बिचार चिंतवन करता रहे या दुनियां के हाल पर नज़र करके उससे अपने मन को समझौती देता रहे और कुदरत का हाल और मालिक की कारीगरी हर तरह की देख कर उसकी महिमां मन में करता रहे (हर तरह के कहने में कुल्ल रचना आसमान की और जमीन पर चारों खान की सब आ गई) और जब कोई सख़्त वाक़िआ या वारदात कुदरती सुन्ने में आवे तब अपनी हालत की निरख परख करके होशियारी बढ़ावे और मालिक का शुकराना करे कि ऐसी आफ़तों से बचाये रक्खा है।

(६) और नशे की चीज़ और मांस आहार से बिलकुल परहेज़ करे।

(७) और मन में तरंगें बेफ़ायदा और फ़ज़ूल दुनियां की चाह की न उठावे।

(८) और जो कोई संसारी चिंता या फ़िक्र या दुख मन में आवे तो उस का रूप न बन जावे। जहां तक बने बिचार कर के उस ख़्याल को हटावे और राधास्वामी दयाल की मौज का आसरा ले और जो वह न हटे तो मुनासिब है कि उस वक़्त प्रार्थना के साथ ध्यान या भजन में बैठ जावे और उस रोज़ ज़्यादह तवज्जह और होशियारी के साथ अभ्यास

करके अपनी चिन्ता या दुख को राधास्वामी के चरनों में अर्ज़ करे पर जवाब न मांगे और बाहर जो तदबीर या जतन दस्तूर के मुवाफ़िक़ मुनासिब होवे वह उस के हटाने या दूर करने के वास्ते करे पर फल उसका मौज के ऊपर छोड़ दे और पहले ही से अपने मन में विचार करके सीधी और उलटी मौज के साथ मुवाफ़िक़त करने को तैयार हो जावे। इस से यह फ़ायदह होगा कि चिन्ता बार २ और ज़्यादह नहीं सतावेगी।

(९) और जब सामान खुशी का मयस्सर* आवे तब उसमें बहुत न हरषे और न फूले क्योंकि इस में सुरत फैलती है उस वक़्त ऐसा ख़्याल करे कि जो अपने मन को सम्हाले रक्खेगा तो उसके अभ्यास में ख़लल न पड़ेगा और नहीं तो मौज उसके मन को किसी न किसी तरह से उदास करके सम्हालेगी ऐसा डर और ख़्याल मन में रख कर अपनी सम्हाल करता रहे।

(१०) जब कभी तबीअत बीमार होवे या और तरह की तकलीफ़ होवे जिस से भजन और ध्यान में बैठ न सके तो जैसे बने लेटे २ या बैठे २ मन

* प्राप्त।

या चित्त से चरनों का सेवन करता रहे। जो इस का मन या चित्त चरनों में लगा रहेगा तो वह बीमारी या तकलीफ़ इस को कम व्यापेगी और जो ज़्यादह बीमारी या तकलीफ़ में यह भी न बन पड़े तो मन से राधास्वामी नाम का सुमिरन ही करता रहे और संग २ थोड़ा बहुत स्वरूप का भी ख़्याल रक्खे। इस तरह से भी तकलीफ़ ज़रूर थोड़ी बहुत कम हो जावेगी।

(११) और जहां तक बन सके किसी आदमी या जानवर या चीज में अपने चित्त का बंधन हद्द से ज़्यादह न करे क्योंकि ज़्यादह बंधन में दुख सुख ज़्यादह भोगना पड़ता है और अपना ख़्याल भी बटा हुआ रहता है और भजन या ध्यान कम सिमटता है।

(१२) और हर एक के साथ जिन से इस को काम पड़े जहां तक मुमकिन होवे मुलायमत या दीनता या प्यार के साथ बरताव करे। सो मुलायमत तो उनके साथ जो अपने से छोटे हैं। जो बराबर हैं उन के साथ प्यार और जो बड़े हैं उनके साथ दीनता।

(१३) और अपने मतलब के वास्ते किसी को न दुखावे बल्कि जहां तक बन सके सुख पहुंचाना चाहिये और जो कोई ऊंच नीच बचन कहे तो जहां तक

मुनासिब होवे उस की बरदाश्त करे और किसी के साथ झगड़ा न पैदा करे और जो अपना थोड़ा सा नुक़सान भी होवे तो भी जहां तक मुनासिब होवे उसका सोच और ख़्याल न करे और अपनी तबीअत को झगड़े बखेड़े और तकलीफ़ से बचाता रहे ।

मंसा बाचा कर्मना सब को सुख पहुंचाय ।
अपने मतलब कारने दुक्ख न दे तू काय ॥ १ ॥
जो सुख नहिं तू दे सके तो दुख काहू मत दे ।
ऐसी रहनी जो रहे सोई शब्द रस ले ॥ २ ॥

१४–और जब अभ्यास में बैठे तो जो उस वक़्त बिरह या प्रेम अंग नहीं है तो अपनी कसरों के ऊपर ख़्याल करके चित्त में दीनता लाकर प्रार्थना करता हुआ भजन करे तो ज़रूर थोड़ा और बहुत मन अस्थिर होकर रस पावेगा क्योंकि जब मन का अंग दीन हुआ उसी वक़्त थोड़ा बहुत प्रेम अंग जागेगा । और जब प्रार्थना का असर दिल पर हुआ उसी वक़्त प्यार अंग थोड़ा बहुत पैदा हो जावेगा तो उस तरफ़ से भी दया आवेगी ।

१५–और मुनासिब है कि अपने मन की थोडी बहुत चौकीदारी करता रहे कि फ़ज़ूल तरंगें न उठावे और जो उठें तो उनको जल्द हटाता रहे और जहां

तक बन सके दूसरों की कसरों पर नजर न डाले और किसी पर तान न लगावे। हमेशह अपनी कसरों को देखता रहे और उन के दूर करने का जतन करता रहे। लेकिन जो कोई कि इसके सुपुर्द हैं या इसके साथ प्यार भाव रखते हैं या उसके बचन को मुहब्बत के साथ सुनते हैं तो उन को प्यार के साथ या ख़ौफ़ दिलाकर या जिस तौर से मुनासिब होवे समझावे और कसरों के दूर करने का जतन बतावे या जो कोई कि इसके संग में हैं और उनकी कोई चाल ढाल इस क़िस्म की है कि जिस से बहुत हर्ज और नुक़सान होता मालूम पड़ता है तो उनको एकांत में या जिस तरह पर मुनासिब हो समझाना वास्ते उस चाल के छोड़ने के और नसीहत करना दुरुस्त है और जो वह न मानें तो उन के संग से जिस तौर से मुनासिब होवे अपने तईं हटा ले और अपना बचाव कर लेवे।

यह थोड़ा सा हाल रहनी का बयान किया गया है जो कोई परमार्थी है वह अपनी हालत के मुवाफ़िक़ हर जगह और हर वक़्त और हर काम में राधास्वामी दयाल की दया की तरफ़ नजर रख कर जैसी कुछ सम्हाल दरकार है अपने आप बिचार

कर के कर सक्ता है। इस वास्ते इस मामले में कोई क़ायदः ख़ास मुक़र्रर नहीं हो सक्ता हर एक आदमी अपने निर्मल मन और बुद्धी से थोड़े बिचार के साथ हर एक काम में भलाई और बुराई आप समझ सक्ता है। और जो यह परमार्थी है तो परमार्थ के क़ायदे के मुवाफ़िक़ जिस तरह इसको अपने और पराये के साथ बर्ताव करना चाहिये यह आप समझ कर मुनासिब तौर पर कर सकता है थोड़ा सा दया भाव और कोमलता हृदय में होनी चाहिये बाक़ी राधास्वामी दयाल की दया से सच्चे परमार्थी की सम्हाल आप हर हालत में होती रहेगी।

बचन ग्यारहवां

संत सतगुरु की महिमां और सुरत शब्द अभ्यास की बड़ाई

सब लोग मालिक की तालाश में टटोलवां चले हैं जिस को जहां तक का भेद मालूम हुआ उसी को उसने सिद्धांत समझा और सच्चे मालिक का पता सिवाय संतों के किसी को नहीं मिला। अकसर लोग समझते हैं कि प्राण की साधना से सच्ची मुक्ती हासिल हो सक्ती है और तीन लोक के मालिक का दर्शन मिल सक्ता है लेकिन प्राण की साधना गृहस्ती

जीवों से तो बिलकुल नहीं हो सक्ती क्योंकि उसके संजम यानी परहेज़ ऐसे हैं कि जब तक गृहस्ती घरबार और रोजगार को छोड़ कर अलहिद: न हो जावे तब तक कुछ अभ्यास बन नहीं सक्ता। और फिर अभ्यास में ज़रा सी भी बद परहेज़ी से ख़ौफ़ बहुत हैं या तो कोई बीमारी ऐसी लग जावे कि जनम भर न जावे या फ़ौरन मृत्यु हो जावे। जब गृहस्तियों से यह अभ्यास न बन सका तो गोया बड़ा हिस्सा जीवों का तो उद्धार के क़ाबिल नहीं हुआ। अब बिरक्त जो जवान हैं उनसे तो कुछ बन भी सक्ता है पर वे भी उसके सख़्त संजम और परहेज़ वग़ैर: से लाचार होकर रह गये और जो बूढ़े हैं उन से बिलकुल बन नहीं सक्ता। जब परमार्थ का ऐसा हाल देखा तब सब जीव कर्म धर्म और मूरत पूजा और तीर्थ व्रत वग़ैरह में लग गये। और कोई २ थोड़ी विद्या हासिल करके उसी में मगन हो गये। पर सच्चे मालिक का पता और सच्चे पद के प्राप्ती की जुगत किसी के हाथ नहीं लगी। कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल ने जीवों के उद्धार का दरवाज़ा बंद देखकर आप संत सतगुरु रूप धर कर संसार में आकर अपना निज भेद आप प्रघट

किया और वह निज भेद किसी मत की पुरानी किताबों में नहीं है। शब्द की महिमा सब मज़हबों में गाई है और शब्द की जुगत हिन्दू और मुसलमानों के मजहब मे थोड़ी बहुत बयान की है पर प्राण के रोकने के साथ। इस सबब से वह जुगत किसी बिरले से बन पड़ी पर आम लोग उसकी कमाई न कर सके और इस वास्ते उनका उद्धार या मुक्ती नहीं हुई। कुल्ल मालिक ने सतयुग त्रेता और द्वापर जुग में इस तरफ़ तवज्जह कम की क्योंकि सब जीव माया के सामान के साथ खुश थे यानी उस वक्त में लोग ऐसे दुखी न थे जैसे कि अब रोग सोग और निरधनता के सबब से दुखी हैं और जब तक कोई दुख न होवे तब तक जीव को चेत नहीं होता। अब इस वक्त घोर यानी सख़्त कलिजुग में लोग दुखी और रोगी और सोगी बहुत हैं और माया के पदार्थों का विस्तार तो बहुत मगर निर्धन लोग बहुत हैं। इस सबब से वह सामान माया का हाथ नहीं आता और फिर उमर भी कम हो गई है। ऐसी हालत देख कर कुल्ल मालिक ने इस कलियुग में आप औतार धर कर अपने मिलने की जुगत ऐसी आसान कर दी कि जिस में प्राण के

रोकने की कुछ ज़रूरत नहीं और ऐसा अभ्यास बतलाया कि जो सौ वर्ष का बुड्ढा भी कर सके और आठ वर्ष का लड़का भी कर सके और हर उमर के मर्द और औरत लेटे २ और बैठे २ कर सक्ते हैं।

अब समझना चाहिये कि आदमी का रूप चित्त यानी तवज्जह है। जहां जिस का चित्त है वहीं वह आप मौजूद है जब किसी ने भेद लेकर अपनी पूरी तवज्जह कुल्ल मालिक के चरनों में लगाई तो वह उस वक्त वहीं यानी चरनों में मौजूद है और वहीं शब्द भी मौजूद है शरीर जहां पडा है वहीं पड़ा है। आंख इन्द्री से दृष्टी बाहर की तरफ़ जाती है और सूरतों को देखती है और कान के वसीले से बाहर का शब्द सुना जाता है और जब कि आंख और कान दोनों बन्द करके और अन्तर का भेद लेकर तवज्जह चरनों में लगाई तो जो आवाज़ आसमानी अन्तर में हो रही है और हर वक्त जिस की धार जारी है वह आसानी से सुनने में आ सक्ती है और मालिक के नूर का जलवह भी दिखलाई दे सक्ता है। और इसी आवाज़ को पकड़ के सुरत दरजे बदरजे ऊपर को चढ़ कर एक दिन राधास्वामी के चरनों में पहुंच सकती है।

जितने रास्ते में ठेके या अस्थान हैं उसी क़दर आवाज़ भी हैं उनका भेद संत सतगुरु या उनके साध या ख़ास सतसंगी से मिल सक्ता है।

संत सतगुरु ख़ास मालिक का औतार हैं या उसके खास मुसाहब हैं और कभी उस से जुदा नहीं रहते। अगर थोड़ी देर के वास्ते जुदा भी दिखलाई देते हैं तो सिर्फ़ जीवों के उपकार के वास्ते मगर असल में वे कभी जुदा नहीं होते। हर हालत में इधर भी हैं और उधर भी है यानी उनकी सुरत की डोरी थोड़ी बहुत हर वक्त चरनों में कुल्ल मालिक के लगी रहती है। सिवाय उनके या उनके साध या ख़ास सतसंगी के कुल्ल मालिक और उसके धाम का भेद कोई नहीं दे सक्ता है और सुरत और शब्द का लखाव खोजी और दरदी परमार्थी को इस तौर पर कि उसके चित्त में वचन बख़ूबी समा जावे और तसल्ली हो जावे दूसरा नहीं कर सक्ता।

शब्द असली जौहर की धार है और वही सुरत की धार है यानी जहां पर कि वह धार आकर ठहरी उसी को सुरत कहा जा सक्ता है और जब वहां से बदस्तूर फिर धार जारी हुई तब उसी का नाम शब्द हुआ और वह धारें शब्द ख़ाह सुरत की

धार कहलाईं। देह में शब्द और सुरत की काररवाई का एक दृष्टांत दिया जाता है उस से कुछ हाल उस काररवाई का समझ में आ सक्ता है और वह दृष्टांत यह है।

जैसे कपड़ा बुनने की कल में या रेलवे या किसी और कारख़ाने में जहां अंजन से काम लिया जाता है अंजन ऊंचे के मकान में लगाया जाता है और वहां से एक बडी धार पहिले बडे रस्से पर आती है और उस बड़े रस्से से छोटी २ रस्सियों पर जो कितनी ही कलों से लगी हुई है वह धार आती है और उस धार की ताक़त से सब कलें छोटी और बड़ी चलती हैं। पर यह कुव्वत की धार जो काररवाई करती है दिखाई नहीं देती अगर रस्सी टूट जावे तो धार का आना और उस कल का काम जिस से रस्सी बंधी थी बंद हो जावे। लेकिन यह रस्सी आप धार या धार की कुव्वत नहीं है यह तो औज़ार है जिस के ऊपर धार सवार होकर आती है।

इसी तरह से आदमी की देह में भी रगें हैं और उन्हीं रगों में होकर रूह की धार मस्तक से आती है और देह के अंग अंग को जो एक एक कल के मुवाफ़िक़ है ताक़त देती है। यह धार भी नज़र

नहीं आती लेकिन उसकी काररवाई से उसका शरीर में आना मालूम पड़ता है जैसे जब कोई सोते से जागा और कुछ काम करने लगा तो मालूम हुआ कि शरीर में रूह की धार आई। इन्द्रियों की कारवाई से रूह की धार का देह में आना मालूम होता है। इसी तरह जब लड़का पैदा होता है तब जो वह शब्द करता है उससे मालूम होता है कि वह ज़िंदा पैदा हुआ और जान की धार उसकी देह में आई और नहीं तो वह मुरदा समझा जाता है।

अब मालूम करना चाहिये कि सुरत और शब्द उस जौहर का नाम है जिस के सबब से तमाम शरीर में चैतन्यता और ताक़त फैली हुई है सिर्फ़ आवाज का नाम शब्द नहीं है।

कोई अजान लोग कहते हैं कि शब्द आकाश का गुन है यह लोग शब्द को सिर्फ़ आवाज समझते हैं यह उनकी बड़ी भूल है। क्योंकि वह जौहर जिस को संतों ने शब्द करके पुकारा है आकाश की जान और उसका चैतन्य करने वाला है उस जौहर यानी उस शब्द का कोई ख़ास रूप नहीं है और न उस में रंग और रेखा है। वह अकह अपार और अनंत है और वही कुल्ल का करता है। शब्द से ही कुल्ल

रचना ज़ाहिर हुई और उसी के बल से ठहरी हुई है और उसी की ताक़त और चैतन्यता तमाम रचना में है। उसी की धारें इन्द्री और देह को ताज़ह कर रही हैं और वह शब्द घट २ में मौजूद है। जो कोई अपने अन्तर में संतों के बचन के मुवाफ़िक़ ध्यान और तवज्जह करे वह उस धार की आवाज़ को सुन कर और उस धार से मिल कर उसका आनन्द ले सकता है।

इस देह में दस इन्द्री चारों अंतःकरण और पांच दूत यानी काम क्रोध लोभ मोह अहंकार की धारों ने बहुत भारी शोर डाल रक्खा है। इनकी तरफ़ से तबीअत जब किसी क़दर हटे तब शब्द सुनाई दे। इस तरफ़ से तवज्जह को हटाना और उस तरफ़ को लाना इस को शौक़ कहते है। जिस क़दर यह शौक़ बढ़ता जावेगा उसी क़दर शब्द साफ़ २ और ऊंचे देश का सुनाई देगा और आनन्द बढ़ता जावेगा।

बचन बारहवां

भेद नाम का

नाम की दो क़िस्में हैं धुन्यात्मक और वर्णात्मक। धुन्यात्मक उस को कहते हैं जिस की धुन घट २ के आकाश में आपही आप हो रही है और बर्णात्मक जो ज़बान से बोला जावे और लिखने में

आवे। वर्णात्मक नाम धुन्यात्मक नाम का लखाने वाला है यानी उसका स्वरूप है जिस क़दर कि बोलने में आ सक्ता है।

धुन्यात्मक नाम के तीन दरजे हैं उसी मुवाफ़िक़ जैसे कि कुल्ल रचना के संतों ने तीन दरजे मुक़र्रर किये हैं। पहले दरजे का धुन्यात्मक नाम वह है कि जो निर्मल चैतन्य देश यानी संतों के देश में गाज रहा है और वह राधास्वामी नाम है कि जो कुल्ल और सच्चे मालिक का नाम है और जो आदि धार के साथ अनामी पुरुष से प्रघट हुआ और जिस को धुन ऊंचे से ऊंचे देश में जिस को राधा-स्वामी धाम कहते हैं आपही आप हो रही है। इस नाम के अर्थ यह हैं कि राधा आदि सुरत या आदि धुन या आदि धारा का नाम है और स्वामी कुल्ल मालिक जिस में से कि वह धुन या धारा निकला। दूसरा नाम इसी दरजे में सत्तनाम सत्तपुरुष है। जहां से दो धारें निरंजन और जोत की निकलीं और जिन्हों ने नीचे उतर कर ब्रह्मांड की रचना करी।

दूसरे दरजे का धुन्यात्मक नाम ओंकार है। इस दरजे में निरमल चैतन्य और निरमल माया की मिलौनी है इसी को अनहद शब्द और मूल नाद

कहा है। इसी से हिन्दुओं के सूक्षम वेद की धुन कि जो लिखने में नहीं आ सकती है प्रघट हुई और इसी में से तीन लोक की रचना का मसाला निकला और इसी को ओंकार पुर्ष कहते हैं। इस नाम का वेद मत की महा परलय और संतों की परलय में अभाव हो जाता है। पर सत्तपुर्ष और राधास्वामी नाम हमेशह क़ायम रहते है। वहां किसी दरजे की परलय या महा परलय का असर नहीं पहुंच सक्ता।

रचना के तीसरे दरजे में भी जहां कि निरमल चैतन्य और मलीन माया की मिलौनी है धुन्यात्मक नाम है। पर यह नाम सुरत यानी जीव चैतन्य कि जिस को बैराट स्वरूप कहते है और मन के नाम है। और संत मत में इन का अभ्यास नहीं कराया जाता क्योंकि सुरत की बैठक छठे चक्र में है जोकि तीसरे दरजे का सिर या चोटी है और उसके ऊपर से संतों का अभ्यास शुरू होता है। ओंकार पुर्ष को गुरू और सत्तनाम सत्तपुर्ष को सतगुरू और राधास्वामी को कुल्ल मालिक कहते हैं।

इस से ज़ाहिर है कि राधास्वाधी नाम सच्चे कुल्ल मालिक का सब से ऊंचा और गहरा और पूरा नाम है। जो कोई अपना सच्चा और पूरा

उद्धार चाहे वह बग़ैर धुर धाम में पहुंचने के नहीं हो सक्ता है और जब तक राधास्वामी नाम को अपने हिरदे में नहीं बसावेगा और उस की धार को पकड़ कर और रास्ते की मंज़िलों का भेद लेकर और इस नाम को अपना साथी बनाकर नहीं चलेगा तब तक काल और माया के जाल और विघनों से बचाव और धुर धाम में पहुंचना नहीं हो सकेगा। जैसे कि आदि में धुर अस्थान से धार प्रघट होकर नीचे उतरी और किसी ठिकाने पर ठहर कर वहां की रचना उसने करी इसी तरह उस अस्थान से भी धार प्रघट हुई और बदस्तूर नीचे उतर कर दूसरे ठेके पर ठहरी और फिर वहां रचना पहिले अस्थान के मुवाफ़िक़ हुई और फिर वहां से धार नीचे को आई इसी तरह जैसे कि ठेके और अस्थान धुर धाम से सुरत के मुक़ाम तक रचे गये वही इस तरफ़ से चलने वाली सुरत के वास्ते मंज़िलें मुक़र्रर हुईं और हर एक अस्थान का शब्द जुदा २ है। जो कोई संत सतगुरु या उनके निज सतसंगी अभ्यासी से भेद इन मंज़िलों और उनके शब्दों का लेकर बिरह और प्रेम अंग के साथ उन शब्दों की धार धुन को (जिस को 'धुन्यात्मक नाम

कहते है) पकड़ कर चले वही एक दिन आहिस्ता २ धुर मुक़ाम तक पहुंच सक्ता है। राधास्वामी नाम जो कि मुराद आदि धुन या धार से है वह कुल्ल नीचे के शब्दों की धार या धुन की जान है यानी उन सब शब्दों की धार के अंतरगत वह धुन या धार मौजूद है। लेकिन उस पर जिस क़दर धुर धाम से दूरी होती गई और जैसे मंडल में होकर उसका गुज़र हुआ वैसेही नीचे के चैतन्य और माया के ख़ोलों में गुप्त होती चली आई। इस वास्ते राधास्वामी मत के अभ्यासियों को मुनासिब और जरूर है कि राधास्वामी नाम को अगुवा करके अंतर में अभ्यास करें तो उस धुन या धार के साथ जो रास्ते के हर एक अस्थान के शब्द से प्रघट हुई है मेल होता जावेगा और उस धार को पकड़ कर सहज में सुरत चढ़ती जावेगी और आहिस्तह २ एक दिन राधास्वामी के चरनों में पहुंच कर अपने निज मालिक का दर्शन पावेगी।

वर्णात्मक नाम के अभ्यास से जो क़ायदे के बमूजिब हो और दुरुस्ती से किया जावे सफ़ाई हासिल होगी और धुन्यात्मक नाम के अभ्यास से सुरत यानी रूह आकाश में यानी घट में ऊंचे की

तरफ़ चढ़ेगी। लेकिन आज कल धुन्यात्मक नाम का भेद और जुगत उसके अभ्यास की सिवाय राधास्वामी मत के अभ्यासियों के और किसी मत में जारी नहीं है। वर्णात्मक नाम का अभ्यास अलबत्तह् कर रहे हैं। लेकिन वह भी बग़ैर भेद और जुगत के। इस सबब से सफ़ाई का भी फ़ायदः जैसा चाहिये उनको हासिल नहीं होता।

जो वर्णात्मक नाम कि आज कल मशहूर हैं वह दूसरे या तीसरे दरजे के नाम है और जो अभ्यास कि लोग कर रहे हैं वह या तो ज़बानी सुमिरन है बग़ैर पते नामी और उस के धाम और उसके रास्ते के या स्वांसा से जाप करते है और या हिरदे और नाफ़ के मुक़ाम पर उसका उच्चारण शुरू करते हैं। मगर इन सब सूरतों में ठीक २ पता नामी और उसके धाम और उसके रास्ते का किसी को मालूम नहीं इस सबब से इस क़िस्म के अभ्यासियों की मिहनत और वक़्त मुफ़्त बरबाद जाते हैं और कुछ असर नाम के अभ्यास का उनके दिल पर नहीं होता यानी नामी की मुहब्बत और उसके मिलने का शौक़ पैदा नहीं होता। इस तरह पर चाहे कोई लाखों नाम लेवे पर उससे कुछ फ़ायदह परमार्थी नहीं उठा

सकता है। जो बर्णात्मक नाम का अभ्यास जुगत के साथ और नामी का पता मालूम करके किया जावे तो जल्द अंतर में सफ़ाई हासिल होती हुई मालूम पड़े और मन में शौक़ भी पैदा हो। यह जुगत राधास्वामी मत में बहुत खोल कर समझाई जाती है और उसका फ़ायदा भी अभ्यासियों को जल्द मालूम होता है।

अब जो कोई अपना सच्चा उद्धार चाहे उस को मुनासिब है कि बर्णात्मक और धुन्यात्मक नाम का अभ्यास राधास्वामी मत की जुगत के मुवाफ़िक़ शुरू करे तो कोई दिन में उसको अपने अन्तर में इस अभ्यास से मुक्ती प्राप्त होने का यक़ीन अपने आप हो जायगा और सच्चे मालिक के चरनों में प्रेम दिन २ बढ़ता जावेगा।

सब मतों में नाम की महिमां कही है और हिन्दुओं के मत में ख़ास कर लिखा है कि बग़ैर नाम के उद्धार नहीं होगा। मगर लोग नहीं जानते कि यह महिमां किस नाम की है। और कौन जुगत से उसका अभ्यास करना चाहिये जिस से सच्ची मुक्ती हासिल हो। अब यह भेद खोल कर कहा जाता है कि जिस नाम की ऐसी महिमां हिन्दू और

मुसलमान और और मतों में कही है वह धुन्यात्मक नाम संतों के दूसरे दरजे यानी ब्रह्माण्ड के धनी का नाम है और जिस नाम की संतों ने महिमां कही है वह धुन्यात्मक नाम संतों के अव्वल दरजे यानी निरमल चैतन्य देश का है। इन नामों की आवाज को. अंतर में चित्त देकर सुन्ना और उनकी धार को पकड़ कर दरजे बदरजे चढ़ना यह सुरत शब्द का सच्चा अभ्यास है। जो कोई इस तौर से अभ्यास करे वह थोड़े दिन में अपने आहिस्तह २ उद्धार होने का सबूत अपने अंतर में देख सक्ता है और वर्णात्मक नाम बेठिकाने चाहे उमर भर जपा करे कुछ हासिल नहीं होगा।

जो कोई दूसरे दरजे यानी ब्रह्माण्ड के धुन्यात्मक नाम का अभ्यास राधास्वामी मत की जुगत के मुवाफ़िक़ करेगा और उसके आगे चढने का यानी सत्तपुर्ष राधास्वामी के चरणों में पहुंचने का इरादा नहीं रखता है तो उस का भी पूरा उद्धार नहीं होगा यानी जनम मरन उसका चाहे बहुत देर बाद होवे जारी रहेगा। इस वास्ते सब को चाहिये कि पहले और दूसरे दरजे के धुन्यात्मक और बर्णात्मक नाम

का भेद और जुगती लेकर अभ्यास में लगें तो कारज पूरा होवेगा।

मालूम होवे कि ब्रह्माण्ड के धुन्यात्मक नाम को लक्ष और बर्णात्मक को बाच्य स्वरूप ब्रह्म का कहते हैं।

सिवाय धुन्यात्मक और बर्णात्मक नाम के जिन का जिकर ऊपर हुआ एक और क़िस्म के नाम भी हैं जिन को कृत्तम कहते हैं यानी जो करतूत के बमूजिब नाम रक्खे गये जैसे गोपाल गिरधारी वग़ैरह। यह नाम जिस वक़्त कि वह करतूत ख़तम हुई जाते रहते हैं और कर्ता भी उस काम का गुप्त हो जाता है। फिर ऐसे नामों के जपने से कुछ भी परमार्थी यानी जीव के उद्धार का फ़ायदा नहीं हो सक्ता मगर लोग इस बात से बिलकुल बे ख़बर हैं। और मालूम हावे कि जितने नाम तीसरे दरजे के है वह सब थोड़े बहुत इसी क़िस्म से हैं। इनके जाप से चाहे थोड़ी बहुत सिद्धी और शक्ती हासिल हो जावे पर वह ऐसे अभ्यासी को मन और माया यानी काम और क्रोध और मान बड़ाई के चक्कर में डालकर (तहतुलसराय) यानी चौरासी जोनों में भरमावेंगे॥

बचन तेरहवां

सतसंग की महिमां

१—सतसंग की महिमां सब मतों में वर्णन की है पर बहुत थोड़े लोग हैं जो इस की क़दर जानते हैं। बहुत से लोग तो यह भी नहीं जानते कि सतसंग किस को कहते हैं। तीर्थों में और मंदिरों में लोग बेशुमार जाते हैं पर सतसंग का खोज और उस में शामिल होने की चाह किसी के दिल में मालूम नहीं होती। इन कामों में फल बहुत कम है और जो कुछ है सो भी सैर और तमाशे में जाता रहता है।

२—सतसंग का फ़ायदह बहुत जियादा है पर उसकी क़दर और चाह बहुत कम है। सच तो यह है कि जब तक कोई सतपुरुषों का गहरा संग नहीं करेगा और उनके बचन को चित्त देकर नहीं सुनेगा और उन बचनों का मनन और बिचार करके अपने फ़ायदे की बातों को छांट कर थोड़ा या बहुत उनके मुवाफ़िक़ बरताव नहीं करेगा तब तक उस पर परमार्थ का रंग किसी तरह नहीं चढ़ेगा और न उसके मन और बुद्धी की हालत बदलेगी और न उसका चाल चलन दुरुस्त होगा। इस वास्ते सब जीवों को ज़रूर चाहिये कि अपने शहर में और जहां कहीं

कि वे जावें सतसंग का खोज करके उस में जिस क़दर बन सके शामिल होकर उस से फ़ायदह उठावे।

३–अब समझना चाहिये कि सतसंग किसको कहते हैं। संत अथवा राधास्वामी मत में सतसङ्ग नाम ऐसी सभा और संगत या जलसह का है जहां कि सच्चे मालिक का निरनय और उसकी महिमां और उस से मिलने के सच्चे रास्ते और जुगत का बयान होता होवे और राजाओं और सूरमाओं और दातारों की तारीफ़ और हाल का ज़िकर न होवे और मुखिया ऐसी संगत के संतसतगुरू या साध गुरू होवें या उनका निज सतसंगी जो प्रेम और सचौटी के साथ अभ्यास कर रहा होवे क्योंकि ऐसा सतसंग बग़ैर सत्तपुरुषों की मदद के जोकि आप मालिक से मिल रहे हैं या मिलने के लिये सच्चा अभ्यास कर रहे हैं और अपने तन मन और इन्द्रियों को साधना के बल से पूरा २ या किसी क़दर क़ाबू में लाये हैं नहीं चल सक्ता और न किसी को उस से जैसा चाहिये फ़ायदह हासिल हो सक्ता है।

४–ज़ाहिर है कि जिसने जिस बात की कमाई

आप कर ली है वह उस को दूसरों को भी अच्छी तरह समझा सक्ता है और कमाई भी करा सक्ता है और उसके बचन में भी किसी क़दर असर होगा । और जो कि विद्या और बुद्धी की मदद से महात्माओं की बानी और बचन को पढ़ कर सुनाते और समझाते हैं न तो उनका बचन ठीक और दुरुस्त हो सक्ता है और न किसी को वे उसकी कमाई की जुगत बता सक्ते हैं और न कमाई करने वाले को मदद दे सक्ते हैं बल्कि अंतर के भेद को जिस से कि वह आप बिलकुल नावाक़िफ़ हैं उलटा पुलटा बयान करके लोगों को ग़लती में डालेंगे और करम धरम में भरमावेंगे इस वास्ते उन का संग सतसंग नहीं है बल्कि सच्च पूछो तो कुसंग में दाख़िल है ।

५-अब मालूम करना चाहिये कि जहां संत सतगुरु या साध गुरू बिराजते हैं या उनका कोई निज सतसंगी सतसंग का मुखिया है तो वहां ज़रूर सच्चे मालिक का निरनय होगा और यह भी बयान होगा कि किस तरह उसके चरनों में सच्चा प्रेम और भक्ती पैदा होवे और कैसे वह दिन २ बढ़ती जावे और कौन जुगत और अभ्यास से मन

और इन्द्रियों का जोर कम होवे और दुनियां और उस के सामान की चाह और क़दर किस तरह दिन २ हलकी होती जावे और किस तौर से जीवों को व्योहार और परमार्थ की काररवाई करनी चाहिये कि जिससे उनके पिछले करम कटते जावें और आइन्दह को उनके सिर पर दुखदाई और फिर जन्म दिलाने वाले करम न चढ़ते जावें।

६—जब ऐसा सतसंग जीवों को मिले और वे चित्त देकर सच्चे शौक़ के साथ बचनों को सुनें तब जरूर उनकी परमार्थी समझ दिन २ बढ़ती जावेगी और दुनियां और उस के भोगों का भाव और प्यार आहिस्तह २ घटता जावेगा और जो २ भूल और भरम और उलटी पुलटी समझ संसारियों और अनेक तरह के लोगों का संग करके उनके दिल में समाई हुई है आहिस्तह २ दूर होती जावेंगी और नाशमान और दुखदाई पदार्थों में उनकी पकड़ ढीली और कम होती जावेगी और प्रेमी और भक्तिवान लोगों के साथ जो सच्चे मालिक के सच्चे चाहने वाले हैं और खुद सच्चे मालिक के चरनों में जोकि सर्व ज्ञान और सर्व आनन्द और सुखों का भंडार है दिन २ प्रीत और प्रतीत

बढ़ती जावेगी और पाप कर्मों से सच्चे मालिक का ख़ौफ़ करके तबीयत हटती जावेगी और जब ऐसे सतसंगियों को भेद रास्ते का घट में और जुगत मालिक के चरनों मे पहुंचने की सुनाई जावेगी तो वे शौक़ और उमंग के साथ उसके अभ्यास में लगेंगे और अंतर मे रस और स्वाद अभ्यास का उनको आता जावेगा और सच्चे मालिक की दया की जैसी कि वह सच्चे प्रेमियों के ऊपर अपनी कृपा से करता है अपने अन्तर में परख आती जावेगी और तब सच्चा यक़ीन आहिस्तह २ मालिक की हर वक़्त अपने अन्तर मे मौजूदगी का और हाज़िर नाजिर होने का दिल में पैदा होता जावेगा और तब ही वे सच्चा ख़ौफ़ और सच्चा प्यार मालिक का अपने दिल में लाकर सचौटी के साथ बुरे कामों से परहेज और नेक कामों मे कोशिश और पैरवी करेंगे।

७-जो कोई थोड़े दिन भी ऐसा सतसंग करेगा तो उस के भरम जरूर दूर हो जावेंगे और अनेक तरह की फ़ुज़ूल पूजा और रस्मों में अपना तन मन धन वृथा ख़र्च नहीं करेगा और धोखा देने वालों के फंदे में नहीं फंसेगा और तकलीफ़ और आरम के वक़्त अपने मालिक को भूल कर इधर

और उधर चित्त नहीं चलावेगा यानी उसका मन डावांडोल नहीं होगा क्योंकि जिस वक़्त कोई शख़्स अपने मालिक को छोड़ कर दूसरों से मदद मांगता है तो साबित होता है कि या तो उसने अपने मालिक को समरत्थ न जाना या उसकी मौजूदगी का यक़ीन उसके दिल में नहीं आया तो इन दोनों सूरतों में वह शख़्स मुनकिर यानी नास्तिक हो गया। और जो ज़रा सी दुनियां की तकलीफ़ में ऐसी डावां डोल हालत हो गई तो अख़ीर यानी मौत के वक़्त की हालत का क्या भरोसा हो सक्ता है। इस तरह का परमार्थ कुछ कार आमद नहीं हो सक्ता है न जीते जी और न मौत के बाद।

८—ग़ौर करके दुनियां का हाल देखने से मालूम होता है कि थोड़ी या बहुत लोगों की ऐसीही हालत है और सबब इसका यह है कि उन को सतसंग नहीं मिलता है और इसी वजह से मन और चित्त उनके हमेशह डामां डोल रहते हैं और बजाय मालिक के यक़ीन और मुहब्बत के दुनियां का प्यार और ख़ौफ़ दिल में ज़बर समाया रहता है और परमार्थ और स्वार्थ में अनेक तरह के भरम और करम और संशयों में गिरफ़ार रहते हैं और अपने कर्मों का फल (जो कि मन और इन्द्रियों की चाह

के मुवाफ़िक़ पाप और पुण्य का ख्याल छोड़ कर करते है) दुख सुख भोगते रहते है। और अपने जीव के सच्चे कल्यान के वास्ते कोई काम उनसे नहीं बनता क्योंकि खुद मतलबी लोगों के बहकाने से जिस क़दर परमार्थी काम वे करते है उन में किसी क़दर आसा संसार के भोग बिलास की लगी रहती है। इस सबब से उनका सच्चा उद्धार नहीं हो सक्ता है। हमेशह ऊंची नीची देह में दुख सुख भोगते रहेंगे और जनम मरन की फांसी कभी नहीं काटी जावेगी ॥

९—इस वास्ते सब जीवों को जिन को थोड़ा बहुत भी दर्द परमार्थ का है मुनासिब है कि ऐसा सतसंग जिस का जिकर ऊपर हुआ है खोज कर उस में जिस क़दर बन सके शामिल होवें और अभ्यास की जुगत लेकर जितना बन सके उस की कमाई करते रहें तो सच्चे मालिक की दया और संत सतगुरु के प्रताप से एक दिन उनका सच्चा उद्धार हो जावेगा यानी जनम मरन से छूट कर अपने निज घर में जोकि सच्चे मालिक का धाम है पहुंच कर अमर हो जावेंगे और परम आनन्द को प्राप्त होंगे ॥

बचन चौदहवां

भक्ती की महिमा

१-भक्ती नाम प्रेम और इश्क़ का है और खैंच शक्ती और मिलाप शक्ती उसका स्वरूप या ज़हूर है। सब रचना प्रेम की शक्ती से प्रघट हुई और उसी के आसरे ठहरी हुई है॥

२-कुल्ल मालिक प्रेम स्वरूप है और सब रचना का भी प्रेम स्वरूप है और प्रेम के आसरे सब काम इस रचना के जारी हैं बिना प्रेम यानी शौक़ के कोई आदमी कोई काम नहीं कर सकता इससे ज़ाहिर है कि बिना प्रेम या शौक़ के कोई काम न तो दुनियां का दुरुस्त हो सकता है और न परमार्थ का इस वास्ते संतों ने परमार्थ की कार-रवाई में प्रेम यानी भक्ती की मुख्यता रक्खी है॥

३-भक्ती कुल्ल को पसंद है क्या आदमी क्या जानवर और भक्ती से हर कोई राज़ी होता है प्यार और दीनता भक्ती और प्रेम का ज़हूरा है यानी जहां सच्चा प्रेम होगा वहां सच्ची दीनता भी ज़रूर होगी जैसे जिस किसी को धन की सच्ची मुहब्बत और चाह है वह जहां से कि उसे धन

प्राप्त होवे वहां सच्ची दीनता के साथ वर्तता है इसी तरह जिस को जिस चीज़ की सच्ची चाह है वह उस चीज के हासिल करने को जिस के वसीले से होवे उस के साथ उस वक्त सच्ची मुहब्बत और दीनता से पेश आता है।

४-अब समझना चाहिये कि जिस किसी को सच्चा डर चौरासी और नरकों का मन में आया है और दुनियां के हाल और सब यहां के सामान के नाशमान होने की कैफ़ियत देख कर सच्ची चाह सच्चे सुख और अमर पद के हासिल करने की पैदा हुई है वह जब तक कि सच्चे मालिक के साथ और उस शख़्स से जो कि उसका भेद और उसके मिलने का रास्ता और जुगत बतावे सच्ची मुहब्बत और दीनता नहीं करेगा तब तक उस को भेद और रास्ता मालूम नहीं होगा और न सच्चे मालिक से उस का मेल होगा॥

५-इस वास्ते संतों ने खोल कर कहा है कि जिन मतों में प्रेम और दीनता की गुरू और मालिक के चरनों में मुख्य करके ज़रूरत नहीं वर्णन की है वह सब मत थोथे और ख़ाली हैं और मन बुद्धी के रचे हुए हैं और उन से जीव का कारज कुछ नहीं होगा

यानी सच्चा उद्धार और सच्ची मुक्ती प्राप्त नहीं होगी ॥

६-सच्चा उद्धार और सच्ची भुक्ती से यह मतलब है कि देहियों के बंधन और उनके संग के दुक्ख सुक्खों से छुटकारा पाकर और मन माया के देश से न्यारा होकर अपने निज देश यानी सच्चे मालिक के चरनों में प्राप्त होवे जहां कष्ट और क्लेश और जनम मरन बिलकुल नहीं है और पूरन आनन्द और परम सुख सदा एक रस रहता है ॥

७-यह भी मालूम होना चाहिये कि जब तक सच्ची दीनता और भक्ती कुल्ल मालिक के चरनों में न होगी तब तक कारज पूरा न होगा और भक्ती के वास्ते नाम, रूप, लीला, और धाम भगवंत यानी मालिक का मालूम होना जरूर है। जहां तक माया की हद्द है वहां तक जितने नाम और रूप हैं देर अबेर वह सब नाशमान है। संतों का देश माया की हद्द के पार है और वहां का नाम और रूप और धाम अमर और अबिनाशी है और वहीं सच्चे मालिक का अस्थान है और वहीं से आदि धार प्रघट हुई और उसी से सब रचना उस देश की और फिर तीन लोक की पैदा हुई और उसी धाम से सुरत यानी जीव अंश आया इस वास्ते

सब को जो अपना सच्चा उद्धार चाहते हैं मुनासिब है कि सच्चे मालिक का भेद लेकर भक्ती और प्रेम उस के चरनों में करें और जुगत तै करने उस रास्ते की संत सतगुरु या साध गुरू या उनके निज सतसंगी से दरियाफ़्त करके प्रीत और प्रतीत और दीनता के साथ अभ्यास करे तो सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल की मेहर और सतगुरु की मदद से आहिस्तह २ अभ्यास कर के एक दिन धुर मुक़ाम पर पहुंच कर जीव का सच्चा कल्यान और पूरा कारज हो जावेगा ॥

८—और जुगत चलने की यह है कि जिस धार पर सुरत धुर मुक़ाम से उतर कर आई है उसी धार को पकड़ कर घर को लौट जावे और वही धार रूह और जान की धार और प्रकाश और नूर की धार और शब्द की धार है। जो संतों ने भेद शब्द का बताया है उसी मुवाफ़िक़ धुन को सुनती हुई सुरत ऊपर को चढ़ सक्ती है इस जुगत को सुरत शब्द योग कहते हैं और उस के अभ्यास से दिन २ सच्चे मालिक के चरनों में मेल होता जावेगा और इसी अभ्यास का नाम प्रेमा भक्ती है ॥

९—जो लोग कि सच्चे मालिक से बेख़बर हैं और

सिवाय उसके औरों की पूजा या भक्ती कर रहे हैं और उनके भी असली नाम, रूप, और धाम की ख़बर नहीं रखते तो ऐसी भक्ती से उनके इष्ट धाम की भी प्राप्ती नहीं होगी और जो कि नक़ल बना कर पूजा और भक्ती करते हैं उसका फ़ायदह तो बहुत कम है और जीव का उद्धार इन दोनों सूरत में किसी तरह मुमकिन नहीं है। शुभ कर्म का थोड़ा सा फ़ायदह होगा यानी कुछ सुख मिलेगा पर जनम मरन कभी दूर न होगा॥

१०-और जो लोग कि मालिक को अनाम और अरूप और सर्वव्यापक समझ कर मानते हैं उन के हृदय में मालिक के चरनों की भक्ती पैदा नहीं होगी और न कभी उस सर्वव्यापक स्वरूप से उनका मेल होगा और न सच्चा उद्धार उनके जीव का मुमकिन है यह लोग विद्या और बुद्धी के बिलास वाले हैं इन से मन और इन्द्रियों के रोकने और उनका क़ाबू में लाने की जुगत बिलकुल नहीं कमाई जा सक्ती है इस सबब से यह लोग ज़ाहिर में तो बहुत बातें बनाते हैं पर अन्तर में हमेशः ख़ाली रहते हैं। जिस वक़्त ये लोग मालिक की अस्तुत करें या उसकी महिमा गावें उस वक़्त थोड़ा प्रेम इनके हृदय में

और ज़बान से ज़ाहिर होगा पर वह ठहराऊ नहीं होगा और न उसको तरक्क़ी होवेगी क्योंकि उनका घाट बिना अंतरी अभ्यास के नहीं बदल सकता यानी हमेशः मन और बुद्धि और इन्द्रियों के घाट पर उनकी बैठक रहती है और वह घाट दुनियां की काररवाई का है उस में मालिक का प्रेम थोड़ी देर के वास्ते जब तक उसका ज़िक्र या सिफ़्न करें आ सक्ता है और जब ज़िक्र हो चुका फिर बदस्तूर दुनियावी हालत में उनका बरताव रहेगा और वह हालत मालिक के प्रेम से ख़ाली रहती है ॥

११–इस वास्ते संत मत ही सच्चा मत है और जो कोई उस को मानेगा और सुरत शब्द का अभ्यास करेगा उसका सच्चा उद्धार होगा और बाक़ी जीवों का जनम मरन और नीच ऊंच जोनों में चक्कर और फेरा किसी सूरत में बच नहीं सक्ता है ॥

१२–जो कोई सच्चा खोजी और दरदी है वह सतगुरु या साध गुरू या संत मत के भेदी से मिल कर सुरत शब्द योग की जुक्ती दर्याफ़्त करके उसके अभ्यास में लग कर दिन २ अपने अंतर में आनन्द

और रस लेता जावेगा और गुरू राधास्वामी कुल्ल मालिक के चरनों में प्रीत और प्रतीत बढ़ाता जावेगा और सच्ची सरन लेकर कोई दिन अभ्यास करके अपने उद्धार की सूरत अपने अंतर में आप देखेगा ।

बचन पन्द्रहवां

सच्ची सरन और सच्ची करनी के लिये किन बातों का पहिले निरनय करना चाहिये ।

१--राधास्वामी मत के हर एक सतसंगी को चाहिये कि तीन बातों को अच्छी तरह निरनय करके समझ लें और उनकी सच्ची प्रतीत मन में धारन करें तब सच्ची सरन कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की थोड़ी बहुत मन और चित और सुरत से ली जावेगी और थोड़ा बहुत अभ्यास सुमिरन, ध्यान और भजन का सचौटी के साथ बन आवेगा और उस से जीव का कारज एक दिन बन जावेगा ॥

२--वे तीन बातें ये हैं। पहिले परतीत इस बात की कि राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक और सर्व

समरथ हैं और हर वक़्त घट २ में मौजूद हैं। दूसरे यह कि सुरत यानी जीव उन की अंश है जैसे सूरज और सूरज का किरन। तीसरे यह कि बिना सुरत शब्द के अभ्यास के और कोई मारग धुर पद में सहज और निरविघन तौर से पहुंचाने वाला नहीं है और न इस से बढ़ कर दूसरा रास्ता रचा गया है।

३—जब इन बातों की पूरी परतीत मन में आ जावेगी और कोई संशय या भरम इन के सच्चे होने की निसबत नहीं रहेगा तब कुछ अभ्यास बन पड़ेगा और उसका फ़ायदा भी अन्तर में मालूम पड़ेगा। फिर थोड़ा बहुत सच्चा भाव और सच्चा भय सच्चे मालिक का मन में पैदा होगा और उसी मुवाफ़िक़ जीव का ब्योहार अन्तर और बाहर सम्हलता जावेगा और दिन २ प्रीत और परतीत चरनों में बढ़ती जावेगी और आहिस्ता २ एक दिन पूरन प्रेम हासिल हो जावेगा॥

४—अब इन तीनों बातों का निरनय खोल कर किया जाता है और वह इस दृष्टान्त से अच्छी तरह हर एक की समझ में आ सक्ता है। देखो किसी दरख़्त का बीज जैसे दाना ख़शख़श (जो कि

पोस्त या अफ़ीम का बीज है) किस कदर छोटा है पर उस पर तीन तह यानी ग़िलाफ़ चढ़े हुए हैं और उसके अन्दर मग़ज़ सफ़ेद रंग का है और उस मग़ज के किसी मुक़ाम पर उस बीज की रूह सुरत का बासा है।

२–ये ग़िलाफ जो तह के मुवाफ़िक़ चढ़ रहे है उस के दरख़्त के अस्थूल और सूक्ष्म रूप का मसाला लिये हुए हैं जब उस दाने की रूह या सुरत के मुक़ाम से कुला फूटता है याने आदि धार सुरत की प्रघट होती है उसी वक़्त से पांचों तत्व और तीनों गुन और रोशनी और बिजली और खैंच शक्ती और हटाव शक्ती और चुम्बक शक्ती वग़ैरह उसी वक़्त से उस दरख़्त के रूप के बनाव में आपस में रल मिल कर सब तरह की मदद देते हैं और आकाश से मसाला खैंच कर उस दरख़्त का पूरा रूप बनाते हैं और जब तक कि सुरत का उस देह याने दरख़्त में बासा है तब तक ये शक्तियां और तत्व और गुन उसकी ताबेदारो में हाजिर रह कर आपस में मेल के साथ काररवाई करते हैं और कोई २ इन में से एक दूसरे के बिरोधी भी हैं पर जब तक सुरत मौजूद है वह बिरोध अङ्ग ज़ाहिर नहीं होता

और जब सुरत देह को छोड़ देती है तब वह सब आपस में बिगड़ कर उस देह के रूप को बिगाड़ देते है। और जो मसाला कि आकाश से लिया था वह भी ज़र्रा ज़र्रा होकर फिर आकाश में मिल जाता है। इसी तरह सब देहियों की रचना का हाल समझ लेना चाहिये। क्या मनुष्य क्या चौपाये क्या परंद क्या कीड़े मकोड़े क्या दरख़्त और बनस्पति सब के बीज में सुरत कई तह या ग़िलाफ़ों के अन्दर मग़ज़ में गुप्त रहती है और जब समय पाकर अपने तईं प्रघट करती है उसी समय से जिस क़दर रचना का मसाला है और जितनी शक्तियां हैं वे सब उस के ताबेदारी में हाज़िर रह कर उसकी रचना के बिस्तार में मदद देते हैं इस से ज़ाहिर है कि यह अंश समरथ और ताक़त वाली है और कुल्ल रचना के मसाले और शक्तियों पर इसका हुक्म है याने जिस क़दर रचना कि इस लोक में दिखाई देती है वह सुरत की की हुई है॥

३—याने सुरत अंश जो कि किरण रूप होकर सच्चे मालिक के चरणों में से अपनी धार पर सवार होकर इस देश में आई है वह हर एक देह में बैठ

कर काररवाई करती है असल में वही सत्य है और बाक़ी नाम और रूप जो नज़र आता है वह उसके आसरे सत्य मालूम पड़ता है पर सुरत के देह छोड़ने पर नष्ट हो जाता है॥

४—जब इस किरण रूप सुरत अंश की ऐसी गत है और समरथता है और सुरतें बेशुमार इस रचना में आई हैं तो वह भंडार जहां से सब सुरतें आईं कुल्ल का मालिक और सर्व्व समर्थ और सर्व्व आनन्द और सर्व्व ज्ञान रूप साबित हुआ॥

५—यह बात साफ़ ज़ाहिर है कि जिस क़दर आनन्द और रस और सवाद जीव को इस देह में मिलता है वह सुरत की धार में है क्योंकि जो वह धार इन्द्री के अस्थान पर न आवे तो उस इन्द्री के भोग में कुछ भी रस न मालूम पड़ेगा। इसी तरह जितनी किताबें और इल्म और हुनर और कारीगरी वग़ैरः जो इस लोक में मनुष्य या जानवरों से ज़ाहिर हुईं या होती हैं उन सब का भंडार वही देह धारियों की सुरत है॥

६—इस से सुरत और कुल्ल मालिक राधास्वामी का आनन्द स्वरूप और ज्ञान स्वरूप होना साबित हुआ याने कुल्ल मालिक राधास्वामी सर्व्व समर्थ

और महा आनन्द और महा ज्ञान स्वरूप और हर एक घट में मौजूद हैं और यह जीव याने सुरत उन की अंश है क्योंकि जो शक्तियां कुल्ल मालिक में हैं वह इस सुरत मे भी मौजूद हैं ॥

७–कुल्ल मालिक की मौज से कुल्ल रचना हुई और हर एक सुरत अंश उसी क़ायदे के मुआफ़िक़ एक २ पिंड रच कर उस का विस्तार करती है। और पिण्ड और ब्रह्माण्ड की रचना एक सी है और एकही तौर और क़ायदे के बमूजिब होती है सिर्फ़ इतना फ़र्क़ है कि वह छोटी है और यह बड़ी है पर जो दर्जे और काररवाई बाहर की बड़ी रचना में जारी है वैसेही पिण्ड में भी है ॥

८–कुल्ल रचना धारों की है जितनी देहें हैं सब धार या तारों की बनी है जैसे कपड़ा तारों से बुना हुआ है या दरख़्त के डाले और डालियां तारों के मुट्ठे हैं इसी तरह से मनुष्य की देह धार या तारों से बनी हुई है यह एक २ तार या रग एक नल है जिन में होकर धार जारी रहती है यही बनावट कुल देह की है जब कोई बोलता है तो आवाज़ का धार के वसीले से बोल सुनाई देता है ऐसेही दृष्टा की धार के वसीले से दुनियां दिखलाई देती है ॥

९-जब कुछ रचना नहीं हुई थी तब प्रथम कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों से धार प्रघट हुई यह धार शब्द और जान और प्रकाश की धार है इसी से सब रचना ऊपर नीचे के लोकों की हुई ॥

१०-कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का तख़्त हर एक के घट में मौजूद है और वहीं से सुरत यानी जान की धार उतर कर दयाल देश याने निरमल चेतन्य देश और ब्रह्मांड और पिण्ड की रचना करती चली आई और पिण्ड में दोनों नेत्रों के मध्य में अन्तर की तरफ़ बैठ कर मन और इन्द्री और अंग २ को अपनी धारों से ताक़त दे रही है और जो कि सुरत की धार ही आनन्द और रस और सवाद और ज्ञान की धार है तो उसी के सबब से रस और आनन्द देह धारियों को इन्द्रियों के द्वारे प्राप्त होता है ॥

११-अब जो कोई चाहे कि इस धार के भंडार में जो कि पूरन आनन्द और पूरन रस और पूरन ज्ञान का ख़ज़ाना है पहुंच कर परम आनन्द और हमेशा के सुख को प्राप्त होवे तो उसको चाहिये कि इस धार को पकड़ कर उसके भंडार याने कुल्ल मालिक राधास्वामी के चरणों में लौट जाय और

सिवाय इसके और कोई जुगत या रास्ता उस भंडार के प्राप्ती का नहीं है ॥

१२–पिण्ड में मलीन माया निरमल चेतन्य के साथ मिली हुई है और इस सबब से यहां देहियों का जल्दी भाव और अभाव याने जनम मरन होता है ॥

१३–और ब्रह्माण्ड में शुद्ध माया की निर्मल चैतन्य के साथ मिलौनी है वहां की रचना की देहियों का बहुत काल पीछे भाव अभाव होता है ॥

१४–और चेतन्य देश में जो सन्तों का अथवा सच्चे मालिक का देश है सब देहियां रूहानी याने चैतन्य की बनी हुई हैं। वहां जनम मरन और काल कलेश बिलकुल नहीं है इस सब से वहां का परमानन्द और विलास सदा एक रस रहता है। इस देश की आज तक किसी मत को जो दुनियां में जारी हैं ख़बर नहीं हुई उस का हाल और वहां पहुंचने की जुगत शब्द यानो सुरत और जान की धार पर सवार होकर इस जुग में दया करके कुल्ल मालिक ने आप सन्त रूप धर के बताई। जो कोई अपना सच्चा उद्धार और सच्ची मुक्ती चाहे वह सुरत शब्द योग का अभ्यास करके निज घर में पहुंच सक्ता है।

१५–और जितनी धारें जैसे प्रान की धार और दृष्टी की धार और अमीं की धार हैं वे सब ब्रह्माण्ड याने उस देश से जहां कि निरमल चेतन्य की निरमल माया के साथ मिलौनी हुई निकली हैं। इन में से किसी धार को पकड़ कर जो कोई चलेगा वह ब्रह्माण्ड से आगे नहीं जा सकता है इस वास्ते उसका जनम मरन भी चाहे बहुत काल के पीछे होवे छुट नहीं सकता और पूरन आनन्द बे मिलौनी माया के उसको प्राप्त नहीं हो सकता ॥

१६–इस सबब से सन्तों ने क़तई हुक्म दिया है कि जो अपने जीव का सच्चा कल्यान चाहे वह शब्द की धार को पकड़ कर चले तो एक दिन अभ्यास करता हुआ निज घर में पहुंच जावेगा

१७–और मालूम होवे कि मालिक को सब कोई अरूप कहते हैं सो अरूप का ध्यान किसी तरह नहीं बन सकता पर शब्द जो उस के चरनों से प्रघट हुआ है वह भी अरूप है। उस शब्द के आसरे मालिक का ध्यान और उसकी धार को पकड़ कर उस के चरनों में पहुंचना मुमकिन है और किसी तरह से न तो ध्यान हो सकता और न मिल सकता है ॥

१८–सब मतों में कहा है कि आदि में शब्द हुआ

और शब्द ही मालिक का सरूप है और शब्द मालिक के संग है और सब रचना शब्द से हुई। फिर ज़ाहिर है कि जो कोई शब्द की धार को पकड़ कर चलेगा वह उस पद में जहां से कि आदि में शब्द प्रघट हुआ पहुंच सकता है और किसी तरह उस पद की प्राप्ती हरगिज़ २ मुमकिन नहीं है॥

१९—ऊपर की लिखी हुई दलीलों से साफ़ साबित है कि सिवाय सुरत शब्द के अभ्यास के और कोई जुगत धुर पद में पहुंचने याने सच्चे मालिक से मिलने की नहीं है और जो कि शब्द की धार ही जान और सुरत या रूह की धार है और सुरत या जान से (जो कि कुल्ल रचना की पैदा करने वाली और चेतन्य करने वाली और पालन करने वाली है) बढ़ कर और कोई धार नहीं है तो इस से साबित हुआ कि शब्द योग से बढ़ कर और कोई जुगत सच्चे मालिक से मिलने की रचना भर में नहीं है। अब जीवों को इख्तियार है चाहे इस बात को मानें या न मानें। पर जो कोई सच्चा खोजी और दर्दी परमारथ का है वह तो संतों के बचन के मुआफ़िक़ सुरत शब्द योग का अभ्यास करेगा और

जिन के मन में इस लोक या परलोक के भोगों और मान बड़ाई की चाह है वे लोग संतों के बचन को नहीं मानेंगे और अनेक रस्ते और जुक्तियां जो पिण्ड के ऊंचे देश में अथवा ब्रह्माण्ड में पहुंचने की हैं उन्हीं में भरमते और भटकते रहेंगे और उन्हीं देशों के आनंद को परम आनन्द और वहां के मालिकों को सच्चा मालिक मान कर उसके आगे जोकि संतों का देश है और जहां सच्चे मालिक का दर्शन प्राप्त हो सक्ता है चलने और पहुंचने की इच्छा नहीं करेंगे बल्कि जो उनको समझौती दी जावेगी तो बजाय मानने के बाद विवाद करेंगे और तकरार झूंठी और बेफ़ायदा उठा कर सन्त बचन की परतीत नहीं लावेंगे और ऐसे जीवों के वास्ते संतमत का उपदेश भी नहीं है ॥

२०–जब कि सतसंग में निरनय करके सच्चे परमार्थी को इन तीन बातों का निश्चय हुआ कि (१) राधास्वामी दयाल कुल्ल और सच्चे मालिक सर्व्व समरथ हैं (२) और जीव उन को अंश है (३) और सुरत शब्द योग की कमाई से जीव काल और माया देश से न्यारा होकर अपने निज घर याने दयाल देश में पहुंच सकता है और किसी तरह

नहीं, तब उसको चाहिये कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की सरन दृढ़ करके और संत मत के भेदी से जुगत सुरत शब्द योग की दरियाफ़्त करके इसी अभ्यास को जितना बन सके नेम से रोज़मर्रा करता रहे और उनकी दया को अपने अंतर में परख करता हुआ चले और अपने मन और इन्द्रि-यों की चाल की भी निरख करता रहे और जब तब चरणों में वास्ते प्राप्ती दया के प्रार्थना करता रहे तो राधास्वामी दयाल की मेहर से दिन २ उसका कारज बनता जावेगा और प्रीति और परतीत चरनों में बढ़ती जावेगी और उनकी दया से एक दिन कारज पूरा हो जावेगा इस तरह हर एक सच्चा परमार्थी अपने जीव का कल्यान राधास्वामी दयाल की दया के बल से कर सकता है और जीते जी कोई दिन अभ्यास करके अपने सच्चे उद्धार का सबूत अंतर में देख कर उसका पूरा यक़ीन और विस्वास कर सकता है और ज्यों ज्यों ऐसी परतीत बढ़ती जावेगी उसके साथही प्रेम भी बढ़ता जावेगा और एक दिन प्रेम सिंध या सच्चे मालिक से मेला हो जावेगा और फिर जनम मरन और काल कलेश से पूरा छुटकारा हो जावेगा।

बचन सोलहवां

बरनन दर्जों का जो सन्तों ने रचना में मुक़र्रर किये हैं और बड़ाई संत मत की

१-राधास्वामी दयाल ने जो दर्जे रचना में वर्णन किये हैं अथवा जो अस्थानों का भेद दिया है उस को सही मानना चाहिये और उसकी परतीत करके उसके मुआफ़िक़ अभ्यास में चाल चलनी चाहिये और धुर अस्थान का पूरा २ यक़ीन करके वहां के पहुंचने का इरादा सच्चा और पक्का मन में धरना चाहिये।

२-एक दृष्टांत दिया जाता है उस से हाल कुल्ल दर्जों का जो राधास्वामी दयाल ने वरनन किये हैं अच्छी तरह समझ में आ सक्ता है। तिल का जो दरख़्त है उस के देखने से मालूम होता है कि उसकी जाहिरी सूरत अस्थूल रूप में दाख़िल है और अंतर में जो अर्क़ कि जड़ से डाली और पत्तों तक रगों में होकर जारी रहता है वह उस का सूक्षम रूप है और बीज उसका कारन रूप है और जिस वक़्त कि बीज को पेला यानी उसका

मथन किया तब उस से तेल प्रघट हुआ और अस्थूल और कारन रूप के खोल खल रूप होकर जुदा हो गए। यह तेल तुरिया रूप है। जब उस का भी मथन किया गया यानी उसको रोशन किया तब उसकी रोशनी की लौ में यह दर्जे ज़ाहिर होते हैं।

(१) पहिले सफ़ेद और साफ़ रोशनी। यह दयाल देश का रूप है और इस का जो अख़ीर सिरा ऊपर की तरफ़ को है वह सुन्न के मुक़ाम से मुवाफ़िक़त रखता है या वह सुन्न के अस्थान का वाचक है और बाक़ी सफ़ेद रोशनी में दयाल देश की रचना के दर्जे गुप्त है।

(२) और जहां से कि सफ़ेदी के ऊपर सुर्ख़ी शुरू हुई वह त्रिकुटी का नमूना है।

(३) और जहां से कि सुर्ख़ी के ऊपर ज़र्द रोशनी सब्ज़ी मायल शुरू हुई वह सहसदलकंवल का नमूना है।

(४) और जहां से कि सियाही मायल रोशनी शुरू हुई और फिर धुआं वग़ैरः वह पिण्डी रचना का वाच रूप है।

(५) इस दृष्टांत में कुल दर्जे रचना के जो कि संतों ने पिण्ड के ऊपर ब्रह्माण्ड और दयाल देश में

बरनन किये हैं साफ़ नजराई देते हैं और पिण्ड के दर्जे बीज और दरख़्त रूप में ज़ाहिर हैं और उनका सूक्ष्म मसाला उस सियाही मायल रोशनी और धुएं वग़ैरः में मौजूद है ॥

३-खोजी और समझने वाले परमार्थी को इस दृष्टांत से कुल दर्जों का जो पिण्ड ब्रह्माण्ड और दयाल देश मे बयान किये गये है पूरा २ यक़ीन आ सक्ता है और इस दृष्टांत के समझने में नजर उन रूपों पर कि जिनका हाल लिखा गया है रखनी चाहिये और इधर उधर ख़याल को नहीं फैलाना चाहिये ॥

४-इस दृष्टांत से सिर्फ़ इसी कदर मतलब है कि उस से सुर्त के अस्थूल सूक्ष्म और कारन देह का स्वरूप समझ में आ जावे और फिर जो स्वरूप कि सुर्त ने ब्रह्माण्ड में उतार के वक्त़ सुन्न से सहस-दलकंवल तक धारन किये है उन की कैफ़ियत भी मालूम हो जावे और फिर यह भी मालूम हो जावे कि दयाल देश और उसके रचना के दर्जे सही है और वह देश पिण्ड और ब्रह्माण्ड के ऊपर है ।

५-दयाल देश की रचना निहायत दर्जे की सूक्ष्म और लतीफ़ है। इसके दर्जों का तमीज़ इन आंखों

से उस सफ़ेद रोशनी में जुदा २ नहीं हो सक्ता पर उस सफ़ेदी में वह दर्जे ज़रूर गुप्त हैं।

६—एक दृष्टांत और दिया जाता है। उस से भी इसी क़ायदे पर दर्जों की समझ थोड़ी बहुत आ सक्ती है पर इस में वह दर्जे ऐसे साफ़ नहीं मालूम होते जैसे कि तिल और उसके तेल के दृष्टांत में और यह दृष्टांत गांडे का है इस में जड से शुरू करके अख़ीर पोरी तक तीन बड़े दर्जे हैं। पहिले दर्जे में इस का अर्क़ बिल्कुल मीठा है और खारी पन नहीं है और दूसरे दर्जे में थोड़ा २ खार शुरू हुआ और तीसरे दर्जे में खार ज्यादा है और मिठाई कम। फिर हर एक दर्जे में मुवाफ़िक़ उसकी पोरियों के कितने ही दर्जे हैं कि वह अस्थानों से जैसा कि संतों ने तीन बड़े दर्जे रचना में यानी दयाल देश और ब्रह्माण्ड और पिंड में बरनन किये है मुवाफ़क़त रखते हैं और पहिले दर्जे में भी जो बिलकुल मीठा है कई दर्जे हैं और उनकी जांच उस की मिठाई के दर्जों से हो सकती है। इसी तरह दूसरे और तीसरे हिस्सों में भी दर्जे मिठाई या कि मिलौनी खार के साफ़ मालूम होते हैं ऐसेही कुल्ल रचना में और हर एक पिण्ड में तीन बड़े दर्जे और फिर हर एक दर्जे

में छोटे दर्जे मुवाफ़िक़ उसी क़ायदे के जो संतों ने बयान किया है गुप्त या प्रघट मौजूद हैं ॥

७–तिल और तेल के दृष्टांत में पिण्ड और ब्रह्माण्ड और दयाल देश के अस्थान रोशनी रूप में बहुत अच्छी तरह रंग और रूप के साथ आंखों से नज़र आते हैं और इस दृष्टान्त से सच्चे खोजी को अच्छी तरह से यक़ीन संतों के बचन का हो सक्ता है और कुल्ल रचना में वह इन्हीं दर्जों की पहिचान गुप्त या प्रघट कर सक्ता है क्योंकि कुदरत का क़ानून और क़ायदा सब जगह और हर एक पिंड में बड़ा हो या छोटा थोड़ी कमी बेशी के साथ एकसां है और यही सबूत संतों के मत की उंचाई और गहराई और पूरेपन का है ॥

८–इस से साबित होता है कि संतों का मत कुदरती है और उस में किसी तरह की बनावट यामन और बुद्धी की चतुराई और छल बल को दख़ल नहीं है और जितना काररवाई उस की है कुदरती क़ानून के मुवाफ़िक़ है। पर मन और माया के क़ानून के बरख़िलाफ़ है क्योंकि इनका मैलान और झुकाव बाहर और नीचे की तरफ़ है और इसी सबब से सब जीवों की सुर्त माया की रचना में और

पिन्ड के नीचे के अंगों में फैल कर फंस गई। अब जो कोई सन्तों के बचन के मुवाफ़िक़ अपने निज घर की यानी दयाल देश की (जहां से कि आदि में धार प्रगट होकर ब्रह्माण्ड और पिन्ड की रचना करती हुई उतर आई) सुध लेकर और इन बड़े दर्जों की रचना का और हर एक छोटे दर्जे का जिन को अस्थान करके बरनन किया है भेद लेकर उसी धार पर (जो कि शब्द की धार है) सवार होकर कुल भंडार यानी राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रेम अंग के साथ चलै तो मन और माया की हद्द से पार होकर एक दिन दयाल देश में पहुंच कर अमर आनंद को प्राप्त होगा॥

९—और मालूम होवे कि माया की हद्द में जो दर्जे हैं यानी पिन्ड और ब्रह्माण्ड में चलने वाली सुर्त को जरूर मन और माया से मुक़ाबिला करक़े उसके बल को राधास्वामी दयाल की दया की ताक़त लेकर तोड़ना पड़ेगा यानी उसके रुख़ को जो नीचे और बाहर की तरफ़ को झुकाव रखता है जरूर उलटाना पड़ेगा। यह काम अलबत्ता मुश्किल है पर राधास्वामी दयाल की दया से जो उनके चरणों का प्रेम पैदा हो जावे आसानी से आहिस्ता २ बन सक्ता है॥

१०–जो जीव कि माया के भोग और बिलास में फंस गए और उसी की आसा और मंसा दिल में रखते हैं उनका छूटना उनके पंजे से मुश्किल है क्योंकि वे सन्तों के बचन को नहीं मानेंगे और न उनके हुक्म के बमूजिब काररवाई यानी अभ्यास करने को तैयार होंगे इस वास्ते ऐसे जीव जाहिरी और विद्या बुद्धी के परमार्थ में अटक कर रह गए और सच्चे परमार्थ की कमाई उन से न हो सकी यही सबब है कि दुनियां में कसरत इसी क़िस्म के जीवों की है और उन्हों ने अपने मन और इच्छा के मुवाफ़िक़ विद्या और बुद्धी से वहुत से मत गढ़ लिए और उसी में राज़ी और मगन हैं और नतीजे से बिलकुल बेख़बर हैं और जो सच्चे परमार्थ का हाल उन से कहा जावे तो बजाय मानने के अपनी ओछी समझ से उसमें दोष निकालने को तैयार होते हैं और अपना असली नफ़ा और नुक़सान नहीं बिचारते हैं ॥

११–यहां पर यह बात बयान करना ज़रूर है कि सिवाय सन्त मत के जितने मत कि दुनियां में जारी हैं वह या तो ब्रह्म और ईस्वर के (जिस को सन्त ब्रह्माण्डी मन कहते हैं) या पिन्डी मन और

बुद्धि के बनाये हुए हैं और इन दोनों का असली झुकाव बाहर और नीचे की तरफ़ है यानी निज घर का भेद और पता इन मतों में बिलकुल नहीं है और न चलने की जुगत का ज़िक्र है ॥

१२–और जो इन की (यानी मन और माया की) हद्द में किसी दर्जे के हासिल करने के लिये किसी २ मत में हिदायत भी है तो उसके चलने की जुगत ऐसी मुश्किल राह से बताई गई है कि जिस की काररवाई आम तौर पर मुमकिन नहीं है यानी पिन्ड और ब्रह्माण्ड में भी आला दर्जा किसी को हासिल नहीं हो सक्ता और इसी सबब से किसी का सच्चा उद्धार क़तई नहीं हो सक्ता यानी जनम मरन और देहियों के साथ बंधन नहीं छूट सक्ता ॥

१३–सन्त किसी पर जब्र और ज़बरदस्ती नहीं करते और न किसी को लोभ और लालच दिखलाते हैं सिर्फ़ बचन सुनाकर निज घर का भेद और उसके पहुंचने की जुगत समझाते हैं। जो कोई माने तो उस को मदद देकर निज घर में पहुंचने का अभ्यास कराते हैं और पहुंचाते हैं और जो न माने तो उन पर उनके आइन्दा की बेहतरी के वास्ते दया की नज़र फ़र्माते हैं पर उन के मौजूदा हालत के बदलने

के वास्ते किसी तरह का ज़ोर या दबाव नहीं डालते ॥

बचन सत्रहवां

मालिक के चरनों में भय भाव और अदब

१–दुनियां में सब कोई पुर्ष और स्त्री और लड़के अपने अपने बड़ों का भय भाव और अदब करते हैं जैसे स्त्री पति का, पुत्र और पुत्री माता और पिता का, लड़के उस्ताद और शिक्षा देने वाले का, नौकर अपने हाकिम और मालिक का, वग़ैरा २। और ये लोग जो काम या चाल या व्योहार जो इन के बड़ों के मर्ज़ी के मुवाफ़िक़ नहीं है या उन के नापसन्द है नहीं करते और उनके डर से ऐसे कामों में प्रवृत नहीं होते इसी तरह सिवाय अपने बड़ों के लोग अपनी अपनी बिरादरी और फ़िरक़े का भी ख़ौफ़ और ख़्याल रखते हैं कि कोई चाल ऐसी न चलें कि जिस्में बिरादरी और फ़िरक़े के लोग नाराज़ होकर तान न मारें और जो कोई जिस संगत या जलसे में शामिल होता है उस संगत या जलसे के क़ायदे के मुवाफ़िक़ अपना बर्ताव करता है नहीं तो उस संगत या जलसे में रहने के लायक़ नहीं समझा जाता है और जो समझौती न माने तो निकाल दिया जाता है ॥

२—जब दुनियां की सब काररवाई में लोगों का ऐसा बरताव है तो सतसंग में जो मालिक का घर और जहां उसके मिलने की जुगत और रास्ता बताया और कमाया जाता है किस क़दर सफ़ाई और सचौटी और होशियारी और प्रीत के साथ बरताव और व्यौहार परमार्थियों का (जो उस सतसंग में दाख़िल होवें) होना चाहिये याने हर हाल में यह ज़रूर और मुनासिब मालूम होता है कि उन का चाल चलन और व्यौहार अपने अपने दर्जे के मुवाफ़िक़ किसी क़दर दुनियांदारों के चाल चलन से जुदा होना चाहिये यानी दुनियां के लोग तो अकसर अपने मन और मतलब के मुवाफ़िक़ काररवाई करते हैं और उसमें किसी के दुखी सुखी होने का ख़्याल बहुत कम करते हैं पर परमार्थी को चाहिये कि दुनियां के कामों में अपने ज़ाती फ़ायदे के वास्ते किसी को दुख और तकलीफ़ न पहुंचावै और दूसरों के औगुन देखने और सुनने और उनको मशहूर या प्रघट करने की आदत छोड़ता जावे और बरताव अपना हर एक के साथ सचौटी से रक्खे और किसी को धोखा न देवे । इतना फ़र्क़ सतसंगी और संसारी लोगों के चाल और चलन में जब से कि वे सतसंग में आये

और सच्चे मालिक और सन्तों के वचन सुने और समझे ज़रूर आहिस्ता आहिस्ता होना चाहिये और नाक़िस जगह और नाक़िस कामों और नाक़िस सोहबत से परहेज़ करे इसी तरह जितने बिकारी अंग हैं उनमें सतसंगी प्रेमी का बरताव बनिस्बत संसारी लोगों के दिन दिन कम होना चाहिये और यह बात ठीक ठीक जब बन आवेगी कि जब उस के मन में सच्चे मालिक का (जिस के चरनों में वह पहुंचना चाहता है और इस कारण उससे प्रीत लगाई है) सच्चा ख़ौफ़ और सच्चा प्यार और सच्चा अदब थोड़ासा भी होगा। और यह ख़ौफ़ और प्यार और अदब जो उसने मालिक को मालिक जाना है थोड़ा २ करके ज़रूर मन में पैदा होना चाहिये॥

३-इसमें कुछ शक नहीं कि पुराने सुभाव और संग का असर बहुत देर में बदलता है और जिस क़दर जिसकी उमर दुनियां में दुनियांदारों के संग गुजरी है उसी क़दर संसारी सुभाव और संसारियों के संग का असर उस के मन में धसा हुआ है और जिस क़दर सतसंग सच्चे प्रेमी और भक्तों का और अन्तर में अभ्यास सुरत का मन और इन्द्रियों के घाट से हटने का होता जावेगा और समझ बूझ

गहरी परमारथ की आती जावेगी उसी क़दर पुरानी चाल ढाल बदलती जावेगी और यह काम आहिस्ता आहिस्ता होगा ॥

४–हर एक सतसंगी को, चाहे स्त्री होवे या पुर्ष, यह बात हमेशा याद रखनी चाहिये कि जब से वह सतसंग में शामिल हुआ तब से उसका जन्म बदलना शुरू हुआ और उस के साथ उस की रहनी और बरताव परमार्थियों के मुवाफ़िक़ थोड़े बहुत होने चाहिये। ऐसी काररवाई जल्दी नहीं हो सक्ती पर जिस की चाह सच्ची है और इरादा मालिक की प्रसन्नता हासिल करने का सच्चा और पक्का है तो उसकी हालत आहिस्ता आहिस्ता ज़रूर बदलती जावेगी ॥

५–भूल और चूक सब से होती है और जब तक कि अन्तर और बाहर के सतसंग का असर थोड़ा या बहुत मन और बुद्धि पर न होगा तब तक मन और इंद्रियां पुराने सुभाव के मुवाफ़िक़ अकसर काररवाई करेंगी पर उस के पीछे जो सोच और समझकर पछतावा और अफ़सोस और लज्जा मन में आवे वह भी एक दर्जे की दया समझनी चाहिये और वह दया आहिस्ता आहिस्ता एक दिन बिकारी

अंगों की काररवाई और बरताव से हटा देवेगी ॥

६–हर एक सतसंगी को समझना चाहिये कि जब दुनियां के बड़ों का इस क़दर डर और अदब माना कि जो काम उनके नापसंद हैं उनको नहीं करता है तो सच्चे मालिक का जो सब बड़ों का बड़ा है और जिस के प्रसन्न होने से सब दुख और क्लेश दूर होकर हमेशा का सुख और आनन्द प्राप्त हो सक्ता है और जिस की अप्रसन्नता से जन्मान जनम महा दुख और कलेश का भागी होगा। किस क़दर डर और अदब मन में रख कर अपनी चाल और व्योहार को दुरुस्त करना चाहिये ॥

७–जो कोई सतसंग मे शामिल होकर और मालिक का ख़ौफ़ न करके संसारियों के मुवाफ़िक़ या पिछले सुभाव के अनुसार बरतता है तो जानना चाहिये कि उसने मालिक को मालिक न समझा और वह उसकी समर्थता और कुदरत का ख़ौफ़ दिल में न लाया। और फिर उसकी ग़रज़ ही मालिक से मिलने और अपने सच्चे कल्यान करने की बहुत कम है तो फिर वह कैसे प्रेम और भक्ती की दौलत को पा सकता है और भजन और अभ्यास का रस भी बहुत कम मिलेगा

और मन और इन्द्रियां हमेशा उस पर सवार रह कर उसको भरमाती और भटकाती रहेंगी ॥

८—जो कोई नाक़िस कामों के करने में मालिक का डर जैसा चाहिये मन में नहीं लाता (इस सबब से कि मालिक नहीं दीखता) तो भक्त और प्रेमी जन जो सतसंग में मौजूद हैं उन का डर और लज्जा जैसे कि लोग अपनी बिरादरी और फिरक़े का रखते हैं ज़रूर दिल में आना चाहिये और इस डर और लज्जा से भी बहुत बचाव मुमकिन है और जो ऐसा भी नहीं होता याने सतसंगी का भी ख़ौफ और शरम किसी के मन में नहीं आता तो मालूम करना चाहिये कि जिसकी ऐसी हालत है वह परमार्थी भी नहो है या निहायत दर्जे का नादान और अपने परमार्थी नफ़े और नुक़सान से बेख़बर है। ऐसे लोग नाक़िस चाल चलन से संगत को लाज लगाते हैं। इस वास्ते हर एक परमार्थी को जो सतसंग में दाख़िल हुआ है इस बात का सोच और बिचार ज़रूर चाहिये कि मैं पहिले किस ग़ोल या संगत में था और अब किस सोहबत में दाख़िल हुआ और इस सोहबत का कैसा बरताव और क्या क्या क़ायदे हैं और कोशिश करना चाहिये कि जहां तक बन सके उन क़ायदों और बर-

ताव के मुवाफ़िक़ थोड़ी बहुत काररवाई शुरू करे नहीं तो उसका परमार्थी संगत में शामिल होना बे फ़ायदा है ॥

९–जो कोई कहे कि मन और इन्द्रियां बड़े जबर हैं उन से बस नहीं चलता तो ख़याल करो कि ऐसे ही मन और इंन्द्रियां लड़कियों और लड़कों और मर्दों की ज़बर थीं पर जब से लड़कियों की शादी हुई और लड़के उस्ताद के सुपुर्द हुए और मर्द हाकिम के नीचे काम करने लगे तब से अपने तन मन और इन्द्रियों की चाह और शौक़ को नीचे डाल कर अपने अपने बड़ों के हुकुम में बरतने लगे फिर जो परमार्थी कहलाते हैं वे गुरू और मालिक और सतसंगियों का जरा भी ख़ौफ़ न करके जो पुरानी चालों में बरतते रहें तो वे कैसे परमार्थी समझे जावें और कैसे यक़ीन होवे कि उन्हों ने गुरू और मालिक को बड़ा समझा और सतसंगियों और प्रेमी जनों को अपनी बिरादरी क़रार दिया ॥

१०–ऐसे लोग जो सतसंग में पड़े रहेंगे तो कुछ थोड़ा परमारथ उनको हासिल होगा और वह सिर्फ़ दया से मिलेगा पर बहुत देर और कुछ कष्ट और कलेश के बाद क्योंकि उनके मन और इन्द्रियां सीधी

तरह चलना नहीं चाहते और बिना दंड पाये दुरुस्त नहीं होंगे ॥

बचन अठारहवां

जो लोग कि सिवाय संत मत के अभ्यास के और २ काम परमार्थी कर रहे हैं उनको क्या फ़ायदा होगा ॥

१–जो परमार्थी काररवाई आज कल दुनियां में जारी है वह या तो [१] कर्मकाण्ड या दान पुण्य [२] या तीरथ और मूरत और निशानों की पूजा [३] या ब्रत [४] या नाम का जाप [५] या हठ जोग [६] या प्राणायाम [७] या ध्यान [८] या मुद्रा की साधना [९] या बाचक ज्ञान [१०] या पोथी और ग्रन्थ का पाठ करना और मन से अस्तुत गाना और प्रार्थना करना वग़ैरः हैं। इन साधनों से संतों के बचन के मुवाफ़िक़ जीव के सच्चे उद्धार की सूरत नज़र नहीं आती क्योंकि इन कामों में मालिक के चरनों का प्रेम और उसके दर्शन की चाह बिल्कुल नहीं पाई जाती। अब हर एक का हाल थोड़ा सा लिखा जाता है ॥

१–कर्मकाण्ड और दान पुन्य

जो जीव कि इन कामों में बर्त रहे हैं चाहे जिस मत में होवें उनका मतलब इन कामों के करने से या तो इस दुनियां के सुख और मान बड़ाई और धन और सन्तान की प्राप्ती और बृद्धी का है या बाद मरने के स्वर्ग या बैकुंठ या बहिश्त में सुख भोगने का। इन के मत में न तो सच्चे मालिक का खोज और पता है और न उसके मिलने की जुगत का ज़िकर है जितने काम कि यह लोग करते हैं सब बाहरमुखी हैं और उनका सिलसिला अंतर में सुरत और शब्द की धार के साथ बिल्कुल नहीं इस सबब से इन कामों में जीव का सच्चा उद्धार नहीं हो सक्ता ॥

२–तीरथ मूरत और निशानों की पूजा

जो लोग कि इन कामों में लगे हैं उन के मन में थोड़ी बहुत प्रीत और प्रतीत अपने इष्ट की रहती है पर उसकी तरक़्क़ी नहीं होती और संसार की मुहब्बतें उस प्रीत पर हमेशा ग़ालिब रहती हैं यानी इष्ट की प्रीत का मुक़र्ररा वक़्तों पर थोड़ा बहुत

ज़हूर होता है और थोड़ा बहुत तन मन धन भी उसके निमित्त लगाया जाता है और विशेष करके इस काम के करने में आसा संसार के पदार्थों के प्राप्ती की रहती है और बहुत कम जीव हैं जो मुक्ती की चाह लेकर इन कामों को करते है। यह लोग अपने इष्टके भेद से कि वह कैसा है और कहां है और कैसे उसकी प्राप्ती होगी बेखबर हैं और यह भी नहीं जानते कि सच्ची मुक्ती का क्या स्वरूप है। और पहिले तो यह कसर है कि उनके इष्ट कृत्तिम यानी पैदा किये हुए हैं और इस वजह से कोई मुद्दत उनके उमर और ठहराव और उनके मुक़ाम की मुक़र्रर है। जो कोई अपने इष्ट के धाम तक भी पहुंचा तो भी परलय या महा परलय के समय में उनका और उनके इष्ट का अभाव हो जावेगा और फिर रचना में आवेंगे। भक्ती के वास्ते चार बातों का जानना ज़रूर है। (१) अपने इष्ट का असली नाम (२) और रूप (३) और धाम (४) और वहां पहुंचने का रास्ता और जुगत। सो इन बातों से मूरत और निशानों की पूजा करने वाले बिल्कुल बेख़बर दिखलाई देते है और जब ऐसा हाल है तो उनकी भक्ती ऊपरी रहेगी और अपने इष्ट के धाम में पहुंचना भी नहीं बन सक्ता।

यह सब लोग टेकी हैं और जो कुछ कि यह अपने इष्ट के निमित्त तन मन धन थोड़ा बहुत लगाते हैं वह शुभ करम में दाख़िल होकर उसका फल थोड़ा बहुत सुख इस दुनियां में या स्वर्ग लोक या पित्र लोक वग़ैरह में मिल जाता है ॥

३—ब्रत ।

ब्रत धारन करने से किसी क़दर सफ़ाई और सुबकी (हलकापन) तन मन की हो सक्ती है पर शर्त यह है कि क़ायदे के साथ उसकी काररवाई की जावे और जब कि बजाय भूखे रहने और जागरन और सुमिरन और भजन करने के उमदा २ खाने फल अहार के नाम से बनाकर खाये जावें और बाक़ी वक़्त सोने और दुनियां के दिल बहलाव के कामों में ख़र्च किया जावे तो बजाय हासिल होने परमार्थी फ़ायदे के और नुक़सान होने का ख़ौफ़ है। यह भी एक तरह का संजम वास्ते अभ्यासी परमार्थी लोगों के मुक़र्रर किया गया था पर इस ज़माने में सिर्फ़ बर्त रखने पर मुक्ती का हासिल होना ठहराया गया है सो यह बात सही नहीं मालूम होती और

ऐसा ख़्याल दिल में बांधना एक क़िस्म का भरम है। जो यह काम किसी से दुरुस्त बन पड़ा और वह शख़्स अभ्यासी नहीं है तो इस का फल यानी थोड़ा सुख उस को इस लोक में या परलोक में मिल जावेगा पर मुक्ती का प्राप्त होना या इष्ट के धाम में पहुंचना वर्त रखने से मुमकिन नहीं मालूम होता। और जो कोई अभ्यासी व्रत रक्खेगा तो उस के अंतर में सफ़ाई और अभ्यास मे किसी क़दर आसानी होगी पर सच्चा उद्धार बग़ैर संतों के अभ्यास सुरत शब्द योग के किसी सूरत में नहीं हो सक्ता है॥

४—नाम का जाप।

१—आज कल जो लोग नाम का जाप करते हैं वह बहुत करके [१] जबानी नाम लेते हैं और मन और चित्त और दृष्टि उनके उस वक़्त डामा डोल रहते हैं यानी सुमिरन में शामिल नहीं होते हैं। इस सबब से ऐसे सुमिरन से सिवाय थोड़ी सफ़ाई के और कुछ हासिल नहीं होगा। [२] कोई २ मानसी सुमिरन करते हैं पर उस में नामी का पता और भेद धाम का नहीं यानी बे ठिकाने सुमिरन करते

हैं। [३] इसी तरह स्वांसा के साथ यानी दम के आते जाते वक्त बाज़े नाम लेते है और [४] कोई २ नाम की ज़रब दिल पर लगाते हैं चाहे आवाज़ बुलंद (ऊंची) के साथ चाहे हलकी आवाज के साथ नाम लेते हैं॥

२–यह सब नामी और उसके धाम के पते और भेद से बेख़बर हैं और इस सबब से सिवाय सफ़ाई या किसी २ को थोड़ी सिद्धी के सिवाय और कुछ फ़ायदा हासिल नहीं हो सक्ता है यानी न तो नामी के अस्थान में पहुंच सक्ते हैं और न उसका दीदार और दर्शन पा सक्ते हैं। और जो कि उनका घाट नहीं बदलता इस वास्ते न तो उनके मन में प्रेम प्रघट होता है और न उनका सच्चा उद्धार होना मुमकिन है॥

३–संतों ने नाम की बहुत महिमां करी है और यह कि बग़ैर गुरू और नाम के किसी का उद्धार नहीं होगा पर उनका नाम सच्चे मालिक का धुन्यात्मक नाम है और उसका अभ्यास यह है कि मन चित्त से नाम की धुन को जो घट २ में हो रही है सुनना और धुन की डोरी पकड़ के नामी के सनमुख पहुंचना। जब तक ऐसा न होगा गहरा प्रेम मन में

नहीं आवेगा और न हालत बदलेगी और न सच्चा उद्धार यानी मन माया के देश से जुदाई होगी और संत नामी के धाम का रास्ता और अस्थानों का भेद वग़ैरः समझाते हैं ॥

५—हठ जोग ।

१—इस से मतलब यह मालूम होता है कि हठ करके अपने अंग २ को तोड़ना और मोड़ना और साफ़ रखना और फ़ायदा उसका यह है कि तन और उसके अंगों की सफ़ाई और तनदुरुस्ती हासिल होवे । पंच अग्नी तपना, और जल सेवन करना, खड़े रहना, मौन साधना, नंगे रहना, नेती, धोती, और बसती क्रिया करना, और कीलों पर या मैदान में बैठना, और उलटे लटकना वग़ैरः २ यह सब काम हठ जोग में दाख़िल हैं । इन के करने से थोड़ी सफ़ाई अंतर की हो सकती है पर न तो वह सफ़ाई क़ायम रह सक्ती है और न मालिक के चरनों का प्रेम दिल में पैदा हो सक्ता है बल्कि बजाय उसके अहंकार और मान और अपनी अस्तुत और बड़ाई की चाह बहुत ज़बर मन में समा जाती है और अक्सर लोग इन में से बहुत से काम चौराहों पर और मेलों और तमाशों में सड़क पर आम तौर से करते हुए नज़र आते हैं

और ज़ाहिरा उनका मतलब धन पैदा करना और अपनी अस्तुत कराना मालूम होता है ॥

२-पिछले वक्तों में यह काम अस्थूल शरीरधारी और अस्थूल बुद्धिवाले जीवों की दुरुस्ती के लिये संजम के तौर पर जारी किये गये थे यानी उस वक्त के बुजुर्गों ने जैसी २ जिसकी हालत देखी उसकी सफ़ाई और अस्थूलता के दूर करने के लिये और आहिस्ता २ ऊंचे साधन जैसे अष्टांगयोग यानी प्राणायाम या मुद्रा के साधन के लिये तैयार करने के वास्ते इन कामों की हिदायत की थी पर समझना चाहिये कि यह सब काम जो उन्हों ने बताये एक २ अंग के साधन के वास्ते थे और यह निहायत अस्थूल तरीक़ा नये सीखनेवालों के लिये जारी किया था कि जिस्से बरसों तक सफ़ाई कराते रहे और फिर भी बहुत कम जीव ऐसे निकले कि जिन से यह साधन बन पड़े और फिर वे ऊंचे साधन में लग गये बल्कि ऐसा हुआ कि एक २ साधन में सब के सब अटक कर रह गये और उसी को परमार्थ समझकर और लोगों की वाह २ और बड़ाई सुनकर मगन हो गये और जगत को अपने साधनों को तमाशे के तौर पर दिखाकर अपने रोज़गार की

सुरत निकाली और अहंकार बढ़ाकर जो सफ़ाई का उस साधन से मतलब था उसको भी खो बैठे और अहंकार और लोभ की मलीनता और पैदा करली ॥

३—इन कामों के करनेवालों के मन में जरा भी प्रेम मालिक का नहीं आता और न उसके मिलने की ख़्वाहिश रखते हैं फिर ऐसे जीवों का उद्धार कैसे होवे। इस करनी का फल चाहे मान बड़ाई और धन इसी जनम में इसी लोक में पावें या थोड़ा सुख अपनी २ सफ़ाई के मुवाफ़िक़ परलोक में यानी स्वर्ग वग़ैरह में हासिल करें या अपनी चाह के मुवाफ़िक़ दूसरे जनम में राजा या हुकूमतवान या धनवान होकर दुनियां का भोग बिलास करें ॥

६—प्राणायाम यानी अष्टांग जोग।

इस जोग के अभ्यासी जोगी और जोगेश्वर कहलाते हैं। इस में प्राणों की साधना इस तौर से की जाती है कि मूल द्वार से प्राणों को चढ़ाते हैं और बीच के चक्रों को बेधकर छठे चक्र में पहुंचाकर चिदाकाश में जो छठे चक्र के ऊपर है लय करते हैं। यह अभ्यास बहुत कठिन है और इसके संजम भी बहुत कठिन हैं और ज़रासी बदपरहेज़ी और भूल चूक में ख़ौफ़ सख़्त बीमारी या मरजाने का है। बहुत

कम ऐसे लोग हुए कि पिछले वक़्त में यह साधन उनसे बन पड़ा पर हाल के वक़्त में ज़ाहिरा कोई बिरला होगा कि जिस से यह अभ्यास थोड़ासा बनता होगा नहीं तो चार छः महीने या एक बर्ष कुछ साधना करके इस जोग के अभ्यासी या तो बीमार हो जाते हैं या ख़ौफ़ के मारे और नाकाम-याबी (काम पूरा न होने) के सबब से छोड़ देते हैं ॥

इस अभ्यास में त्याग बैराग और पुरुषार्थ पर ज़्यादा ज़ोर दिया है और मालिक के चरनों की भक्ती और प्रेम की मुख्यता नहीं है। जिस किसी से यह अभ्यास पूरा २ बन आया तो वह सहसदलकंवल में पहुंच कर रह गया या उसके नीचे चेतन्य आकाश में लै हो गया और यह मुक़ाम वह है कि जहां से संतों का अभ्यास शुरू होता है और इसके ऊपर सात मुक़ाम तै करके सच्चे मालिक के धाम यानी राधास्वामी पद में पहुंचना होता है। फिर जोगी और जोगेश्वरों को सच्चे मालिक का भेद और पता नहीं मिला और न उनको सच्चे उद्धार का दरजा हासिल हुआ ॥

अब समझना चाहिये कि जब कि चारों जुग में प्राणायाम की मुख्यता रही और बग़ैर इस अभ्यास

के ब्रह्मपद भी किसी को (सिवाय उन बिरले शख़्सों के जिन से यह अभ्यास पूरा २ बन आया) प्राप्त नहीं हुआ तो जाहिर है कि जोग मत के बमूजिब किसी को भी और खास कर ग्रहस्तियों को उसका सिद्धांत हासिल नहीं हुआ तो सब जीव आवागमन के चक्कर में रहे और किसी का भी कल्यान नहीं हुआ और संतों के पद की जो कि उनके सिद्धान्त पद के सात दरजे ऊपर है और बग़ैर जहां पहुंचने के सच्चा उद्धार किसी का नहीं हो सकता किसी को ख़बर भी नहीं हुई और न सुरत शब्द का हाल जिन से कुल्ल रचना प्रघट हुई और जारी है किसी को अब तक मालूम पड़ा। फिर जोगी और जोगेश्वर और आम लोग सन्तों की और उनके अभ्यास की महिमा कैसे जान सक्ते हैं॥

७—ध्यान

ध्यान करनेवालों की तीन क़िस्म हैं। [१] जो मालिक को अरूप समझकर और आकाशवत व्यापक मानकर ध्यान करते हैं। इन का ध्यान बेठिकाने है और चेतन्य आकाश का ख़्याल या अनुमान करके ध्यान करते हैं और जो रोशनी अंतर में नज़र आये उसी को आत्मा का दर्शन समझकर तृप्त हो जाते

हैं। [२] दूसरे जो मूरत या निशान का ध्यान करते हैं इनका भी ध्यान बेठिकाने है और उनको उस मूरत का दर्शन भी बहुत कम होता है और जो कभी हो गया तो जैसी मूरत देखी है उसी के मुवाफ़िक़ न वह कभी बोलती है और न चालती है। [३] तीसरे जो गुरू स्वरूप का ध्यान करते हैं इनको अक्सर दर्शन भी होते हैं और प्रीत भी किसी क़दर बढ़ती है पर इनका भी ध्यान बेठिकाने है इस सबब से तरक़्क़ी नहीं होती है॥

इन सब ध्यानियों का ख़्याल बाहर के आकाश में या अंतर में हिरदे यानी मन के आकाश में जो जमता है और वहीं का चमत्कार देखकर यह लोग तृप्त हो गये ऐसा ध्यान सख़्ती और तकलीफ़ के वक़्त में बहुत कम काम देता है सो इस बात की यह लोग अपनी परख नहीं करते। मालूम होवे कि मन आकाश जीव के देह छोड़ने से पहले सिमिटकर ऊपर को खिंच जाता है फिर उस वक़्त ध्यान नहीं बन सक्ता और किसी क़दर बेहोशी ग़ालिब होती जाती है और इसी तरह ज़्यादा तकलीफ़ और बीमारी के वक़्त भी बसबब बेआरामी और चंचलता मन के यह ध्यान बहुत कम बन सक्ता है।

खुलासा यह कि इन सब को न तो सच्चे मालिक की ख़बर हुई और न अपने इष्ट के असली रूप और मुक़ाम का हाल मालूम हुआ और न इस सबब से इनको कुछ तरक़्क़ी हासिल होती है और न घाट बदलता है और न मन और माया के घेर से बाहर जाते हैं। अपनी करनी का फल किसी क़दर इस लोक में और कुछ परलोक यानी स्वर्ग वग़ैरः मे भोगते हैं यानी थोड़ा बहुत सुख और आनंद मिलता है पर जनम मरन के चक्कर से नहीं बच सक्ते हैं और जो सुख और आनंद उनको प्राप्त होता है वह भी थोड़ी देर ठहरनेवाला है पर अहंकार अपने अभ्यास का बहुत बढ़ जाता है॥

संतों ने जो ध्यान बताया है उसके साथ धेय का (यानी जिसका ध्यान किया जाता है) स्वरूप (चाहे रूपवान है या अरूप) और धाम और रास्ता अंतर में और उसके चलने की जुगत का भेद भी समझाते है। इस तरह ध्यानी अभ्यासी की सुरत दिन २ रास्ता तै करती हुई ऊंचे को चढ़ती जाती है और आनन्द भी बढ़ता जाता है और तन मन और इन्द्रियों के घाट से अभ्यासी आहिस्ता २ न्यारा होता जाता है और अपने धेय यानी इष्ट और मालिक

का जो घट २ में मौजूद है जब तब दर्शन करके निहायत मगन होता है और उसकी मेहर और दया और रक्षा अपने अंतर में परख कर अभ्यासी की प्रीत और प्रतीत दिन २ ज़्यादा होती जाती है और जिस क़दर आनन्द ऊंचे से ऊंचे देश का प्राप्त होता जाता है उसी क़दर संसार और उसके भोग बिलास और पदार्थों से आपही आप तबीयत हटती जाती है यानी सहज बैराग की दशा आती जाती है और ऐसे अभ्यासी का आहिस्ता २ मन और माया के घेर से निकल कर संतों के निज देश में जो अमर अजर है प्राप्त होना मुमकिन है और वहां पहुंचकर अभ्यासी भी अमर हो जाता है और वहां का सुख और आनन्द भी अमर है और काल कलेश जहां बिल्कुल नहीं है इस तरह सच्चा उद्धार और सच्ची मुक्ती हासिल हो सक्ती है ॥

८—अभ्यास मुद्रा का ।

१—अक्सर जोगी लोग यह अभ्यास करते हैं और कोई २ ग्रहस्ती भी इस अभ्यास में शामिल हैं। मुद्रा पांच हैं [१] चाचरी [२) भूचरी (३) खेचरी (४) अगोचरी और (५) उनमुनी ॥

२—पहिली दो मुद्रा में दृष्टी का साधन अंतर और

बाहर किया जाता है। बाहर कोई स्याह नुक़ता पर कोई चिराग़ की लौ पर और कोई नाक की नोक या परों पर नजर को जमाते है और अंतर में दोनों भवों के मध्य में ठहराते हैं। इस अभ्यास में रोशनी सफ़ेद या रंगीन नज़र आती है और उसके देखने से तबीयत को रस आता है और बहुतेरे इसी को आत्मा का प्रकाश समझकर तृप्त होगये। किसी २ को अपना रूप दिखलाई देता है और वह उसी में अटक गये इस से आगे का भेद और रास्ता किसी को मालूम नहीं हुआ। यह रोशनी मायक है और हमेशा एकसां क़ायम नहीं रहती है इस सबब से इसके अभ्यासी किसी ठिकाने पर नहीं पहुंचे है और न उनका सच्चा उद्धार हुआ। इस करनी का फल थोड़ा सुख और आनन्द अभ्यास के वक़्त हासिल हो गया और बाक़ी सुख ऊंचे लोक या ऊंची जोनों में पावेंगे और जो यह अभ्यास सच्ची चाह सच्चे मालिक से मिलने की लेकर शुरू किया है तो ऐसों को संत सतगुरु मिलेंगे और सच्चे मालिक और उसके धाम का भेद और जुक्ती चलने की बतलाकर और अपनी मेहर और दया से अभ्यास करवाकर धुर घर में पहुंचावेंगे तब सच्चा उद्धार हो जावेगा ॥

३-खेचरी मुद्रा का अभ्यास यह है कि जबान के सिरे को उलटाकर तालू के द्वारे पर जमाते हैं और वहां जो अमृत की बूंदें हर वक़्त टपकती रहती हैं उनको पान कर के मगन और तृप्त हो जाते हैं और आगे का खोज कुछ नहीं करते हैं ॥

यह अभ्यास बहुत थोड़े आदमी करते हैं और जो कि यह देह के संग है इस सबब से मरने के वक़्त बहुत कम मदद और फ़ायदा देता है। यानी सुरत या रूह के खिंचाव पर जाता रहता है ॥

४-अगोचरी मुद्रा के अभ्यासी शब्द की धुन को जो अंतर में हर वक़्त हो रही है सुनते हैं कोई आधी रात के बाद बग़ैर कान बन्द करने के और कोई कानों में कूंचियां और रुई लगाकर और कोई उँगली से कानों को बन्द कर के और बाजे मुंह और नाक को भी बन्द करते हैं। यह शब्द मजमुआ (मिलौनी) का हर वक़्त नीचे के परदे में हो रहा है और जो कोई इसको चित्त देकर सुने तो तरह २ की आवाज़ें ख़ासकर वह दस आवाज़ जो कि जोग शास्त्र में लिखी हैं सुनाई देती हैं और उस में जब मन और चित्त एकाग्र होकर लग जाते हैं तो रस और आनन्द भी आता है और संसार की तरफ़ से किसी क़दर

तवज्जह भी हट जाती है पर इस मुद्रा के साधना करनेवालों को यह खबर नहीं कि कौन शब्द कहां से आता है और न वह शब्द का धुन के साथ अपने मन और सुरत को चढ़ाते हैं इस सबब से इनका अभ्यास भी पिंड का है और जब मरते वक़्त सुरत या रूह का खिंचाव होता है उस वक़्त यह मजमुआ का शब्द भी जाता रहता है और ऐसे अभ्यासियों को कर्म अनुसार फिर देह धरनी पडती है यानी जनम मरन नहीं छूटता और जीव का कल्यान नहीं होता। जो ऐसे अभ्यासियों के मन में आगे की खोज की चाह पैदा हो जावे या मालिक के भेद को दरियाफ़्त करने का शौक़ मन में आजावे तो इन को भी संत सतगुरु का दर्शन प्राप्त होना और उनकी दया के वसीले से सच्चे उद्धार का हासिल होना संतो के अभ्यास की कमाई से मुमकिन है और नहीं तो फल अपनी करनी का कुछ इस जनम में और आइन्दा दूसरे जनम में जो पहिले से बेहतर और उमदा होगा भोग करेंगे पर आवागमन से रहित नहीं होंगे और न ऊंचे देश में पहुंच सकेंगे॥

५-उनमुनी मुद्रा का अभ्यास यह है कि जब

अगोचरी मुद्रा करके मन और चित्त अभ्यासी के ठहर जावें और शब्द के रस में इस क़दर रसीले हो जावें कि तन मन और शब्द की भी सुध न रहे तो वह हालत समाधी की कहलाती है और इसी को उनमुनी मुद्रा कहते हैं । ऐसी समाधी जितनी देर तक रहे वह उनमुनी अवस्था कहलाती है इस हालत में मन और चित्त अभ्यासी के चिदाकाश में लय हो जाते है । यह दर्जा मुद्रा के अभ्यास में बड़ा है और इसी को आतम आनन्द और आत्मा में लय होना मानते हैं । संत मत के मुवाफ़िक़ यह लोग भी पिंड के नाके पर रह गये और ब्रह्माण्ड और संतों का देश उसके ऊपर रहा इस सबब से इनको भी सच्चे मालिक का खोज और पता न लगा और न सच्चे उद्धार की गत प्राप्त हुई । ऐसे अभ्यासी मरने के बाद कुछ अर्से तक आतम पद में रह कर फिर देह धरेंगे पर ऊंचे लोक और ऊंची जोन में और पहिले जनम की निस्बत विशेष सुख पावेंगे मिस्ल (याने) राज भोग वग़ैरह क्योंकि इन मुद्राओं के अभ्यासियों के मन में वासना माया के भोग और मान बड़ाई और प्रभुता की धरी रहती है वह जब तक कि संत सतगुरु का संग न मिलेगा और उनकी

जुगत की कमाई करके माया के घेर के बाहर न जावेगा तब तक दूर न होवेगी इसी सबब से जनम मरन बराबर जारी रहेगा ॥

९—वाचक ज्ञान

१—यह मत इस जमाने में कसरत से जारी है और इसकी असल यह है कि सच्चे ज्ञानी जो जोग अभ्यास करके ब्रह्मपद में पहुंचे और जो उन्हों ने सिद्धांत के बचन कहे या अपनी बानी में लिखे उन को पढकर लोग मगन होकर अपने तईं ब्रह्मरूप मानने लगे और जो अभ्यास कि सच्चे ज्ञानियों ने बतलाया उसकी कुछ काररवाई नहीं की इस सबब से इनके मन और इन्द्री जैसे दुनियांदारों के जबर हैं और संसार के भोग बिलास की चाहों से भरे हुए हैं ऐसे ही बने रहे क्योंकि उन पर अभ्यास का रगडा नहीं लगा और न सफाई हासिल हुई। सिर्फ़ ऊंची अवस्था की बातें सुनकर और याद करके हर एक को सुनाते हैं और अपने आप को ब्रह्मरूप मान कर समझते हैं कि उनको कुछ करनी और करतूत की ज़रूरत नहीं रही। इस मत की बातें समझ कर सीख लेना बहुत आसान है पर मन और इन्द्रियों का रोकना और मारना बहुत कठिन काम है सो मेहनत करना

और मन को मोड़ना तो कोई पसन्द नहीं करता सहज में बेतकलीफ़ ब्रह्म बन जाना हर एक को मंज़ूर है इस तरह बहुतेरे भेष और पण्डित और गृहस्ती जिनको थोडो बहुत विद्या हासिल हुई इस मत में शामिल हो गये और ज्ञान को बातें बनाने लगे पर बरताव और रहनी उनकी संसारियों के मुवाफ़िक़ रहती है और मन और इन्द्रियों की तरंगों में बहते रहते हैं और अपने हाल से बिल्कुल बे ख़बर हैं और जो कोई उनकी कसरें जतावे तो उस से लड़ने और मुक़ाबिला करने को तैयार होते हैं यानी इस क़दर ग़फ़लत और मूर्खता छाई हुई है कि यह भी नहीं समझते कि हम कहते क्या हैं और करते क्या हैं। प्रथम तो यह लोग कसरत से अभ्यास से ख़ाली हैं और जो कोई कि कुछ अभ्यास करते हैं वह बिचार का है यानी थोड़ी देर एकान्त में बैठ कर ख्याल करते है कि हम यह भी नहीं वह भी नहीं यानी जो रचना कि उनको नज़राई देती है या जो कुछ कि किताबों में पढ़ा है उस को निषेद करके बाक़ी जो रहा उसको अपना रूप यानी ब्रह्म समझ कर चुप्प हो रहते हैं। यह अभ्यास शुरू में कोई दिन इतना फ़ायदा दिखलाता है कि उनकी

वृत्ती को सब तरफ़ से समेट कर एकाग्र कर देता है और किसी २ को ऐसी हालत में कुछ प्रकाश भी नज़र आता है और बाद थोड़े दिन के यह अभ्यास दिन २ फीका और हलका होता जाता है और फिर वैसा सिमटाव और एकाग्रता भी नहीं होती। तब उस अभ्यास को भी छोड़ देते है और अपने तईं पूरा जान कर इधर उधर मेले तमाशे और देशों की सैर करते हुए मारे २ फिरते है। जो आतम आनन्द इनको प्राप्त हुआ होता तो इनका मन सैर और तमाशे की इच्छा न उठाता पर इन्होंने भारी धोखा खाया और वृथा अपनी नर देह को बरबाद किया। इनका वही हाल होगा जो संसारियों का होगा बल्कि यह उनसे ज़्यादा तकलीफ़ और दुख भोगेंगे क्योंकि यह दावा ब्रह्म होने का करके मन और इंद्रियों की तरंगों में बेख़ौफ़ बर्तते हैं और किसी का डर और लज्जा नहीं करते हैं और यही हाल थोडा और बहुत सूफ़ियों का है जोकि वग़ैर किसी क़िस्म के अभ्यास के अपने तईं सूफ़ी मान बैठे है॥

२-सच्चे ज्ञानी जो पिछले वक़्त में हुए उन्होंने जोग अभ्यास और पांचों उपासना (यानी गनेश और विष्णु और शिव और शक्ती और ब्रह्म की)

करके और छः चक्रों को बेध कर सहसदलकंवल का दर्शन किया और कोई २ ने त्रिकुटी में पहुंच कर ओङ्कार पुर्ष का दर्शन करके उसके लक्ष रूप में जिसको शुद्ध ब्रह्म कहते है समाये । वहां पहुंचकर एकताई के बचन कहे उन बचनों को थोड़ी सो विद्या और ओछे पात्रवाले पढ़ २ कर फूल गये और सिद्धांती बन गये ॥

३–सच्चे जोगी ज्ञानियों ने अपनी बानी में प्रथम उपासना और जोग अभ्यास की रीति वर्णन करी और साफ़ लिख दिया कि जिस में यह चार साधन नहीं आये हैं (यानी १–बैराग २–बिबेक ३–षटसम्पति और ४–ममोक्षता) वह अधिकारी सिद्धांत के बचन पढ़ने सुनने और मानने का नहीं है और जो यह हुक्म न मानेगा उसका वह हाल होगा जो राहु केतु असुर का हुआ जो कि रूप बदल कर देवताओं की सभा में जा बैठा और अमृत पान करने में शामिल हुआ और उसका यह फल पाया कि सिर काट कर दो टुकड़े किये गये यानी जो कोई मन और इन्द्रियों को बग़ैर क़ाबू में लाने के सिद्धान्त के बचन पढ़ेगा या कहेगा तो वह अपना अकाज करेगा ॥

४–आज कल के ज्ञानी अपने तईं विद्यावान कहते

हैं और हाल यह है कि विद्या भी पूरी २ उनको नहीं हासिल है और अमल यानी अभ्यास का कुछ जिक्र भी नहीं ब्रह्म को सर्वब्यापक मान कर कहते हैं कि आना जाना कुछ नहीं और जोकि ज्ञान के बचन पोथियों में लिखे हुए उनकी समझ में आगए इससे उनको उपाशना करने की कुछ जरूरत नहीं रही और ऐसे ही अपने मन में आप मान लेते हैं कि चारों साधन भी उनमे आ गये और जो कोई उनसे दरियाफ़्त करे कि कौन साधन करके तुम को ज्ञान प्राप्त हुआ तो जवाब नहीं दे सक्ते और नाराज होकर झगड़ा करने को तैयार होते है। ऐसे लोगों के संग से सब को जो अपने जीव का कल्यान चाहें बचना चाहिये और उपाशना यानी भक्ती और जोग अभ्यास करके प्रथम अपने अंतर की सफ़ाई हासिल करना चाहिये-तब पहिले उपाश्य यानी मालिक का दर्शन पावेंगे और फिर उसकी दया से उसके लक्ष स्वरूप का दर्शन मिलेगा और तन मन और इंद्रियों से न्यारे होकर मालिक के चरनों का प्रेमरस पावेंगे उस वक्त़ चारों साधन भी सर्व अंग करके दुरुस्त हो जावेंगे और सच्चे ज्ञान का दर्जा हासिल होगा-इसका नाम ज्ञान है और जिसको कि बाचक

ज्ञानी ज्ञान समझ रहे हैं वह पोथियों का यानी विद्या ज्ञान है साक्षात ज्ञान नहीं है ॥

११–ग्रन्थ और पोथी का पाठ करना और मन से मालिक की अस्तुति गाना और प्रार्थना करना ।

१–जो लोग सिर्फ़ इतने ही काम को परमार्थ की करनी समझकर कर रहे है और अंतर के अभ्यास से बेखबर है वे विद्यावानों में दाख़िल हैं–जिस वक़्त कि यह काम करते हैं उस वक़्त उनके मन का अंग थोडा बहुत परमार्थी हो जाता है और अस्तुति और प्रार्थना करने के वक़्त किसी क़दर चित्त गदगद हो-कर उस में प्रेम भी आ जाता है और अपनी बुद्धी और समझ बूझ के मुवाफ़िक़ अपने मन और इंद्रियों के चाल को भी किसी क़दर दुरुस्त रखते है पर न तो वह प्रेम ठहर सक्ता है और न उसकी तरक़्क़ी हो सक्ती है और ज्यादा तकलीफ़ और ज्यादा सुख के वक़्त या किसी क़िस्म की उपाधी की हालत में वह समझ बूझ उनकी क़ायम नहीं रहती है और न कुछ परमार्थी मदद दे सक्ती है ॥

२—जो इन में से किसी के मन मे खोज पैदा हो जावे या दुनिया के बहुत दुख पाकर सच्चे सुख की तलाश की चाह मन में आ जावे तो उनका संत सतगुरु या साध गुरू या संतों के सतसंगी से मेल हो जाना मुमकिन है और फिर उसके वसीले और मदद से जीव का कारज बन सक्ता है ॥

३—और जो इनके मन में संसार की चाह यानी मान बडाई और भोगों की ख़्वाहिश जबर रही तो इनका परमार्थ इसी क़दर रहा और प्रीत प्रतीत भी अपने इष्ट के चरनों में मामूली तौर पर जैसे और बाहरमुखी पूजा करनेवालों की होती है रहेगी और इस क़दर परमार्थ से जनम मरन और देहियों के सम्बन्धी कष्ट और कलेश से छुटकारा नहीं हो सक्ता है यह लोग बारम्बार देह धरेंगे और अपनी करनी का फल दुख सुख भोगते रहेंगे। सच्चे मालिक और उसके धाम का पता और भेद और सच्चे उद्धार का तरीक़ा इनको भी मालूम नहीं हुआ ॥

खुलासा

१—इस बचन में जो कुछ कि काररवाइयां लिखी गई हैं सब परमार्थ के हासिल करने के वास्ते या तो संजम है या थोड़ी बहुत चढाई के अभ्यास है—

हरचन्द कि इनसे पूरा २ काम नहीं बन सक्ता यानी सच्चा और पूरा उद्धार और सच्चे मालिक की प्राप्ती नहीं हो सक्ती फिर भी थोड़ा बहुत सुख इस लोक में और स्वर्ग आदिक में मिल सक्ता है और कोई २ अभ्यास से सुरत और मन की कुछ ऊंचे मुक़ाम तक पिण्ड और ब्रह्माण्ड में चढ़ाई भी मुमकिन है ॥

२-इस वचन मे जहां जिकर मूरत और निशानों की पूजा का किया गया है उससे मतलब यह है कि चाहे मूरत होवे या तसवीर या ग्रन्थ होवे या पलंग और खड़ाऊं या किसी मत के आचारज का मुक़ाम ख़ास या कोई उन के निशान या उनके बर्तने की चीज़ें और सामान होवें या भक्तों और औलियाओं और महात्माओं और परमार्थी लोगों की कोई जगह ख़ास मुक़र्रर की हुई या उनके नाम से कोई मकान बने हुए या जहां कि उन्होंने कोई दिन रह कर अभ्यास और सतसंग किया होवे या उनकी समाध और मुक़बरे होवें और जहां कि लोग किसी वक्त मुक़र्ररह पर जमा होकर पूजा नज़र भेंट या सतसंग करते होवें ॥

३-और जहां कि इस वचन में नाम तीरथ का आया है उससे मतलब यह है कि चाहे उन मुक़ामों

में से जो ऊपर ज़िकर किये गये कोई अस्थान होवे या कोई दरिया या झील या कुंड या कुवा या बावड़ी जिस को लोगों ने बसबब ठहरने उस जगह महात्माओं के पवित्र और बुज़ुर्ग माना होवे और जहां कि वक़्त मुक़र्ररह पर लोग वास्ते अश्नान ध्यान पूजन और देने नजर और भेंट और पुन्य दान करने के अपना परमार्थी फ़ायदा या कोई संसारी मतलब और मुराद हासिल होने की नजर से जमा होते होवें ॥

४–इस जगह पर इस कदर जताना ज़रूर मालूम होता है कि जिस जगह पर चाहे कोई अस्थान ऊपर के जिकर किये हुए मुकामों मे से होवे और लोग इस इरादे और मतलब से जमा होवें कि वहां किसी पिछले संत या साध या महात्मा या औलिया या भक्त के भजन अभ्यास और सतसंग करने की जगह है और वह बसबब उनके वहां ठहरने के निहायत पवित्र और पाक है और ज़रूर वहां पर खोज और पता और भेद तरीक़े का कि जिसकी कमाई करके उन महात्माओं को बड़े से बड़ा दर्जा हासिल हुआ उनके गद्दीनशीन या सतसंगियों से जो वहां उस वक़्त मौजूद होवें मिल सक्ता है और वहां पहुंचकर

थे उन महात्माओं के निशान पर भाव और अदब की नजर से हार फूल चढ़ावें और वहां जो साधू रहते हैं उनके खाने पीने के खर्च के वास्ते नज़र भेट करें या उनके लिये तोहफा वग़ैरह ले जावें और भाव के साथ उस मुक़ाम पर या किसी निशान के सनमुख अदब (जैसे मत्था टेकना और सिजदा करना) बजा लावें और वहां ठहरकर सतसंग करें और भेद ऊंचे दरजों परमार्थ का और जुगत और अभ्यास उनके प्राप्ती की दरियाफ़्त करें और जब तब वास्ते इज़हार करने हाल अपने अभ्यास के और दरियाफ़्त करने ज्यादा भेद और तरकीब दूर करने विघ्नों के जो हालत अभ्यास में वाक़ा होते हैं आना जाना जारी रक्खें तो यह काररवाई मूरत और निशान की पूजा में दाख़िल नहीं हो सक्ती—क्योंकि जहां तहां जो ऐसे अस्थानों पर सतसंग और अंतर का अभ्यास जारी है वहां जो लोग परमार्थी फ़ायदा हासिल करने के लिये जमा होंगे वह किसी सूरत में बाहर की काररवाई में नहीं अटकने पावेंगे और न वहां बाहर की काररवाई का कुछ उपदेश जारी होगा वहां जो कुछ कि ज़ाहिरी भाव और अदब के क़ायदे बरते जाते है वह बसबब मुहब्बत

महात्माओं के और ख़्याल उनकी बुज़ुर्गी के बरताव में आते है नकि अस्थान या निशान की पूजा और उसी को मालिक समझकर और उसका इष्ट बांध कर पूजा में दाख़िल हो सक्ते है—और जहां कहीं कि सतसंग और उन महात्माओं का चलाया हुआ तरीक़ा अंतर अभ्यास का वास्ते प्राप्ती आला दरजे परमार्थ के जारी नहीं है और न कोई वहां किसी दरजे के अभ्यासी रहते हैं तो जिस क़दर काररवाई भाव और अदब वग़ैरह को वहां जारी है वह करम और भरम में दाख़िल होगी और उस काररवाई से जीवों के न तो संसय और भर्म दूर होंगे और न आला दरजे के परमार्थ हासिल करने का तरीक़ा मालूम होगा। जिस क़दर कि तन मन धन वहां पर लोग जमा होकर लगावेंगे उसका फल थोड़ा बहुत सुख इस लोक में या स्वर्ग आदिक में जैसे और शुभ करमों का फल मिलता है पावेंगे॥

बचन उन्नीसवां

संत मत में ज़ाहिरी यानी बाहरमुख कारखाई।

संत अथवा राधास्वामी मत में जो जो अभ्यास

कि जारी हैं उनकी काररवाई अंतर में ऊंचे घट में होती है और बाहर सिवाय सतसंग और सेवा और आरती के कोई कारवाई नहीं होती। और इनका हाल मुफ़स्सल नीचे लिखा जाता है॥

पहिली—सतसंग—१ यह संत सतगुरु या साध गुरू या अभ्यासी और प्रेमी सतसंगी के संग का नाम है। इस में सच्चे मालिक सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल का निरनय और उनकी और संत सतगुरु की महिमां और उनके चरनों में दीनता और प्रेम और प्रतीत पैदा करने और बढ़ाने का जिकर होता है और संत सतगुरु की बानी का पाठ और सच्चे मत यानी राधा-स्वामी मत का निरूपन और सच्चे मालिक और उस के मिलने के सच्चे रास्ते और जुगत का भेद और अभ्यास की तरकीब और उसकी बड़ाई और उसका फल और असर जैसा कुछ कि अभ्यासी को वक्त़ २ पर मालूम होता जाता है बर्णन किया जाता है- और संसार का हर वक्त़ बदलने वाला हाल और उसके भोग और पदार्थों का नाशमान होना समझा कर उस में वाजिबी और ज़रूरी तौर पर बर्तने की हिदायत की जाती है। ऐसे सतसंग की जरूरत हर एक सच्चे परमार्थी यानी सच्चे मालिक के प्रेमी

को ज़्यादा से ज़्यादा है क्योंकि बिना उसके भरम और संशय दूर नहीं होते और पुरानी रसमी और कौमी और संसारी चाल और ब्यौहार को जिसका मन बरसों से आदी (स्वभाव) हो रहा है और जो सच्चे परमार्थ में विघ्न डालते हैं नहीं छूट सक्ते और सच्चे मालिक की मौजूदगी का सच्चा यक़ीन दिल में नहीं आ सक्ता और न सच्ची प्रीत मन में पैदा होती है और न वह जैसा चाहिये दिन २ बढ़ती है और न अभ्यास सुरत शब्द योग का दुरुस्ती से बन सक्ता है और न उसको तरक़्क़ी हो सक्ती है ॥

दूसरे सेवा २–इसकी तीन क़िस्म हैं पहिले मन की सेवा–और यह बाहर में सतसंग और दर्शन और अंतर में सुमिरन और ध्यान करना प्रीत और प्रतीत के साथ। दूसरे तन की सेवा और यह हाथ पांव की काररवाई जैसे चरन दाबना, पङ्खा करना, पानी लाना, खाना पकाना, हाथ धुलाना, फ़र्श बिछाना, झाड़ू लगाना, और जो जिस वक़्त मुनासिब मालूम होवे। तीसरे धन की सेवा और यह जिस क़दर जिससे अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ हो सके जैसे परशाद और भोग रखना, साधुओं का भण्डारा

करना, और ग़रीबों और मोहताजों के लिये मालिक के नाम पर खाना और कपड़ा देना, साधों और सत-संगियों के लिये बाग़ लगाना और मकान बनवाना ॥

पहिली सेवा सब परमार्थियों को जरूर चाहिये। दूसरी सेवा उन लोगों के वास्ते ख़ास कर मुक़र्रर हुई है जिनका मन सतसंग और ध्यान और भजन में कम लगता है पर सेवा करके प्रीति और प्रतीत उनकी बढ़ती जावेगी और दिन २ सतसंग और अभ्यास में प्यार और शौक़ बढ़ता जावेगा और फिर यही सेवा उन अभ्यासियों के वास्ते भी है कि जिनके मन और सुरत भजन में ज्यादा लगते हैं और प्रेम और उमंग उनकी ज्यादा होती जाती है कि उस उमंग में उनका मन आपही आप थोड़ी बहुत सेवा करने को चाहता है और निहायत दीनता के साथ ऐसी सेवा और सेवकों से मांगकर करने लगते हैं—और इस में फ़ायदा यह है कि उनके अंग २ में प्रेम धस जाता है और जब २ कि सुरत उनकी ऊपर को बिशेष चढ़ जाती है तब ऐसी सेवा करके उसकी धार नीचे को यानी देह में उतरकर उनके हाथ पैरों को जो किसी क़दर कसरत भजन से सुन्न यानी सुस्त पड़ जाते हैं ताक़त और चालाकी

देती है। तीसरी सेवा उनके वास्ते है जिनके पास थोड़ा या बहुत धन है और इससे उनकी प्रीत और प्रतीत भी ज़ाहिर होती है और उसको तरक़्क़ी भी होती है क्योंकि जब उनको सच्ची प्रीत और प्रीतत मालिक और गुरू के चरनों में आई तब मुमकिन नहीं कि उन से कोई सेवा तन और मन और धन की बाक़ी रह जावे और दुनिया में भी जहां आपस में मुहब्बत होती है वहां बहुत ख़ुशी के साथ धन ख़र्च किया जाता है और तन की सेवा भी उमंग के साथ करते हैं फिर परमार्थ में जहां कि सच्ची प्रीत का कारख़ाना है सच्चे प्रेमी और सच्चे प्रतीतवाले के मन में निहायत दरजे की उमंग वास्ते करने इन सेवाओं के उठती है और जिस क़दर ऐसी सेवायें उससे बनती जाती हैं उसी क़दर रस परमार्थ का अंतर और बाहर उस सेवक को ज़्यादा से ज़्यादा मिलता जाता है॥

यह तीनों क़िस्म की सेवा सब मतों में जारी हैं और सबब इनके जारी होने का यह है कि दुनिया में सब जीव तन मन और धन में बंधे हुए हैं। और इन्हीं की प्रीत हर एक के मन में धरी हुई है और जब कोई परमार्थ में आया तब संत और महात्मा

चाहते हैं कि उस के मन में मालिक की प्रीत ज़बर पैदा होवे तब उसका सच्चा उद्धार मुमकिन होगा यानी तन मन और धन की प्रीत आहिस्ता २ सतसंग और अभ्यास करके हलकी होती जावे और उसकी जगह मालिक और गुरू की प्रीत पैदा होकर दिन दिन बढ़ती जावे। जब ऐसी सूरत हुई तब वह परमार्थी जैसे कि दुनिया की प्रीत की जगह बहुत ख़ुशी के साथ तन मन और धन की सेवा करता है यानी अपने दोस्त और अज़ीज़ के वास्ते तन मन और धन मगन होकर ख़र्च करता है इसी तरह जब कि उसको सच्चे मालिक की प्रतीत आई और प्रेम मन में जागा तब वह गुरू और साध और प्रेमी सतसंगी की हर तरह से सेवा करने को उमंग के साथ अंतर से चाहता है और जब ऐसी सेवा बन पड़ती है तब उसको निहायत ख़ुशी और ताज़गी (नई ताक़त) दिल को होती है और जब तक सेवा न बने तब तक मन उसका उदास और सुस्त रहता है इस वास्ते यह सब सेवा निशान और सुबूत इस बात के हैं कि सेवा करनेवाले के मन में सच्ची प्रीत और प्रतीत मालिक के चरनों में आई और उसने गुरू और साध और सतसंगियों को मालिक का प्यारा

समझा और उनके साथ बिरादराना मुहब्बत करने लगा नहीं तो अपने मन के शौक़ पूरा करने को और भोगों के रस लेने के लिये और अपनी इस्त्री और लड़के बाले की ख़ातिर और बिरादरी के राज़ी और ख़ुश रखने के लिये सब कोई तन मन और धन लगा रहे हैं और फल उसका सिवाय संसारी ख़ुशी और मन और इन्द्रियों के हुक्म में चलने और बिरादरी को राज़ी रखने के और कुछ नहीं मिल सक्ता है और परमार्थी को ऐसी सेवायें करने से सच्चे मालिक की प्रसन्नता और रजामन्दी हासिल होती है और उसका फल यह होता है कि दिन २ उसकी प्रीत और प्रतीत चरनों में बढ़ती जाती है और अंतर में भजन और ध्यान का रस दिन २ ज़्यादा मिलता जाता है और सब तरह से सच्चे मालिक की दया हर काम में अंतर और बाहर अपने ऊपर निरख और परख कर मनही मन में मगन होता है और भरोसा मालिक के चरनों में मज़बूत होता जाता है॥

तीसरे आरती ३–यह तरकीब ध्यान की है कि सन्मुख गुरू या साध के बैठकर और दृष्टी से दृष्टी जोड़कर अंतर में मन और सुरत को खींचकर ऊपर को चढाया जाता है–सब अभ्यासी हर रोज़ यही

अभ्यास आंखें बन्द करके अपने अंतर में करते हैं—पर कभी २ सन्मुख गुरू या साध के बैठकर करने में मदद मिलती है और मन और इन्द्री निश्चल हो जाते हैं और खिंचाव और चढ़ाई भी हर एक की ताक़त के मुवाफ़िक़ आसानी से होती है इस सबब से रस और आनन्द विशेष आता है और इसी तरह चन्द मर्तबा अभ्यास करने से ताक़त बढ़ती है। आरती के वक़्त रोशनी यानी जोत जगाई जाती है इस मतलब से कि अक्सर यह काम रात के वक़्त किया जाता है कि दर्शन अच्छी तरह से होवे और कुछ परशाद भी बतौर भोग सन्मुख रक्खा जाता है कि बाद आरती के वह सतसंगियों और साधुओं में तक़सीम हो जाता है और अपनी सरधा और उमंग के मुवाफ़िक़ कभी २ पोशाक और नक़्द भी भेंट किया जाता है और वक़्त आरती के प्रेम अंग वाले और आरती के शब्दों का लहजा और स्वर के साथ पाठ किया जाता है और सब सतसंगी और साधू आरती करने वाले के मुवाफ़िक़ पाठ को चित्त से सुनकर अपने-२ अन्तर में ध्यान करते है पर सन्मुख वही शख़्स बैठता है जो आरती करता है जो शब्द कि गाया जाता है उसके मतलब और मुक़ामों पर नज़र रखकर अन्तर में

ध्यान और चढ़ाई की जाती है । यह काम हर रोज नहीं बन सक्ता है पर जैसा जिसका शौक़ होवे उस के मुवाफ़िक़ कभी २ या महीने या हफ़्ते में एक या दो दफ़ा उसकी काररवाई होती है ॥

सिवाय ऊपर की लिखी हुई काररवाई के चार काम और है जो वास्ते परमार्थी फ़ायदे सच्चे प्रेमियों के संत मत में बाहर की काररवाई में शामिल किये गये है और वे थोडे बहुत हर एक मत में जारी है इस जगह उनकी तफ़सील मय उनके फ़ायदे के लिखी जाती है जिस से सब सतसंगियों को उनके जारी होने का सबब और फ़ायदा मालम हो जावे और मन में भरम और संशय पैदा न होवे और वह चार काम यह है पहिले गुरू और साध के चरनों पर मत्था टेकना या चरन छूना, दूसरे हार और फूल चढ़ाना, तीसरे परशादी लेना, चौथे चरनामृत लेना अब हर एक का बयान जुदा २ किया जाता है ॥

पहिले गुरू और साध के चरनों पर मत्था टेकना या चरन छूना । इस कारखाई से मतलब यह है कि गुरू और साध की दया हासिल होवे और चरनों को स्पर्श करके यानी छूकर वह सीतल रूहानी धार जो हर वक्त़ उनके चरनों से निकलती रहती है प्रेमी

परमार्थी की रूह यानी सुरत और देह में असर करे। अब मालूम होवे कि हर एक शख़्स के कुल्ल देह से और खास कर हाथ और पैर से हर वक़्त चेतन्य धार रोशनी रूप निकलती रहती है—जो संसारी और दुनियादार लोग हैं और ख़ास कर वे जो नशे की चीज खाते पीते रहते हैं और मास अहार भी करते हैं उनकी धार उनकी रहनी और खान पान के मुवाफ़िक़ बहुत नीचे के दरजे की अथवा बनिस्बत संत और साध की धार के जिनकी सुरत ऊंचे के देश की बासी है बहुत मैली और कम रोशन होती है और संत और साध की धार निहायत निर्मल और चेतन्य और रोशन होती है यह धार वक़्त छूने उनके चरन के हाथ या माथे से फ़ौरन छूनेवाले के बदन में समा जाती है और उसकी रूह यानी सुरत में ऊपर के देश की तरफ़ झुकाव और संत चरन में प्रीत पैदा करती है। हर मुल्क और हर क़ौम के लोगों में जहां २ आपस में प्रीत या रिश्तेदारी है यह दस्तूर जारी है कि चाहे मर्द होवें या औरतें जब २ आपस में मिलते हैं तो किसी न किसी तरह से एक दूसरे के बदन को छूते हैं जैसे किसी क़ौम में छाती से लगाकर मुलाक़ात करते हैं या हाथ या पांव

छूते है और किसी क़ौम में सिर्फ़ हाथ मिलाते हैं और ज्यादा प्यार और मुहब्बत या रूप की जगह मुंह या हाथ पांव चूमते है ग़रज इससे साफ़ यह मालूम होता है कि जहां अदब या प्यार या मुहब्बत दिलों में है वहां जरूर बगैर छूने एक दूसरे की देह के मन को चैन नहीं आता है और इस छूने से एक की चैतन्य धार दूसरे की चैतन्य धार से मिल जाती है क्योंकि असल में सब मनुष्यों का स्वरूप चैतन्य धार है जो बराह रगों के तमाम बदन और अंग २ मे फैली हुई है और प्यार और मुहब्बत और अदब का जोश और असर उसी धार में है सो वह धार जब तक कि दूसरे की धार से किसी कदर न मिले अपने प्यार या मुहब्बत या अदब का फ़ायदा यानी रस और आनन्द नही हासिल कर सक्ती है इस वास्ते सब देशों में और सब क़ामों में कोई न कोई चाल इस क़िस्म की जारी है कि जिससे यह मतलब हासिल होवे फिर संत सतगुरु या साधगुरू के चरनों के स्पर्श से कि जिनकी देह से निहायत ऊंचे दरजे की चैतन्य की धार हर वक्त जारी है किस क़दर फ़ायदा अलावा उनकी दया ख़ास के यानी रस और आनन्द हासिल होना मुमकिन है इस वास्ते हर एक

शख़्स को चाहिये कि जब कहीं ऐसे महात्मा मिलें ज़रूर अपना परमार्थी और संसारी भाग बढ़ाने के वास्ते उनके चरनों में मत्था टेकें या उन के चरनों को भाव और प्रेम के साथ सिर झुकाकर छुयें ॥

दूसरे हार और फूल चढ़ाना ।

यह काररवाई भी भाव और प्यार और अदब के साथ संत सतगुरु और साध और महात्मा के सन्मुख की जाती है और मतलब उसका यह है कि उनकी दया प्राप्त होवे और उनकी निर्मल चेतन्य धार जोकि ऐन अमीरूप है और हर वक़्त उनकी देह से जैसा कि ऊपर लिखा गया है निकलती रहती है फूलों में समाकर जब कि वह हार फूल परशादी के तौर से लिये जावें सेवक के अंग में उसका असर पैदा होवे यानी वह निर्मल धार सेवक के चेतन्य की धार से मिलकर उसके मुख का ऊंचे की तरफ़ को झुकाव करे ॥

तीसरे परशादी लेना ।

यह काररवाई दो तरह से होती है। एक तो यह कि जब संत सतगुरु या साध या कोई महात्मा भोजन पावें और जो कुछ उनका उच्छिष्ट यानी खाने से

बाक़ी रहे उसको उनके सेवक या इष्टवाले परशाद समझकर आपस में तक़सीम करके खावें या जो परशाद वग़ैरह उनके पहिले भोग लगाने के तक़सीम होवे उसको हर एक शख़्स उनसे परशादी करा लेवे यानी वे उस चीज पर अपना लब लगा देवें तब वह पवित्र और सेवकों के पाने लायक़ समझी जावे। जाहिर है कि हर एक मनुष्य और जानवर के लब में असर है कितनी ही छोटी बीमारियों को सिर्फ़ बीमार के अपने लब के लगाने से आराम हो जाता है और कुत्ते अपनी चोट और जख़्म को अपनी जबान से चाटकर दुरुस्त कर लेते हैं और कोई २ आदमियों के फोड़े या जख़्म दूसरे आदमी के लब लगाने और उनका मवाद चूस कर निकाल देने से अच्छे हो जाते हैं। असल यह है कि हर एक जानदार की ज़बान पर चैतन्य की धार जो कि अमी रूप है जारी रहती है और उसी में यह असर फोड़े और जख़्म और दूसरी बीमारी के अच्छे करने का है और उसी धार के सबब से रस और स्वाद खाने पीने का आदमी को आता है—तो जब कि आम आदमियों और जानवरों की ज़बान और उसके लुआब में इस क़दर असर है तो फिर संत और साध और

दूसरे महात्माओं के लुआब की क्या तारीफ़ की जावे और उसका असर किस क़दर असरवाला होगा क्योंकि उनकी धार बहुत ऊंचे देश से और निहायत निर्मल अमी रूप आती है और वह सिर्फ़ देह को नहीं बल्कि रूह यानी सुरत और मन के पवित्र करने वाली और ताजगी बख़्शनेवाली है जब कि कोई खाने की चीज उनके मुख से लगे तो वह निहायत पवित्र और निर्मल चेतन्य की धार से असर लेकर निहायत रसीली हो गई तो बड़े भाग हैं उन लोगों के कि जिन को ऐसी ख़ास पवित्र परशादी मिले इस के पाने से सच्चे और प्रेमी परमार्थी की प्रीत और प्रतीत सच्चे मालिक और गुरू के चरनों में दिन दिन बढ़ती जावेगी और अंतर में सफ़ाई हासिल होती जावेगी। और मालूम होवे कि जहां कहीं आपस में मनुष्यों की संसारी मुहब्बत गहरी है वहां ज़रूर वे अक्सर एक साथ खाते पीते है और बहुत खुशी से एक दूसरे की जूंठन पाते हैं। तो जब कि संसारी प्रीत में इस क़दर तबीयत मायल हो जाती है कि एक दूसरे की छुई हुई या जूंठी चीज से परहेज नहीं रहता तो संत और साध और महात्मा की परशादी जब कि उनको गुरू धारन किया किस

क़दर प्रीत और सफाई और उमंग के साथ मांग कर लेना चाहिये। संसारी काररवाई में आपस में साथ खाने या एक दूसरे की जूंठन पाने से संसारी मुहब्बत मजबूत होती है और कपट दूर हो जाता है और संत या साध या महात्मा की परशादी लेने से मालिक के चरनों में प्रीत और प्रतीत मजबूत होकर दया और मेहर प्राप्त होती है कि जिससे दुनिया में भी रक्षा और मरने के बाद जीव का कारज दुरुस्त बनता है॥

चौथे चरनामृत लेना।

यह काररवाई भी उसी मुवाफ़िक़ समझना चाहिये जैसा कि परशादी के निस्बत बयान हो चुका है और यह भी कि संत और साध और गुरू के चरनों में भाव और भक्ती और दीनता का निशान है। अब मालूम होवे कि संत और साध और महात्माओं की सब देह और ख़ास कर उनके अंगूठों और उङ्गलियों से हर वक़्त निर्मल चेतन्य की धार अमी रूप जारी रहती है और इसी तरह सब जीवों की देह और उङ्गलियों से भी धार जारी रहती है पर संत और साध की धार बहुत ऊंचे देश से आती है और महा निर्मल और अमीरूप और रोशन

चेतन्य है और आम जीवों की धार बनिस्बत उनके मलीन और कसीफ़ यानी अस्थूल चेतन्य की धार है इस सबब से परमार्थी लोग वास्ते प्राप्ती मेहर और दया और होने सफाई अंतर के पुराने वक्तों से गुरू और साध के चरनों को दूध या जल से धो कर उस जल या दूध को चरनामृत समझकर पान करते आये हैं और अब भी सब जगह सब मतों में थोडी या बहुत यह चाल किसो न किसी सूरत या तौर से जारी है ॥

यहां इस बात का बयान करना जरूर है कि पानी फ़ौरन चेतन्य की धार को जज़्ब कर लेता है यानी अपने मे समा लेता है इस सबब से जल का इस्ते-माल कसरत से वास्ते इस काम के मंदिरों में और संत और साध और गुरू की संगत में जारी है। हर एक तार घर में जहां तार की खबरें आती जाती हैं एक सिरा तार का हमेशा कूये में या पानी में डूबा रहता है इस मतलब से कि जब बिजली चमके तो उसकी धार उस तार के वसीले से पानी में समा जावे और जो ऐसा न किया जावे तो वह बिजली की धार तार घर को या उस आदमी को जो तार का काम करता है जला देवे–कहीं २ तार का सिरा

बजाय पानी के ज़मीन में गाड़ दिया जाता है और उस से भी यही मतलब हासिल होता है क्योंकि जमीन भी बिजली की धार को अपने में समा लेती है ऐसे ही अक्सर लोग दूर ले जाने के वास्ते चरनामृत को मिट्टी में मिला लेते है और उसको थोड़ा २ करके अरसे तक काम में लाते हैं ॥

बचन बीसवां

नेत्र के स्थान से सुरत को अंतर में चढ़ाना यही सच्चा मारग उद्धार का है ।

१–हर एक आदमी को चाहे मर्द होवे या औरत जो दुनिया के हाल को ग़ौर से देखता है और जो कुछ कि हालतें जीवों पर गुज़रती रहती है बिचार के साथ उन पर नज़र करता है तो उस को थोडे से सोच और बिचार से मालूम होगा कि इस दुनिया में कोई चीज़ ठहराऊ नहीं है और यहां थोड़े दिनों का बास है और इस थोड़े दिनों के आराम और ज़रूरी चाहों के पूरा करने के लिये सब जीव सुबह से शाम तक मिहनत और मशक़्क़त करते है और इस आराम के हासिल करने के लिये तरह २ की तकलीफ़ें और करमों का भार अपने सिर पर उठाते

हैं और जब अपनी ज़रूरत के मुवाफ़िक़ सामान मिल जाता है तब लालच बढ़ाकर तरह २ के फ़ज़ूल सामान और इन्द्रियों के भोगों के हासिल करने के लिये कोशिश करते है और अपने आप को चिन्ता और फ़िकर और रंज में डालते है और बहुत सी जगह और चीज़ों में बेफ़ायदा मुहब्बत और बंधन पैदा करते है और फिर नतीजा यानी फल उसका यह होता है कि थोड़ा बहुत इस क़िस्म का सामान इकट्ठा करके और कुछ उसका भोग और रस लेकर सब का सब सामान मरने के वक़्त यहीं छोड़कर चले जाते हैं ॥

२-बिचारवान आदमी ऐसे हाल को ग़ौर से देख कर ज़रूर अपने मन में यह ख़्याल करेगा कि जैसे इस दुनिया में हर एक चीज़ में ऊंचे से ऊंचे और नीचे से नीचे दरजे हैं इसी तरह कुल्ल रचना में भी ज़रूर दरजे होंगे यानी इस लोक से और बढ़कर लोक ज़रूर ऊंचे दरजे में होंगे और वहां मिहनत और तकलीफ़ कम और सुख और आराम ज्यादा और ठहराव भी ज्यादा होगा और इसी तरह कोई ऐसा भी दरजा होगा और उस में लोक भी ऐसे होंगे काम करता है और आनन्द बहुत भारी और हमेशा

का क़ायम रहनेवाला हो और जीव भी वहां हमेशा रहकर उस आनन्द का रस लेता रहे क्योंकि इस दुनिया में भुनगे से लगाकर आदमी तक कितने ही दरजे नज़र आते हैं और हर एक ऊंचे दरजे में ठहराव और सुख ज्यादा से ज्यादा होता जाता है और आसमान पर तारा मंडल और चांद और सूरज की रचना निहायत लतीफ़ और निहायत देर तक क़ायम रहनेवाली नजर आती है।

३—ऐसा विचारवान आदमी अपनी हालतों को भी जो हर रोज उसके ऊपर गुज़रती हैं ग़ौर से ख़्याल करेगा और उनसे वह नतीजे जो आगे लिखे जाते हैं निकालेगा॥

पहिली हालत जाग्रत की कि जिस में यह आदमी इन्द्रियों के अस्थान पर खास कर आंखों के तिल में बैठकर दुनिया की काररवाई करता है और जो सामान कि ब्रह्म और माया ने भोगों की क़िस्म से रचे हैं उनका रस लेता है और देह के और दुनिया के दुख सुख भोगता है॥

दूसरी हालत सुपन की यानी जब कि आदमी सोते में ख़्वाब देखता है। इस हालत में रूह यानी सुरत की धार इन्द्रियों और ख़ास कर आंख के अस्थान

से अन्दर की तरफ़ खिंच जाती है और उस वक़्त देह और दुनिया और कुटुम्ब परिवार और माया के पदार्थ और सामान और उनके दुख सुख की जोकि हालत जाग्रत में सताते हैं बिल्कुल ख़बर नहीं रहती और इस हालत का अस्थान देह के अंदर दूसरा है और जिस देह से कि इस हालत में सुरत यानी रूह सुपने में बरतावा करती है वह भी दूसरी यानी सूक्षम या लतीफ़ है ॥

३–तीसरी हालत सुषोपति यानी गहरी नींद की जिस में सुरत यानी रूह को दोनों देही और उनकी हालतों से बिल्कुल बेख़बरी हो जाती है यानी अ-स्थूल देह जिससे जाग्रत की हालत में काररवाई होती है और सूक्षम देह जिससे सुपने की हालत में काररवाई होती है दोनों भूल जाती हैं और उनके दुख सुख का भी असर वहां नहीं पहुंचता है ॥

इन तीनों हालतों की कैफ़ियत को बिचार करने से यह बात साफ़ मालूम होती है कि यह तीनों देहियां (यानी अस्थूल, सूक्षम और कारन) रूह यानी सुरत का स्वरूप नहीं हैं बल्कि यह देहियां ख़ोल या ग़िलाफ़ मुवाफ़िक़ मकान के हैं जिन में बैठकर रूह यानी सुरत उनके औजारों यानी इन्द्रियों के

वसील से इस दुनियां में और सुपन देश में कार-रवाई करती है और सुषोपति के देश में कुल्ल कार-रवाई इस क़िस्म की बन्द हो जाती है और जिस क़दर कि दुनिया और देह के दुख सुख हैं वह उसी हालत और उसी देह के संग करने में सुरत यानी रूह को व्यापते हैं और जब वह हालत और उसकी देह बदल जाती है तब उन दुक्खों और सुक्खों का असर सुरत यानी रूह पर बिल्कुल नहीं पहुंचता ॥

इस नतीजे से यह बात साफ़ जाहिर होती है कि सुरत यानी रूह जुदी वस्तु यानी चीज है और देह जुदी चीज़ है और सुरत को देहियों का संग करने और उनके औजारों यानी इन्द्रियों के वसीले से बाहर की रचना के पदार्थों का रस लेने और उन में मन को बांधने और लगाने से दुख सुख भोगना पड़ता है ॥

जो सुरत इस तरफ़ से यानी मन और इन्द्री और देहियों और भोगों की तरफ़ से चित्त को हटाकर अंतर में अपने निज रूप की तरफ़ जो सुषोपति अवस्था यानी गहरी नींद की हालत के परे है और फिर उस निज रूप के भंडार की तरफ़ जो कि माया की हद्द के पार है और वही सच्चे मालिक और सर्व

रचना के पिता का धाम है शौक़ के साथ तवज्जह करे तो उसको अपने निज रूप का आनन्द और सुख हासिल होने लगे और दुनिया और देह के दुख सुख से निवृत्ती यानी अलहदगी जिस को मुक्ती कहते हैं फ़ौरन हासिल होती हुई मालूम होने लगे ॥

४–सुरत यानी रूह और उसका भंडार सर्व आनन्द और सर्व सुख और चेतन्य शक्ती का ख़ज़ाना है और उसी की धारों से जब वह इन्द्रियों के अस्थान पर आकर ठहरती है हर एक इन्द्री के भोग का रस मालूम होता है और जो वह धार न आवे तो कुछ मजा या रस या स्वाद मालूम नहीं हो सक्ता है ॥

यह बात हालत सुपन के विचारने से अच्छी तरह साबित हो सक्ती है क्योंकि उस हालत में रूह यानी सुरत सब इन्द्रियों की काररवाई उसी तौर पर जैसे कि जाग्रत अवस्था में करती है बदस्तूर करती है और उसी तरह का आनन्द और स्वाद हर एक इन्द्री की काररवाई में मालूम होता है जैसे कि हालत जाग्रत में तो इससे साफ़ ज़ाहिर होता है कि यह सब रस और सुख और आनन्द रूह यानी सुरत की धार में हैं और बाहर के पदार्थ सिर्फ़ एक वसीला

उस धार के इन्द्री के मुक़ाम पर अन्दर से खींचकर लाने का है यानी आदमी के अन्तर में सब रस और स्वाद और आनन्द हर तरह का और ताक़त उसके भोगने की मौजूद है ॥

विचारवान आदमी इन सब ऊपर की लिखी हुई बातों का यानी दुनिया के हाल और अपनी हालतों को ग़ौर के साथ नजर करने से आप समझ सक्ता है और उन से यह नतीजा निकाल सक्ता है कि जो कोई पूरन आनन्द और पूरन सुख के भण्डार में पहुंचना चाहे उसको मुनासिब है कि अपने अंतर में भेद लेकर तवज्जह करे और चलने की जुगत दरियाफ़्त करके आंख के मुक़ाम से जहां कि इस सुरत की खास बैठक जाग्रत की हालत में है चलना शुरू करे तो एक दिन अपने निज रूप का दर्शन कर सक्ता है और वहां से निज भंडार में जहां से सब रूहें यानी सुरतें आई है पहुंचकर परम आनन्द को प्राप्त हो सक्ता है ॥

५—मालूम होवे कि रूहें बेशुमार इस लोक में आईं है और इसी तरह हर लोक में कसरत से मौजूद हैं फिर जरूर हुआ कि कोई भंडार ख़ास है कि जहां से यह आती है क्योंकि हर एक देह यानी जिस्म में

चाहे वह ज़मीनी है चाहे आसमानी एक २ सुरत मौजूद है और उसकी ताक़त से उस देह यानी जिस्म की कुल्ल काररवाई जारी रहती है और जब वह रूह उस देह को छोड़ देती है उसी वक्त वह देह बेकार होकर थोड़े अरसे में नेस्त (नाश) और नाबूद (नाश) हो जाती है ॥

०

रूह यानी सुरत के निज रूप और अस्थान का हाल इस देह में और भी उसके भंडार यानी कुल्ल मालिक के मुक़ाम का भेद और रास्ते का हाल और उसके तै करने की तरकीब सिर्फ़ राधास्वामी यानी सन्तमत में तफ़सील के साथ लिखी है—और मतों में इस हाल का बयान साफ़ तौर पर और तफ़सील के साथ पाया नहीं जाता है क्योंकि जो यह हाल साफ़ २ लिखा होता तो जितने मत कि दुनिया में जारी हैं उनके माननेवाले सिर्फ़ पोथियां पढ़ने और पढ़ाने और बाहरी पूजा और रसमों में अटके न रहते और ज़रूर उन में से थोड़े बहुत खोज करके अंतर के अभ्यास में लगते और वहाँ का रस पाकर अपने २ मतवालों को जो बाहरमुखी पूजादि में भरम रहे हैं समझा बुझाकर उसी काम में लगाते और हर एक अभ्यासी इस तरह अपनी सच्ची मुक्ती

होती हुई अपने में आप परखकर थोडी बहुत शांती को प्राप्त होता ॥

६—इस वास्ते मुनासिब और जरूर मालूम होता है कि हर एक आदमी चाहे मर्द हो या औरत इस दुनिया के नाशमान और आखीर में तकलीफ़ देने वाले सुखों का भरोसा न करके उनकी चाह सिर्फ़ ज़रूरत के मुवाफ़िक़ उठावें और सच्चे और पूरन और हमेशा क़ायम रहनेवाले सुख और आनन्द के हासिल करने के वास्ते और देह के संगी दुख सुख और जनम मरन की तकलीफ़ से बचने के लिये जिस क़दर आराम और आसानी के साथ कोशिश बन पडे हर रोज करें। और इस काम के करने के वास्ते मुवाफ़िक़ उपदेश राधास्वामी मत के यह जरूर नहीं है कि कोई आदमी अपना घर बार और कुटुम्ब परवार और उद्यम और रोज़गार को छोड़ दे—सिर्फ़ इतना दरकार है कि फ़ज़ूल चाहें संसार के भोग बिलास और नामवरी को छोडकर प्रेम और उमंग के साथ थोड़ा बहुत अभ्यास उस आसान जुक्ती का जो राधास्वामी दयाल ने अब जारी फ़रमाई है और जिस में किसी क़िस्म का ख़ौफ़ और खतरा नहीं है हर रोज एक घंटा या दो घंटे या ज्यादा दो दफ़े

या तीन दफ़े करे तो उसका फ़ायदा अभ्यासी को थोड़े दिनों में अपने अंतर में दिखलाई देगा और फिर उसका शौक़ सच्चे मालिक की दया से अंतर में परचे पाकर दिन २ बढ़ता जावेगा और इस तरकीब से एक दिन निज धाम में पहुंचकर सच्चे मालिक राधास्वामी का दर्शन मिल जावेगा ॥

७–और जो कोई सच्चे मालिक का खोज अपने घट में नहीं करेगा और सुरत शब्द जोग की जुगत को वास्ते हासिल होने दर्शन सच्चे मालिक के और पहुंचने धुर धाम के दरियाफ़्त करके उसकी कमाई नहीं करेगा और सिर्फ़ मज़हबी किताबों के पढ़ने और बाहर की पूजा और परमार्थी रसमों में अटका रहेगा जिनका सिलसिला रूह की धार के साथ अंतर में नहीं लगा हुआ है तो उसको सच्ची मुक्ती कभी नहीं हासिल होगी और न जनम मरन के चक्कर और माया की हद्द से बाहर जावेगा इसी लोक में या और ऊंचे नीचे लोकों में जनम पाकर सुख दुख भोगता रहेगा और यह उत्तम नर देही जिस में सच्चे परमार्थ की कमाई हो सक्ती है मुफ़्त बरबाद जावेगी और अख़ीर वक़्त पर अफ़सोस और पछतावा कुछ फ़ायदा न देवेगा। इस वास्ते हर एक आदमी को जो

अपने नफ़े और नुक़सान का तमीज कर सक्ता है मुनासिब है कि जहां दुनिया के सब काम करता है और रोजगार के लिये मेहनत सख्त उठाता है अपने जीव के कल्यान के लिये भी कुछ थोडो बहुत कररवाई दो घंटे तीन घंटे हर रोज बिला नाग़ा किया करे—इसमें उसका और उसके परवार का फायदा इस दुनिया में और बाद मरने के परलोक में होगा और बहुतसी तकलीफ़ और दुखों से राधास्वामी दयाल की कृपा से सहज में बचाव हो जावेगा ॥

बचन इकीसवां

सब जीवों को अभ्यास सुरत शब्द का वास्ते कल्यान और उद्धार अपने जीव के करना चाहिये ।

१—सब लोग हर रोज़ नौ द्वार के वार बर्त रहे हैं यानी (दो आंखों के, दो कानों के, दो नाक के, एक मुंह, एक पेशाब, और एक पाखाना का) कुल्ल नौ द्वारे जो पिण्ड में हैं इन में होकर सुरत की धार दुनिया के अनेक तरह के भोग और पदार्थों में बरतावा कर रही है और एक २ द्वार का रस और मजा जो हासिल होता है उसी में सब जीवों का निहायत दरजे का बंधन हो रहा है ॥

२-सब इन्द्रियों का पूरा २ भोग तो किसी बिरले जीव को जैसे महाराजों के महाराजा को हासिल होगा पर थोड़ी इन्द्रियों का भोग तो थोड़ा बहुत हर एक जीव को अपनी २ ताक़त और सामान के मुवाफ़िक़ हासिल है और उस में इस क़दर आसक्ती यानी बंधन मन का हो रहा है कि वग़ैर उसके जीव अपनी जिन्दगी मुशकिल समझता है और उसके छोडने में अपने जीव की हानि देखता है ॥

३-सुरत की बैठक तीसरे तिल में है जो दोनों आंखों के मध्य के मुक़ाबिल अंदर की तरफ़ है और उसी अस्थान से सब इन्द्रियों का सूत लगा हुआ है और उसी अस्थान से (जो सहसदलकंवल के नीचे है) सुरत की धारें सब इन्द्रियों में और कुल्ल देह के अंग २ में जारी हुई हैं गोया सुरत जोकि सूरज के मुवाफ़िक़ है अपनी किरनियों यानी धारों से सब देह में ब्यापक हो रही है और अपनी धारों से अंग २ को चेतन्य कर रही है ॥

४-जब कि सुरत की एक २ धार में जो कि एक २ इन्द्री के अस्थान पर आकर कररवाई करती है इस क़दर रस और आनन्द है कि कोई २ आदमी

सिर्फ़ एक २ इन्द्री के रस और मजे के शौक़ में अपनी जान और माल सब दे देते है जैसे शराबी या अफ़-यूनी और चटोरे खाने पीने और नशे के शौक़ वाले ज़बान इन्द्री के वस होकर अपना धन और तन उसके नजर कर देते हैं और तमाशबीन यानी वेश्यागामी आदमी काम इन्द्री के वस होकर अपनी जान और माल उस काम में ख़र्च कर देता है और अपने अजीज़ और रिश्तेदार और बिरादरी की मुहब्बत और शरम और ख़ौफ़ सब छोड़ देता है ते रूह यानो सुरत की धार में जो ऊंचे मुक़ाम यानी दसवें द्वार से पिण्ड में आती है (और जो अपने मुक़ाम पर बैठकर और अनेक धार होकर मिसल हज़ारा फ़ब्वारा के तमाम बदन में फैली है) किस क़दर रस और आनन्द होना चाहिये यानी उस धार को कुल्ल रस और मज़ा और आनन्द का (जो पिंड मे इन्द्रियों के वसीले से हासिल हो सक्के है) भंडार समझना चाहिये ॥

५ अक़लमंद आदमी जो इस बात को ग़ौर से समझे वह फ़ौरन् यह नतीजा निकाल सक्ता है कि जब कि सर्व रस और मज़े और आनन्द सुरत की धारों में है और वह सब मज़े रस और आनन्द

अंतर में हर एक जीव के मौजूद हैं जैसा कि स्वप्न अवस्था के हाल को बिचार करके मालूम हो सक्ता है तो फिर हर एक जीव को चाहिये कि जहां तक हो सके अपने अंतर में उन मज़ों और रसों को आसानी से हासिल करने की जुगत दरियाफ़्त करके थोड़ी बहुत उसकी कमाई शुरू कर देवे तो आहि-स्ता २ ज़रूर एक रोज़ उस अस्थान पर पहुंचना मुमकिन है जहां कि सुरत की निशिस्त (बैठक) है और जहां पहुंच कर उस सुरत की धार से (जो सब धारों का जो इन्द्रियों के द्वारे से जारी होती हैं ख़ज़ाना है) मिलकर उसका आनन्द (जिस में सर्व इन्द्रियों के मज़े शामिल हैं) ले सक्ता है ॥

६–यह बात कुछ नई और ज़्यादा मुश्किल मालूम नहीं होती क्योंकि बहुत से आदमी सिर्फ़ चार पांच इन्द्रियों के रस और स्वाद के हासिल करने के लिये रात दिन मेहनत करते हैं और फिर भी वह रस पूरे २ जैसा कि मन चाहता है हासिल नहीं होते और इन रसों के हासिल करने के लिये उनके सुरत की धार चार पांच द्वारों पर बैठकर अपनी ताक़त को बाहरमुख भोगों में ख़र्च करती है–और जिन को सर्व इन्द्रियों के रस हासिल हैं उनके सुरत की धार

का वरताव नौ द्वारों में हर रोज रहता है यानी इन द्वारों के वसीले से बाहर की तरफ दुनिया के भोगो और सामान में वह धारें रोज मर्रह बहती रहती है यानी खर्च होती रहती हैं-फिर दसवें द्वार की तरफ़ चलने के लिये जो अन्दर दिमाग़ यानी सिर के गुप्त है और जहां से शब्द की धार रूह यानी सुरत के अस्थान तक और वहां से नीचे की तरफ़ हर वक्त़ जारी है और तमाम बदन को चेतन्य और ताजा करती रहती है किस क़दर तवज्जह हर एक आदमी को करनी जरूर और मुनासिब मालूम होती है। जो इस क़दर मेहनत न बने जैसे कि दुनिया के भोगों के हासिल करने के लिये हर कोई कर रहा है तो थोड़ी सी मेहनत यानी दो तीन घंटे अभ्यास हर रोज करना अपनी रूह यानी जीव के फ़ायदे और कल्यान के वास्ते जरूर बल्कि फ़र्ज मालूम होता है॥

७-यह सच्च है कि अन्तर का मजा और रस सुरत शब्द जोग के वसीले से ऐसी जल्दी नहीं मालूम होता जैसे कि बाहर के भोगों का रस फ़ौरन इन्द्री के वसीले से मिलता है और सबब यह है कि इन्द्रियों की काररवाई करते हुए जीव को जन्मान जनम और

हाल के जनम में सालहा साल (बरसों तक) गुजर गये हैं और अंतरमुख शब्द की कमाई हाल में शुरू की है फिर कैसे दोनों अभ्यासों का फल बराबर जल्द मिले। सिवाय इसके इस काम में याने अभ्यास में बहुत थोड़ा वक़्त लगाया जाता है और उस में से भी बहुत सा वक़्त गुनावन यानी ख़्यालात दुनियावी में गुज़र जाता है और थोड़े से थोड़ा वक़्त ख़ालिस (निर्मल) अभ्यास में सर्फ़ (खर्च) होता है फिर किस तरह ऐसा जल्दी असर और फ़ायदा अंतरमुख कमाई का सही मालूम पड़े। शौक़ीन को इस वास्ते मुनासिब है कि जिस क़दर बन सके रोज़ाना अभ्यास जिस क़दर दुरुस्ती के साथ बने करता रहे और जो रस और आनंद आला दरजे का अंतर में न मालूम पड़े तो अपनी हालत की परख करके देखे कि अभ्यास से पहिले किस क़दर उसके मन का बंधन संसार और उस के पदार्थों में था और बाद गुज़रने कुछ अरसे जैसे एक दो बरस के किस क़दर प्यार और भाव उसको दुनिया और उसके पदार्थों में कम हुआ और किस क़दर प्रीत और प्रतीत उसकी सच्चे मालिक और गुरू के चरनों में बढ़ी और किस

क़दर उसका भजन और सतसंग में चाव और प्यार बढ़ा ॥

८– जो इस तरह अपनी हालत की परख करने से मालूम पड़े कि संसार और संसारियों की तरफ़ से तबीअत किसी क़दर दिन २ हटती जाती है और अंतर अभ्यास में और सतसंग और बानी के पाठ में ज़्यादा लगती जाती है और इधर का रस ज़्यादा आनन्द देता है और संसार के भोग दिन २ किसी क़दर फीके लगते मालूम होते हैं तो यही सबूत इस बात का है कि अन्तर का रस भारी और पायदार (ठहराऊ) है और बाहर भोगों का रस हलका और फीका और नाशमान है–फिर मुनासिब है कि जिस क़दर बने इसी अभ्यास को आहिस्ता २ बढ़ाता जावे और संसार की मुहब्बत आहिस्ता २ कम करता जावे तो रफ़्ता २ (धीरे २) एक दिन काम दुरुस्त बन जावेगा और इसी अभ्यास से एक दिन सच्ची मुक्ती और परम आनंद प्राप्त हो जावेगा ॥

९–मालूम होवे कि ऊपर जो कुछ लिखा है यह सच्चे अभ्यासी का हाल है यानी जिस के दिल में निर्मल चाह सच्चे मालिक के मिलने और अपने जीव के कल्यान करने की है और कोई दूसरी ख़्वा-

हिश (इच्छा) सिद्धी शक्ती की या मान बड़ाई हासिल करने की नहीं है और संसार के भोगों की फ़ज़ूल चाह जिस ने सचौटी के साथ दूर करी है या कम करता जाता है उसी की हालत अभ्यास करके आहिस्ता २ बदलती जावेगी और बुरे कामों से नफ़रत (हटाव) और नेक (शुभ) कामों में रग़बत (चाव) होती जावेगी और उसको अभ्यास की हालत में यह भी मालूम हो जावेगा कि इसी जुगत की कमाई से तन मन और इन्द्रियों से न्यारा होना मुमकिन है और फिर वही जीव संतों के वचन की परीक्षा अपने अंतर में बख़ूबी करता जावेगा और दिन २ राधास्वामी दयाल की मेहर और दया से प्रीत और प्रतीत उनके चरनों में बढ़ाकर एक दिन अपना काम पूरा बना लेवेगा। और जो कोई अपने मन और इन्द्रियों में आशक्त हैं और संसार के भोग और पदार्थों की चाह किसी क़दर ज़बर रखते हैं और उसको दूर या कम नहीं कर सक्ते उनकी हालत जल्द नहीं बदलेगी पर जो सतसंग और अभ्यास करते रहेंगे तो अव्वल (पहिले) उनके अंतर में सफ़ाई और फिर आहिस्ता २ चढ़ाई होती जावेगी और फिर हालत भी बदलती जावेगी॥

बचन बाईसवां

पुरुषार्थ और प्रारब्ध यानी मौज अथवा तदबीर और तक़दीर ॥

१—एक सतसंगी का प्रश्न है कि जीव पराधीन है या स्वाधीन, यानी जो कर्म यह चाहे अपनी ताक़त से कर सकता है या कि जैसा प्रारब्ध में लिखा है यानी जन्म के वक़्त जैसा लेख हो गया है उसी के मुवाफ़िक़ यह अपनी उमर भर में काररवाई करता है ॥

१—जवाब इस प्रश्न का यह है कि जीवों की दो क़िस्म हैं एक प्रेमी परमार्थी और दूसरे संसारी यानी दुनियादार ॥

प्रेमी परमार्थी जीवों का यह हाल है जैसा कि इन कड़ियों में लिखा है ॥

बिषियन से जो होय उदासा ।
परमारथ की जा मन आसा ॥
धन संतान प्रीत नहिं जाके ।
जगत पदारथ चाह न ताके ॥
तन इन्द्री आशक्त न होई ।
नींद भूख आलस जिन खोई ॥

बिरह बान जिन हिरदे लागा ।
खोजत फिरे साध गुरु जागा ॥
साध फ़क़ीर मिले जो कोई ।
सेवा करे करे दिल जोई ॥

ऐसी हालत जिस किसी की है वह संसारी मुआमलों की तरफ़ तवज्जह कम रखता है और इन मुआमलों में जो कुछ जतन बन आवे और जैसा कुछ उसका फल होवे उसको मालिक की मौज अपने वास्ते समझकर उस पर राज़ी रहता है और दुख सुख और तकलीफ़ की हालत में कभी अपने मालिक को नहीं भूलता है और न कभी मालिक की शिकायत करता है और पूरी २ सरन सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल की लेकर अपनी तवज्जह परमार्थ के जतन में लगाता है और सच्चे मालिक के दर्शन और प्रसन्नता की चाह सब से ज़बर रखता है ॥

२–ऐसे जीवों का हिसाब अलहदा है यानी उन के वास्ते जो कुछ होता है और उन से जो कुछ कि बनता है वह सब कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की मौज से होता है वह तो सच्चे २ सरन में आकर बाल समान अपने सच्चे माता पिता राधास्वामी दयाल के आसरे और उनकी दया के भरोसे पर

जीते हैं और सब अपने कारोबार और कुटुम्ब परवार को उनकी मौज के आसरे रखते है यानी जैसे वे रक्खें उसी में राज़ी रहते हैं और दुनिया के दस्तूर के मुवाफ़िक़ थोड़ा बहुत जतन भी दुनिया के कामों में करते हैं पर उस में राधास्वामी दयाल की मौज को अपनी चाह और जरूरत पर फ़ायक़ (ज़ब्बर) रखते हैं और कभी मौज से नाराज नहीं होते है ॥

३–ऐसे जीव पुरुपार्थ का कुछ भरोसा नहीं रखते सिर्फ़ अपने मालिक के हुक्म और मौज को सब कामो में मानते हैं और समझते है कि जो कुछ उनके और उनके कुटुम्ब और परवार के वास्ते होता है वह राधास्वामी दयाल माता और पिता के हुक्म से होता है और मा बाप अपने बच्चों के वास्ते कभी कोई बात तकलीफ़ या नुक़सान की नहीं करेंगे इस वास्ते जब कोई बात जाहिर में नुक़सान या तकलीफ़ की पैदा होवे तो उस में मसलहत और अपना असली नफ़ा और फ़ायदा समझते है जैसे कि जब बालक को फोड़ा निकलता है तो माता उस को डाक्टर से बालक को अपनी गोद में लेकर चीरा दिलवाती है उस वक्त़ ज़ाहिर में यह काम दुखदाई

मालूम होता है पर फ़ायदा उसका थोड़े अरसे में ज़ाहिर होगा कि फोड़े का दर्द दूर हो जावेगा और जल्द उसको आराम होवेगा ॥

दूसरे संसारी जीव यानी दुनियादार ॥

४—इन जीवों को अपने सच्चे मालिक के अंतर में हर वक्त़ अंग संग मौजूद होने और उसको समरत्थता और दयालुता और हर दम ख़बरगीरी करने का पूरा २ निश्चय नहीं है इस वास्ते वे अपने पुरुषार्थ यानी जतन और तदबीर का आसरा और भरोसा रखते है और उसी में प्रवृत्त रहते हैं। सच्चे मालिक का भरोसा इनके दिल में नहीं आता है और जो कोई ऐसा मानता है उसको वे नादान और सुस्त और आलसी समझते है इस सबब से यह जीव प्रारब्ध यानी मालिक की मौज या हुक्म को नहीं मानते और अपने सब कामों की जवाबदेही यानी बोझ भार अपने सिर पर लेते हैं और जब कोई काम उनकी मरज़ी और चाह के मुवाफ़िक़ दुरुस्त बन जावे तब अपने पुरुषार्थ और बुद्धी की महिमा करते हैं और जो उनकी चाह के मुवाफ़िक़ न बने तो किसी न किसी जीव को या अपनी समझ बूझ या अपनी काररवाई को दोष

लगावेंगे कि उसने फ़लानी बात हमारे कहने के मुवाफ़िक़ नहीं की या कोई बात हम चूक या भूल गये नहीं तो वह काम ज़रूर ऐसा बन जाता और जब कोई नुक़सान हो जावे तब भी दूसरे शख़्स को या बीमारी या हकीम और डाक्टर वग़ैर: या अपने भाग को दोष लगावेंगे। पर यह बहुत कम कहेंगे कि मालिक के हुक्म से ऐसा हुआ या उस की मरज़ी ऐसी ही थी॥

इस वास्ते इन लोगों के वास्ते पुरुषार्थ यानी जतन मुख्य है इन से कभी प्रारब्ध यानी मालिक के हुक्म के आसरे निश्चल नहीं रहा जावेगा और जो कोई इनको ऐसी सलाह देगा उस को धोखा देने वाला और अपना नुक़सान करानेवाला समझेंगे और उसकी सलाह नहीं मानेंगे।

४–सिवाय इन दो क़िस्म के जीवों के एक तीसरी क़िस्म और भी है उस क़िस्म में वे जीव है कि जो नये परमार्थ में आये हैं और जिन को अभी पूरी प्रीत और प्रतीत सच्चे मालिक के चरणों में नहीं आई है और जिन के दिल में अभी दुनिया के भोग बिलास की चाह बहुत जबर है और परमार्थ की कमाई इस क़दर करना चाहते है कि जिस में उन

के दुनिया के आराम और भोग बिलास में कमी या ख़लल (बिघन) न पड़े और राधास्वामी दयाल की सरन भी सिर्फ़ इस क़दर ली है कि जिस में उन के जीव का अंत समय गुजारा हो जावे यानी दुखों से और नरकों की तकलीफ़ से बचाव हो जावे और आहिस्ता २ एक दिन अपने निज घर मे राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की कृपा से पहुंच जावें पर इस काम में ऐसी जल्दी भी नहीं चाहते कि जिसमें उनके दुनिया के व्यौहार और आराम में किसी तरह का नुक़सान या ख़लल पैदा होवे बल्कि ऐसा चाहते हैं कि दुनिया की भी तरक़्क़ी यानी बृद्धी होती रहे और परमार्थ भी थोड़ा बहुत बन जावे ॥

६—ऐसे जीव जब तक कि उनकी मरजी और चाह के मुवाफ़िक़ सब काम उनके दुनिया और परमार्थ के बनते जावेंगे तब तक तो मौज और हुक्म सच्चे मालिक को थापते और मानते रहेंगे और जब कोई काम उनकी चाह के मुवाफ़िक़ दुरुस्त नहीं होगा या किसी तरह का कोई नुक़सान होवेगा उस वक़्त जो कोई यह कहेगा कि मौज से हुआ तो नाराज़ हो जावेंगे और गुस्से में भर आवेंगे और

सच्चे मालिक पर तान लगावेंगे कि वह बेरहम और निर्दई है और अपने बच्चों पर दया नहीं करता क्या वह दुनिया का थोड़ा सा सुख जो हज़ारों जीव दुनियादार भोग रहे हैं अपने भक्तों को नहीं दे सक्ता या उनकी थोड़ी चाह दुनियां की पूरी नहीं कर सक्ता वह तो समरत्थ है चाहे जो कुछ कर सक्ता है और चाहे तो बग़ैर किसी तकलीफ़ के सब काम अपने भक्तों का बना सकता है और मन की चंचलता और मलीनता और काम, क्रोध, लोभ, मोह वग़ैरह के ज़ोर को भी घटा सक्ता है फिर वह ऐसी दया क्यों नहीं करता। और सबब न होने ऐसे कामों का उनकी चाह के मुवाफ़िक़ उनकी समझ में जैसा चाहिये नहीं आ सक्ता है इस वास्ते वे हमेशा डग मग यानी डामां डोल रहते है कभी प्रीत और प्रतीतवान और कभी रूखे और फीके और बे प्रतीत पर जो ऐसे जीव सतसंग और परमार्थ में संतों के लगे रहेंगे तो धीरे २ उनका भी काम बन जावेगा और एक दिन सच्चे और पूरे प्रेमियों के घाट यानी दरजे पर आजावेंगे और तब वे भी सच्चे मालिक की मौज को हर एक काम में मानने लगेंगे ॥

बचन तेईसवां

परमार्थ में गुरू की ज़रूरत और उनकी क़िस्म और दरजे और भेद ॥

१–कोई काम दुनिया का ऐसा नहीं है कि जो बिना उस्ताद के सिखाये हुए कोई आदमी (औरत या मर्द) कर सके यहां तक कि बच्चे को खड़ा होना और चलना और खाना और पीना बग़ैर सिखाये नहीं आता है और लिखना और पढ़ना और हर पेशे का काम तो जरूर मास्टर या उस्ताद से सीखना पडता है इसी तरह सच्चे परमार्थ यानी सच्ची मुक्ती के हासिल करने के लिये भी अभ्यास के सिखाने वाले की जिस को गुरू कहते हैं निहायत जरूरत है ॥

२–पण्डित या प्रोहित या पाधे जो परमार्थी शास्तर या पोथियां पढ़ाते हैं या करम कराते हैं या बाहरी पूजा और होम और यज्ञ कराते हैं इनको गुरू नहीं कहा जा सक्ता है। जो कोई आप पढ़ना जानता है यानी थोड़ा बहुत विद्यावान है वह कर्म-काण्ड और ज़ाहिरी पूजा की किताबें आप पढ़ सक्ता है और उनकी काररवाई करा सक्ता है पर ऐसा दस्तूर रक्खा गया है कि चाहे कोई पढ़ना जाने

या नहीं वह सब पंडित या पाधे या प्रोहित से कर्म काण्ड की काररवाई में मदद लेते है और उसी वक़्त उनका हक़ मिहनत यानी जो उनका दस्तूर हर एक पूजा और रस्म और त्यौहार वग़ैरह का मुक़र्रर है उनको अदा कर देते हैं ॥

३–आम परमार्थी गुरू की दो क़िस्म है–एक वंशावली गुरू–और दूसरा नेष्टावान यानी अभ्यासी गुरू।

पहिले–वंशावली गुरू वह हैं कि जिनके घराने में चेला करने का व्योहार जारी है और इनकी तीन क़िस्म हैं ॥

(१) पंडित यानी ब्राह्मण–इनको हिन्दुस्तान में पुराने वक़्तों से लोग बड़ा मानते चले आये है और जब किसी को मुक़र्ररः उमर पर जरूरत गुरू करने की होती है तब पंडित या प्रोहित या साधारण ब्राह्मण को अपना गुरू बनाते हैं और उससे जिस देवता का इष्ट बांधना और पूजन करना मंज़ूर होवे उसी का मंत्र और विधी ज़ाहिरी पूजा की दरियाफ़्त करके पूजा जारी करते हैं और मंत्र का जबानी जाप करते हैं।

(२) भेष जिन्होंने फ़क़ीर या साधू के कपड़े पहने है और अपना घर बार छोड़ दिया है या संयोगी साधुवों की तरह से गृहस्त में रहते हैं। जो कोई उनके पास

परमार्थ की चाह लेकर जावे तो वह उसको या तो कपड़े रंगीन देकर फ़कीर या साधू बना लेते हैं और जैसा कुछ कि उन्हों ने अपने गुरू से सुना है या बानो में पढ़ा है उसके मुवाफ़िक़ मंत्र या नाम का उपदेश कर देते है और गृहस्ती होंय तो सिर्फ़ उसको उपदेश मंत्र या नाम का कर देते हैं। यह लोग भी पंडितों और ब्राह्मणों के मुवाफ़िक़ मंत्र या नाम का ज़बानी जाप बताते है। ऐसे साधू बहुत कम हैं कि जो मन से या स्वांसा से जपने की बिधी नाम की बतावें और नामी का भेद अंतर में तो कोई नहीं बतलाता है बल्कि पण्डित और भेष दोंनों इस भेद को आपही नहीं जानते हैं॥

(३) गुसांई और महंत और साहबज़ादे—यह लोग चाहे जिस क़ौम से होवें किसी नेष्टावान गुरू की औलाद में या उन के सिलसिले मे गद्दी नशीन होने से गुरू कहलाते हैं और अपने घराने के पुराने चेलों की औलाद और उनके रिश्तेदारों को उपदेश मंत्र या नाम का जबानी जाप करने का देते हैं पर आप नेष्टावान नहीं हैं और न अपने बुजुर्ग या गुरू की नेष्टा यानी अभ्यास की जुक्ती से वाक़िफ़ हैं और न उसको जानना चाहते हैं क्योंकि यह संसारी हैं

और सिवाय अपने घराने के सेवकों की औलाद और अपने चेलों से धन और माल लेने के और चाह नहीं रखते-इनका भी आदर और भाव इनके चेले पण्डित और ब्राह्मण और भेपों के मुवाफ़िक़ करते हैं बल्कि कहीं २ उन से बहुत जियादा खातिर और पूजा इन लोगों की होती है॥

और मालूम होवे इनके चेलों में से कोई सच्चा खोजी परमार्थ का नहीं है और जो कोई ऐसा है वह फ़ौरन इनको छोड़कर सच्चे गुरू की खोज करके और वहां से उपदेश लेकर अपना काम परमार्थी जारी करता है-यह वंशावली गुरू ऐसी हालत किसी अपने चेले की देखकर उसको बहुत दिक़ और तङ्ग करना चाहते हैं पर जो कि यह लोग सच्चा परमार्थ बिलकुल नहीं जानते इस सबब से कोई काररवाई इनकी उसके साथ पेश नहीं जाती॥

दूसरे-नेष्टावान गुरू उनको कहते हैं कि जो अपने मत के सिद्धांत का भेद घट में दरियाफ़्त करके और वहां तक अपने मन और प्राण को चढ़ाने की जुगत का अभ्यास जैसा कि वेद और शास्त्र या और मज़-हबी किताबों में पिछले महात्माओं ने लिखा है अपने वक़्त के नेष्टावान गुरू से उपदेश लेकर उसकी

कमाई करते हैं और अभ्यास करके उस दरजे तक पहुंचे हैं या पहुंचने वाले हैं। इस क़िस्म के गुरुओं के चार दरजे है।

(१) सिद्ध गुरू–इनका दरजा बहुत नीचा है और यह अकसर नीचे दरजे की सिद्धी और शक्ती में अटक कर रह गये और इनका और इनके संगियों का उद्धार नही होता–यानी स्थूल माया के घेर में ऊंचे नीचे देश और जोनों में जनमते मरते रहते हैं॥

(२) प्रेमी और भक्त गुरू यह कोई औतार स्वरूप या किसी बड़े देवता जैसे विष्णु या शिव या शक्ती की अन्तरमुख उपासना अपने घट में करके उसके लोक तक पहुंचे या पहुंचनेहार हैं और वे उसी स्वरूप या दवता की भक्ती अपने सेवकों को सिखाते हैं और अन्तर में उस स्वरूप का दर्शन पाने और उसके लोक तक पहुंचने की जुगत बताते है। यह भी माया की हद्द में रहे और न इनका और न इनके संगियों का पूरा उद्धार हुआ। अलबत्ता बहुत काल के लिये मरने के बाद अच्छे सुख स्थान में या अपने उपास्य के लोक में बासा पाते हैं और वहां अपने उपास्य के दर्शन और संग का आनंद लेते हैं और कोई २ उसी रूप से मिलकर एक हो जाते हैं

और अपना आपा बिसर जाते हैं—चार क़िस्म की मुक्ती इनके मत में मुक़र्रर है और वह चार यह हैं—

पहली सालोक—अपने उपाश्य के लोक में बसना।

दूसरी सामीप—अपने उपाश्य के पास रहना।

तीसरी सारूप—यानी अपने उपाश्य का रूप धारन करना।

चौथी सायुज्य—अपने उपाश्य से मिलकर एक हो जाना।

ऐसे अभ्यासी गुरू आज कल बहुत कम मिलते हैं—इन सब के मत या घराने में जो कोई कि हैं वह सब के सब या तो मूर्त और तीर्थ पूजा में लग गये या वाचक ज्ञान सीख कर अपने को ब्रह्मरूप मान कर पूरे बन बैठे है और नेष्ठा यानी अभ्यास की जुगत इनके मत या घराने में कोई नहीं जानता है और न अपने आचार्यों की बानी को पढ़ते हैं और जो पढ़ते हैं तो उसमें जो जुक्ती का इशारा किया है इनकी समझ में नहीं आता और न इनको इस बात का खोज है कि किसी अभ्यासी गुरू से मिल कर उसका हाल दरियाफ़्त करें और नेष्ठा करें॥

(३) तीसरे जोगी गुरू—यह मुद्रा या प्राणायाम की साधना करके अपने मन और प्राण को चढ़ा कर छठे

चक्र तक पहुंचाते है और अपने सेवकों को भी इसी अभ्यास का उपदेश करते हैं–बाजे इन में से गुरू में कोई २ साधन हठ जोग के वास्ते सफ़ाई मन के करते है और उन मे बड़ी कष्टा और भारी तकलीफ़ें उठाते हैं–यह भी ब्रह्माण्डी माया के घेर में रहे और इस वास्ते पूरा उद्धार उनका भी नहीं हुआ अलबत्ता परमात्मा का दर्शन उनको प्राप्त हुआ। और चिदाकाश मे समाये–पर वहां से बहुत से काल के पीछे उत्थान होता है। ऐसे महात्मा गुरू आज कल दुर्लभ है और इनके घराने में भी मूरत या कोई निशान की पूजा जारी हो गई॥

(४) चौथे जोगेश्वर ज्ञानी–यह भी मुवाफ़िक़ जोगियों के अभ्यास करके पहले ब्रह्म पद और फिर उसके परे पारब्रह्म पद में पहुंचे और तीन लोक की माया को जीत लिया–पर आदि माया के मंडल के पार नही गये–पर कुल्ल नेष्टावालों में इनका दरजा बहुत ऊंचा है–ऐसे महापुरुष गुरू आज कल महा दुर्लभ है और जिस किसी को मिल जावें उसके बड़े भाग॥

पिछले वक्त में वशिष्ठ जी और व्यास जी और रामचन्द्र जी और कृष्ण महाराज इस दरजे तक पहुंच

और अब इनके घराने में आम तौर पर मूरत और तीर्थ पूजा या बाचक ज्ञान जारी है और अन्तर मुख साधन का जिकर बहुत कम है और जो कहीं कोई साधन करते हैं तो वह दृष्टी की साधना या नाम का अन्तरमुख सुमिरन से ज्यादा नहीं जानते और यह काम भी बेठिकाने करते है यानी भेदी नेष्ठावान गुरू से भेद लेकर अभ्यास नहीं करते हैं। इस सबब से उनको फायदा बहुत कम होता है पर अहंकार बड़ा भारी उनके मन में पैदा हो जाता है॥

४-इनके सिवाय आज कल वाचक ज्ञानी ज्ञान के ग्रन्थों को पढ़कर और विद्या बुद्धी के मुवाफ़िक़ उनके बाहरी अर्थ समझकर अपने तईं ब्रह्म मानते हैं और जीवों को भी यही उपदेश सुनाते और समझाते हैं। जो बचन एकताई के कि जोगेश्वर ज्ञानियों ने अपने सिद्धांत के ग्रन्थों मे लिखे है उनको इन लोगों ने अलहिदा छांट लिया है और उपाशना और जोग अभ्यास के अंग को उन ग्रन्थों में से छोड़ दिया। वहां साफ़ लिखा है कि जब तक अन्तरमुख उपाशना और जोग अभ्यास करके चार साधन यानी बैराग-बिबेक-षट्सम्पति और ममोक्षता पूरे २ न आवें तब तक सिद्धान्त यानी एकताई के बचनों के

पढ़ने और सुनने का कोई जीव अधिकारी नहीं है पर इन बाचक ज्ञानियों ने इस बचन के अपने मन समझौती के अर्थ लगाकर आपको ज्ञानी मानकर सहज में थोड़े से ग्रन्थ पढ़ कर ब्रह्म स्वरूप बन जाना पसंद किया। इस सबब से सिवाय पढ़ने और पढ़ाने ज्ञान के ग्रन्थों के और ज्ञान की बातें बनाने के असली हालत इनके मन और इन्द्रियों की नहीं बदलती और जो कि कोई अन्तरमुख अभ्यास यह लोग नहीं करते और न जानते हैं इस सबब से इनके मन और इन्द्रियों की हालत थोड़ी बहुत मुवाफ़िक़ संसारी जीवों के मन और इन्द्रियों के रहती है॥

५—आम दस्तूर है कि मन ऊंचे से ऊंचे और बढ़ से बढ़ की बात को जल्दी से और बेमिहनत और तकलीफ़ के हासिल करना चाहता है। इस सबब से हर आदमी जिसको थोड़ी बहुत विद्या और समझ हासिल है इस मत में जल्द शामिल हो जाता है और अहंकार करके अपनी असली हालत की (कि निपट संसारियों के मुवाफ़िक़ है) बिल्कुल परख नहीं करता। यह बाचक ज्ञानी निर्भय होकर भेषों और ब्राह्मणों और गृहस्तियों को बग़ैर परखने उनके अधिकार के बाचक ज्ञानी बनाते चले जाते हैं।

इस में भारी नुक़सान उनका और उनके संगियों का होता है कि वे भक्ती मारग में शामिल होने के लायक़ नहीं रहते और दीनता मन में बिल्कुल नहीं रहती इस सबब से उनके उद्धार का रास्ता बिल्कुल बन्द हो जाता है ॥

६-इस समय में थोड़े या बहुत सब मतों के लोग जिनको थोड़ी विद्या और बुद्धी हासिल है वाचक ज्ञान को पसंद करके इस नये मत में शामिल होते चले जाते हैं क्योंकि इस में उनको बिल्कुल आज़ादी यानी निरबंधता हासिल हो जाती है और किसी का खौफ़ और शरम नहीं रहती निरभय होकर मन और इन्द्रियों की धारों में बहते हैं और अपने हाल से बेख़बर रहते है। इन बेचारों ने बड़ा धोखा खाया पर इनका इलाज कुछ नहीं है क्योंकि यह साधन करने वालों की बात बिल्कुल नहीं सुनना चाहते है बल्कि उनको नादान समझते हैं और अपने आपको समझदार और होशियार मानते हैं। यह लोग अपनी करनी और व्यौहार के मुवाफ़िक़ अंत में फल पावेंगे ॥

७-इन गुरुओं से जिनका जिकर ऊपर लिखा गया (जो वह अपने मत के पूरे नेष्ठावान भी होवें)

जीव का सच्चा उद्धार नहीं हो सकता है क्योंकि उनका सिद्धांत पद माया की हद्द में है इस वास्ते अब उन महापुरुषों का ज़िकर कि जिनके वसीले से जीव सच्ची मुक्ती हासिल कर सके किया जाता है और उनका नाम संतसतगुरु और साध गुरू है। संतसतगुरु उनको कहते हैं कि जो पिंडी और ब्रह्मांडी माया की हद्द के पार जहां दयाल देश अथवा निरमल चैतन्य देश है पहुंचकर सच्चे मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी से मिले और उनका रास्ता चलने का घट में है और सुरतशब्द जोग के अभ्यास से वह रास्ता तै करके अभ्यासी उस देश में पहुंच सक्ता है और वहां पहुंचकर जन्म मरन से रहित होकर परम आनंद को प्राप्त होता है वह देश भी अमर है और वहां का आनंद भी अपार और अमर है॥

साधगुरू उनको कहते हैं कि संतों की जुगती के मुवाफ़िक़ अभ्यास करके मुक़ाम सुन्न में जो त्रिकुटी और ओंकार पद के परे है पहुंचे हैं और आगे संत गती को प्राप्त होनेवाले है। इनसे मिल कर भी जीव को वही फ़ायदा हो सक्ता है जैसा कि संतसतगुरु से क्योंकि साधगुरू संतसतगुरु के बनाये हुए हैं॥

८–जब तक कि जीव को इन दोनों महापुरुषों में से कोई न मिलेगा और वह उनको अपना गुरू या सतगुरु धारन करके प्रेम सहित सुरतशब्द जोग की कमाई न करेगा तब तक सच्चा उद्धार या सच्ची मुक्ती किसी तरह हासिल नहीं हो सक्ती है। इस वास्ते सब जीवों को जो अपना सच्चा कल्यान चाहते हैं मुनासिब और ज़रूर है कि संतसतगुरु या साध गुरू को खोज कर उनकी सरन लेवें और उन्हीं की बानी का पाठ और उन्हीं की जुगती का अभ्यास करें यह भेद और यह जुगत और किसी मत में नहीं है ॥

९–जो कोई कहे कि हम एक बार गुरू कर चुके है (और वह उसी क़िस्म में से है जिनका ज़िकर पहिले हो चुका है) अब दुबारा संतसतगुरु या साधगुरू को कैसे गुरु धारन करें इसका जवाब यह है कि जो गुरू कि बाहरमुखी पूजा का जैसे मूरत और तीरथ का उपदेश करते हैं या इष्ट ब्रह्म या ईश्वर या देवताओं का बंधवाते हैं या अन्तर में नाम का सुमिरन या दृष्टी का साधन या ध्यान बिना पते और भेद उस स्वरूप के जिसका ध्यान किया जावे बताते हैं पर घट का भेद और जुगत

अन्तर में चलने की नहीं जानते और सच्चे मालिक और उसके धाम की और उस से मिलने के रास्ते की जिनको ख़बर भी नहीं है ऐसों का नाम साधगुरू या सतगुरु नहीं हो सक्ता है फिर जब कि किसी ने उनसे उपदेश लिया और इनको भरम करके और अनसमझता से गुरू माना और असल में वे गुरू नहीं हैं तो फिर इनके छोड़ने में किसी तरह का दोष या पाप या नुक़सान नहीं हो सक्ता। यह लोग तो अक्सर करके मान और धन के लोभी हैं और सच्चे परमार्थ से न आप वाक़िफ़ हैं और न दूसरे को समझा सकते हैं और न कभी अपने चेलों से परमार्थ की कमाई का हाल पूछते हैं और न ज़िक्र करते हैं, फिर उनके छोड़ने में किसी तरह का हर्ज नहीं हो सक्ता है। अलबत्ता उनकी पूजा और भेंट बन्द न करना चाहिये यानी जब वे आवें तो उनके दस्तूर के मुवाफ़िक़ पूजा भेंट कर देना चाहिये और इतनाही वह चाहते हैं। संतों का वचन है। दोहा। झूठे गुरु की टेक को तजत न कीजे बार। द्वार न पावे शब्द का भटके बारम्बार॥ अलबत्ता जिसको पहले ही भाग से सच्चे और पूरे गुरू मिल जावें तो उसको फिर कोई ज़रूरत दूसरे गुरू के खोजने और धारन करने की न

होगी क्योंकि वे सब भेद और जुगत बता कर पूरी शान्ती सेवक की कर देंगे और अंतर में उसके अभ्यास में मदद देते रहेंगे। और जो कोई मूर्खता से हठ कर के ओछे गुरू को नहीं छोडेगा और जब संतसतगुरु भाग से मिलें उनकी सरन नहीं लेगा तो उस का भारी अकाज होगा यानी उसका उद्धार हरगिज नहीं होवेगा ॥

१०—बाजे लोग ऐसा ख़्याल करते है कि स्त्री और पुरुष एक गुरू के चेले होने से आपस में भाई और बहन समझे जावेंगे इस वास्ते जोरू और ख़ाविंद को एकही गुरू से उपदेश लेना नहीं चाहिये। यह ख़्याल बिल्कुल ग़लत है—साधगुरू और संतसतगरु का दरजा पारब्रह्म और सत्तपुर्ष के बराबर है तो वे सब रचना के करता और मालिक हुए। कुल्ल जीव रचना में मालिक के बाल बच्चे हैं और सब आपस में भाई और बहन हैं फिर वही रिश्ता परमार्थ में भी जब कि भाग से किसा को संतसतगुरु या साधगुरु मिल जावें समझा जावेगा और व्यौहार में खाविन्द और जोरू का नाता बदस्तूर क़ायम रहेगा इस में कोई दोष नहीं लगता ऐसा भरम किसी को अपने चित्त में नहीं लाना

चाहिये नहीं तो अपना या अपनी स्त्री का अकाज करेगा । बहुत से देशों और शहरों में बंशावली गुरू से कुल्ल घर के लोग क्या स्त्री या पुरुष उपदेश लेते हैं और ऐसा संशय या भरम जिसका ऊपर ज़िकर हुआ है मन में नहीं लाते हैं ॥

११-बहुत से जीव परमेश्वर या देवता या किसी पिछले औतार या गुरू को (जिनका इष्ट या पूजन उनके घराने में अरसे से चला आता है) टेक बांध कर निश्चिन्त हो जाते हैं और कहते हैं कि नये गुरू या इष्ट की कुछ जरूरत नहीं है जो उनको पुराने इष्ट की प्रतीत है तो इसी में उनका काम बन जावेगा यह समझ उनकी बिल्कुल ग़लत है-पर जो वे निपट संसारी हैं और परमार्थ की चाह और खोज उनके मन में बिल्कुल नहीं है तो उनको इख्तियार है कि चाहे जिसकी टेक बांध कर चुप्प बैठे रहें या किसी को भी न मानें और न कुछ परमार्थ की करनी करें पर वह लोग जो अपने और दुनिया के हाल को देखकर उसके दुख सुख और देह के जनम मरन से छूटना चाहते हैं वे टेकियों को मूरख और संसारी समझकर उनका संग नहीं देंगे और आप सच्चे गुरू को खोज कर उनका सतसंग करेंगे

और उपदेश लेकर अपने जीव के कल्यान के वास्ते नित अभ्यास अपने निज घर मे पहुंचने की युक्ती का करके अपना काम बनावेंगे और किसी तरह की अटक और भरम अपने चित्त में निस्वत सच्चे गुरू और सच्चे मालिक के इष्ट के धारन करने मे नही लावेंगे—अलबत्ता पहले कोई दिन सतसंग करके उनके बचन और उपदेश की थोड़ी बहुत अपनी समझ और वाक़िफ़कारी के मुवाफ़िक़ इस क़दर जांच करेंगे कि जिस से उनके दिल को पूरा यक़ीन इस बात का हो जावे कि ज़रूर संतों की जुक्ती की कमाई से सच्ची मुक्ती और पूरा उद्धार हासिल होगा—यानी सच्चे मालिक के धाम में जो सब से ऊंचा और सब के परे है और जहां से कुल्ल रचना हुई और उसकी सम्हाल जारी है एक दिन संतसतगुरु और कुल्ल मालिक की दया से पहुंच जावेंगे और वहां पूरन और अमर आनन्द पावेंगे ॥

१२—इस जगह इतना बयान करना ज़रूर है कि चाहे कोई कैसी मज़बूत टेक परमेश्वर या किसी औतार या देवता या पिछले गुरू की रखता होवे उसका सच्चा उद्धार बग़ैर अपने वक़्त के संतसतगुरु या साधगुरू के सतसंग और उपदेश के किसी सूरत

में मुमकिन नहीं है—क्योंकि हर एक जीव के मन में अनेक तरह के भरम और संशय रहते हैं और दुनिया और उसके व्यौहार और सामान की पकड़ और उसमें आशक्ती हर एक के मन में बहुत धसी रहती है और बहुत सी संसारी और परमार्थी बातों की समझ अपनी २ बुद्धी के मुवाफ़िक़ हर एक रखता है—जब सच्चे परमार्थ और सतसंग में आवे तब उसको ख़बर अपनी ग़लती की मालूम होती है और जो इष्ट कि उसने बांधा है उसका भेद भी पूरा २ मालूम होता है। सब देवताओं और ईश्वर और परमेश्वर और ब्रह्म और पारब्रह्म का भेद और दरजा भी संतों के सतसंग में मालूम होवेगा और दूसरी जगह यानी और मतों में इष्ट का निरनय बहुत कम करते हैं इस सबब से जीव नीचे और ऊंचे देशों में माया के घेर के अन्दर पड़े रहते हैं। इसी तरह मन और माया का भेद और उनके अनेक दरजों की खबर संतों के सतसंग में मालूम पड़ेगी और जुगत चलने और मन माया से बचकर अपने निज घर में पहुंचने की भी वहीं हासिल होवेगी। अब ख़्याल करना चाहिये कि जो कोई अपने बुजुर्गों से सुनकर किसी इष्ट की टेक बांधे हुए है और

अपने वक़्त के गुरू यानी सच्चे परमार्थ के भेदी का खोज नहीं करते और जो उनका पता भी लगे तो उनसे नहीं मिलते और न कोई बात दरियाफ़्त करना चाहते है–तो ऐसे शख़्सों को कभी सच्चे मालिक की ख़बर न होगी और न अपने इष्ट में जैसा कुछ कि है सच्ची प्रीत और प्रतीत आवेगी और न उनको परमार्थ के चाल ढाल की खबर पड़ेगी और न दुनिया और मन और माया के धोखों का हाल मालूम होगा और न उसके संशय और भरम दूर होवेंगे। फिर ऐसे जीवों को असली फ़ायदा परमार्थ का कैसे हासिल हो सक्ता है–वे अपने मन की चाल और व्यौहार के मुवाफ़िक़ अपनी भली बुरी करनी का फल सुख या दुख नीच ऊंच जोनों में पावेंगे और सच्ची मुक्ती उनको कभी नहीं मिलेगी॥

१३–गुरू और सतगुरु और संत नाम मालिक के हैं–और जो कोई सच्चा और पूरा अभ्यासी है और मिहनत के साथ अभ्यास करके मालिक के चरनों में पहुंचा है वह मालिक के साथ मिल कर एक हो गया या मालिक का प्यारा पुत्र होगया–फिर उसका भाव और अदब उसी तरह करना मुनासिब है जैसा कि मालिक का। और जो कि संत मत में बिना

पूरे गुरू के पूरा काम नहीं बन सक्ता इस वास्ते आम हुक्म है कि जो कोई गुरू धारन करना चाहे या सच्चे मालिक का और अपने निज घर का भेद और रास्ता और जुगत उसके तै करने की दरियाफ़्त करना चाहे तो उसको चाहिये कि संत सतगुरु या साध-गुरू को खोज कर उनकी सरन लेवे। और जहाँ तहाँ संतों की बानी में जो गुरू और सतगुरु और संत का नाम आया है उसका मतलब दोनों से यानी सच्चे मालिक और पूरे गुरू से है–और इस नाम का लिहाज और ख्याल मालिक को आप मंज़ूर है–यानी जो कोई उसको इस नाम से सच्चे मन से पुकारता है तो वह ज़रूर किसी न किसी तरह से उसकी मदद यानी उस पर गुप्त दया करता है। और यह बात साफ़ ज़ाहिर है कि जो कोई बिना सतगुरु से मिले हुए और उनका सतसंग और सेवा किये हुए मालिक से मिलने की अभिलाषा करता है वह नादान है–उसको कभी मालिक का दर्शन नहीं मिल सक्ता–क्योंकि सच्चे गुरू जीव की गढ़त करके यानी उसकी अन्तर और बाहर दुरुस्ती करके और उसके मन में सच्चा प्रेम और भक्ती सच्चे मालिक की पैदा करके उसको क़ाबिल मालिक के दरबार में

दाखिल होने के बनाते हैं—और जितने कि आसुरी यानी हैवानी या काल के अंग उस में हैं उनको दूर करके दैवी यानी दयाल के अंग उसके अंतर में जगाते और पैदा करते है और उसके मन और संसारी बासना का अभ्यास कराके जीते जी नाश करा देते है—तब जीव सच्चे मालिक के दर्शनों के क़ाबिल होता है—और जो इस तौर से उसकी तरबियत (अधिकारी और पात्र बनाना) और गढ़त नहीं होवे तो वह मुवाफ़िक़ पशुओं के यानी हैवानों के रहता है और किसी हालत में मालिक के दरबार में नहीं पहुंच सक्ता है और न वहां ठहर सक्ता है ॥

१४—जैसे हाकिम ने हुक्म दे रक्खा है कि जो कोई डाक्टरी या वकालत या मुन्सफ़ी या इञ्जिनियरी का इम्तिहान अपनी लियाक़त और क़ाबिलियत का मुक़र्रर किये हुए इम्तिहान लेनेवालों के सामने जाकर देवे—और उनके अफ़सर की सनद या परवाना हासिल करके पेश करे तब वह उन ओहदों के पाने के लायक़ समझा जावेगा—इसी तरह मालिक के दरबार से हुक्म है कि जो कोई पूरे गुरू का परवाना हासिल करेगा वही महल में दख़ल

पावेगा—इस वास्ते जिस ने पूरे गुरू का संग नहीं किया और न उनकी प्रसन्नता और दया हासिल की उसका सच्चा उद्धार कभी नहीं होगा और न उसको सच्चे मालिक का कभी दर्शन मिलेगा ॥

१५—यह बात ग़ौर करके समझने के लायक़ है कि मालिक को हर कोई हर वक़्त सब जगह मौजूद मानते हैं—और उसकी मौजूदगी का यक़ीन भी करते हैं—पर लोगों का यह हाल है कि जैसी उन के मन में तरंगें उठती हैं उसी मुवाफ़िक़ काररवाई भली और बुरी करते हैं—और ज़रा भी मालिक का ख़ौफ़ बुरे काम के सोचते और करते वक़्त नहीं करते। हाकिम और बिरादरी का थोड़ा डर मान कर चाहे किसी बुरे काम से बच जावें और जो उस काम के ज़ाहिर होने का ख़ौफ़ नहीं है तो हाकिम और बिरादरी का भी डर मन में नहीं आता है। यह हाल कुल्ल दुनियादारों और आम परमार्थियों का है यानी उनके दिल में गुरू और मालिक का ख़ौफ़ जैसा चाहिये बिल्कुल नहीं आता है—सिवाय उस हालत के कि जब कोई उनकी औलाद या माल के नुक़सान होने का किसी काम के करने से ख़ौफ़ दिलावे—सो यह बात कम अक़ल वाले लोग

मानते हैं-और जो थोड़ी बहुत विद्या बुद्धी और चतुराई रखते हैं वह ऐसे ख़ौफ़ को भी धोखा देना समझकर मन में नहीं लाते ॥

१६-अब जो जीव कि पूरे गुरू की सरन में आये हैं उनका हाल सुनो-कि जो उन्हों ने अपने गुरू को मुवाफ़िक़ अपनी अपनी पहिचान के जो सतसंग करके हासिल की है-और मुवाफ़िक़ उन परचों के जो उनको अभ्यास की हालत में अंतर में मिले हैं-किसी क़दर समरत्थ और अंतरजामी माना है-या सच्चे मालिक का थोड़ा बहुत जलवा देखा है और उसकी दया अंतर में परखी है-तो हर काम के करने में उनको थोड़ी बहुत याद अपने गुरू और मालिक की आजाती है-और उसके साथ थोड़ा बहुत ख़ौफ़ उनकी अप्रसन्नता यानी नाराज़गी का और उसके सबब से होने नुक़सान का उनके आनन्द और रस में जो वे रोज़ाना अभ्यास में लेते हैं और तरह २ के हर्ज का परमार्थ और स्वार्थ में उनके दिल में पैदा हो जाता है-इस सबब से ऐसे कामों को वे ऐसे निर्भय होकर नहीं करते जैसे कि और लोग करते हैं। पहिले तो वे जहां तक उनका बस चलेगा ऐसे कामों से गुरू और मालिक की दया

और उनकी जुक्ती का बल लेकर बचेंगे—और जो ऐसा न होगा और वह काम उनसे लाचारी में बन पड़ेगा तो उसके पीछे निहायत शरमिंदा होकर अपने अंतर में अफ़सोस और दुःख और ख़ौफ़ मान कर बहुत दीनता और आजिजी के साथ प्रार्थना वास्ते माफ़ी और बचाव और सहायता आइन्दा के करेंगे। इसी तरह आहिस्ता २ कभी २ भूलते हुए और चूकते हुए और फिर शरमा कर पछताते हुए और झुरते हुए एक दिन उनको पूरी सफाई अन्तर की हासिल हो जावेगी और फिर मालिक के दरबार में दख़ल पाने के लायक हो जावेंगे॥

१७—जिस किसी को पूरे गुरू का संग नहीं मिला उसको यह बात कभी हासिल न होगी—और न उसके पाप करम दूर होंगे और न बोझ अगले पिछले और हाल के जनम के करमों का उसके सिर से उतरेगा—और इस वास्ते जनम मरन और करम भोग उसका बराबर जारी रहेगा—और सतगुरु भक्त के करम अगले पिछले और हाल के सतगुरु की दया और उनकी जुक्ती की कमाई और उसके असर से कि दिन २ उसकी सुरत यानी रूह माया के देश से अलहदा होकर निरमल चैतन्य देश यानी संतों

के दयाल देश की तरफ़ चढ़ती जावेगी जल्दी और आसानी से कट जावेंगे और फिर वह निरमल होकर अपने निज घर में जावेगा—और जब तक कि इस तरह निरमल नहीं होवेगा तब तक कोई किसी तरह वहां दख़ल नही पासक्ता है—और यह बात बिना पूरे गुरू के संग और उनकी मेहर और दया और जुक्ती की कमाई के और किसी तरह हासिल नहीं हो सक्ती है॥

१८—जो बचन कि ऊपर लिखे है यह वास्ते समझाने और होशियार करने सच्चे परमार्थियों के है जिनको अपने जीव के कल्यान का सच्चा फिकर है और जो दुनिया की नाशमानता और अपने दुख सुख की हालतों को देख कर ऐसा जतन करना चाहते है कि जिस से बारम्बार देह धरने और उसके संग दुख सुख सहने से बचें॥

पर वह लोग जो कि संसारी है—या विषयी और रागी या टेकधारी है—या बाहरमुखी परमार्थ के चलानेवाले है और उसी में उन्हों ने अपना रोजगार यानी आमदनी की सूरत निकाल रक्खी है इन बचनों को पढ़कर या सुनकर पसंद नही करेंगे और न उनको मानेंगे—और सच्च यह है कि उनके वास्ते यह बचन भी नहीं है, क्योंकि उनके मन में

दुनिया और उसके सामान और भोग बिलास की या नामवरी की चाह जबर है और संतों के परमार्थ में यह सब बातें सहज २ छोड़नी पड़ेंगी—नहीं तो अभ्यास का रस और आनन्द कम आवेगा या नहीं आवेगा और सच्चे उद्धार में देरी होगी या बिघन पड़ेगा ॥

१९—जो लोग कि बुद्धिवान और विद्यावान हैं और अपनी विद्या और बुद्धी और ज़ाहिरी ब्यौहार की सफ़ाई का मन में मान और अहंकार रखते हैं उनके दिल में गुरू की क़दर बहुत कम है। वे गुरू को बतौर उस्ताद यानी विद्या गुरू समझते हैं और जब वे मामूली परमार्थ की किताबें और पोथियां आप पढ़ और समझ सक्ते हैं तो उनको ऐसे गुरू की भी जरूरत नहीं होती—और सतगुरु का महिमा और बुजुर्गी की तो उनको बिल्कुल ख़बर नहीं है। गुरू और सतगुरू और विद्या गुरू उनकी नज़र में बराबर हैं—यानी विद्या गुरू से ज्यादा उनका दरजा वे नहीं मानते हैं। सबब इसका यह है कि वे अंतरी परमार्थ से बिल्कुल नावाक़िफ़ हैं और न संतों और सतगुरों की बानी और बचन जिसमें अंतरमुख अभ्यास ऊंचे दरजे का ज़िकर है उन्हों ने

देखो या पढ़ी है और न उन में उनको भाव आता है क्योंकि वे उनके मतलब को अपनी विद्या और बुद्धी की ताक़त से नहीं समझ सकते और भेदी और संत मत के जानकार से पूछना और समझना ऐसी बानी और बचन का अहंकार करके नहीं चाहते हैं और असल में उनको ऊंचे और सच्चे परमार्थ का खोज भी नहीं है और जो कोई उनको ऐसे बचन सुनावे तो प्रतीत नहीं लाते और सुनानेवाले को नादान या भरम में भूला हुआ समझते है ॥

२०–आम तौर पर इन लोगों का मत यह है कि कोई मालिक है और वह अपार और अनंत और अजन्मा और अरूप और विदेह है–किसी को नज़र नहीं आ सक्ता और न कोई उस तक पहुंच सक्ता है–उसकी पूजा सिर्फ़ इस क़दर है कि उसकी अस्तुति और महिमा के बचन पढ़ना और गाना और दिल से उसके गुण नुवाद को याद करना और दुनिया की नाशमानता पर नज़र रखना और जहां तक बने जीवों के साथ दया भाव से बर्त्तना और पर उपकार करना–जैसे विद्या का पढ़ाना आराम के मकानात बनवाना दवाइयां

बांटना और भूखे प्यासे और मोहताजों की मदद करना वग़ैरः—और उन किताबों को जिन में मालिक की महिमा और अस्तुति लिखी है अथवा अपने चाल और चलन और ब्यौहार की दुरुस्ती के लिये नसीहतें और उपदेश लिखे हैं उनको पढ़ना॥

२१–जब विद्यावानों के मत के उसूल (आशय) कमो बेश (थोड़े बहुत) इस मुवाफ़िक़ हैं जैसा कि संक्षेप (खुलासा) करके ऊपर लिखा गया तब ज़ाहिर है कि उनको अंतर के परमार्थ के बताने वाले और रास्ता चलानेवाले गुरू की ज़रूरत बिलकुल नहीं है और इसी सबब से यह लोग गुरु भक्तों पर तान करते हैं और उनके ब्यौहार को देख कर हंसी उड़ाते हैं। जो उन्हों ने उपाशना यानी अंतरमुख भक्ती के ग्रंथ जोगेश्वरों या संतों के बनाये हुए पढ़े या देखे होते तो इनको मालूम होता कि वह रास्ता बिना मदद अभ्यासी गुरू के नहीं चल सक्ता है और तब अभ्यासी गुरू की बड़ाई इनके चित्त में थोड़ी बहुत समाती। पर जिस हालत में कि वे अंतर के भेद से नावाक़िफ़ हैं और उसको जानना भी नहीं चाहते तो जैसी चाल कि वे चल रहे है और चला रहे हैं वही उनके वास्ते दुरुस्त है

और उनका संग वेही लोग करेंगे जो ज़ाहिरी परमार्थी कामों से राज़ी होते हैं ॥

२२-अलबत्ता मूरत या कोई निशान या दरिया और दरख़्तों और जानवरों की पूजा और तीरथ बरत और अनेक तरह के करम और धरम और औतारों और देवताओं की उपासना इन लोगों ने क़ितई मोकूफ़ कर दी। इतना काम इन्होंने बेहतर किया कि लोगों को भरमों से बचाया और एक मालिक का यक़ीन दृढ़ कराया-पर इस क़दर इनके मत में कसर मालूम होती है कि जब मालिक सब जगह मौजूद है तो हर एक जीव के अंतर में भी ज़रूर मौजूद होना चाहिये और जब वह अंतर में मौजूद है तो उसकी भक्ती अन्तर में करना चाहिये जान और दिल से-बाहर की भक्ती इस क़दर फल नहीं दे सक्ती है और न उस करनी से जनम मरन और देहियों के दुख सुख से बचाव हो सक्ता है। क्योंकि इसका असर मन और इन्द्रियों और अस्थूल या सूक्ष्म शरीर से आगे नहीं पहुंचता-और चाहिये यह कि जान तक असर पहुंचे और देहियों से जो बतौर ख़ोल या ग़िलाफ़ के रूह पर चढ़े हुए हैं किसी क़दर जीते जी अलहदगी होती

जावे तब जो प्रेम आवेगा वह अन्तर के अन्तर से प्रगट होगा और क़ायम रहेगा और इसी ज़िन्दगी में मुक्ती का आनन्द थोड़ा बहुत मालूम पड़ेगा— और जोकि सब रस और सुख और आनन्द का भंडार अन्तर में है और जो इन्द्री भोग में रस मालूम होता है वह भी जान या रूह की धार के सबब से जब वह इन्द्री के अस्थान पर आवे तब मालूम होता है तो जो अभ्यास भक्ती का अन्तर में किया जावे तो वहां रस और आनन्द भी विशेष (ज़्यादा) मिल सक्ता है और जब कि रूह या जान का भंडार यानी मालिक अन्तर में मौजूद है तो वह रस और आनन्द ज़्यादा अभ्यास करने से दिन २ बढ़ सक्ता है। अब इस भक्ती और अभ्यास का भेद सिवाय संतों और उनके साध् और सतसंगियों के और कोई नहीं जानता है और उन्हों की बानी और बचन में इसका हाल मुफ़स्सिल लिखा है। जब कोई यह अभ्यास अपने अन्तर में करे तब उसको सच्ची महिमा मालिक की और भी उसके भक्तों और प्रेमियों को मालूम पड़े॥

॥ शब्द ॥

कोइ चेते सुरत जग देख असार ॥ टेक ॥

बाहरमुख पूजा नहिं भावे। यामें जीव भरम रहे झार ॥१॥
करम धरम सब काल पसारा। यामें नित बढ़ता हंकार ॥२॥
सच्चा सतसंग खोजत पाया। वहां पाया सच्चा आधार ॥३॥
सुरत शब्द का भेद अपारा। सो सतगुरु दीना कर प्यार ॥४॥
दया मेहर ले करत कमाई। देखत घट में मोक्ष दुआर ॥५॥
रस पावत मन अत हरखाना। मगन हुई सुर्त सुन झनकार ॥६॥
राधास्वामी दीन दयाला। वेग उतारा भौ जल पार ॥७॥

वचन चौबीसवां

परमार्थी कारवाई और अभ्यास का उतार और चढ़ाव पिछले वक्तों से अब तक ॥

दफ़ा १—मालूम होवे कि पिछले वक्तों में जिस को कई हज़ार वर्ष गुज़रे होंगे छः चक्रों को प्राणायाम योग की जुगत से बेध कर, सहसदलकंवल तक पहुंचने पर, प्राणायाम का अभ्यास पूरा होता था; और जिन से यह अभ्यास पूरा बन आया, वे योगी कहलाये, और जोगेश्वर उसके भी आगे एक मुक़ाम त्रिकुटी तक, जोकि अस्थान प्राण पुरुष यानी

ओङ्कार का है पहुंचे—और यह पद असली सिद्धांत हिन्दू मत का है, कि जहां से तीन लोक की रचना का सूक्ष्म मसाला प्रगट हुआ, और सहसदलकंवल से उसका अच्छी तरह से ज़हूरा हुआ, यानी तीन गुन [सत, रज, तम, जिनको ब्रह्मा विष्णु और महादेव कहते हैं] और पांच तत्त्व की सूक्ष्म धारें प्रगट हुईं ॥

२—प्राणों की चढ़ाई का अभ्यास करके, जो कोई सहसदलकंवल या ओङ्कार तक पहुंचे, वही सच्चे और पूरे जोगी ज्ञानी या जोगेश्वर ज्ञानी कहलाये; और उनकी महिमा भारी है, क्योंकि उन्होंने दोनों ब्रह्म और पारब्रह्म पद का दर्शन पाया और जैसे इन मुक़ामों से रचना आदि में हुई, उसका सब भेद उनको मालूम हुआ; और सब शक्ती और सिद्धी भी उनको हासिल हुई; और जोकि वे ईश्वर कोटी थे, इस सबब से अपने निर्मल बैराग और अनुराग के बल से, पुरुषार्थ यानी सख़्त मिहनत करके, उन अस्थानों तक पहुंचे। बाक़ी जीव इस समय में करमकाण्ड और तप और जप और करम और धरम में लगे रहे, और उस से सफ़ाई ज़ाहिरी और व्यौहार की और कुछ अन्तर की हासिल करते रहे, और उनके

मन में मुख्यता संसार की मान बड़ाई और भोग बिलास या परलोक के भोग बिलास की रही ॥

३–कुछ अरसे के पीछे सच्चे जोगियों ने अभ्यास मुद्राओं का जारी किया; यह मुद्रा पांच हैं–इन में से दो मुद्रा का अभ्यास अन्तर में, एक दृष्टी का साधन, और दूसरा शब्द का स्रवन है–इन मुद्राओं की मदद से भी अभ्यासी अंतर में ऊंचे अस्थान पर मन और दृष्टी को जमा कर पहुचे और वहां शब्द का रस लेकर समाधस्थित हुए ॥

४–सिवाय प्राणायाम के जोगी और जोगेश्वर ज्ञानियों ने पांच उपाशना मुक़र्रर करीं, पहले गनेश जी की (जिनका बासा मूलाधार यानी गुदा चक्र में है), दूसरी बिष्णु महाराज की (जिनका बासा नाभी चक्र में है), तीसरी शिव की, (जिनका बासा हृदय चक्र में है), चौथी आत्मा यानी शक्ती की (जिसका बासा कंठ चक्र में है), और पांचवीं परमात्मा की (जिसका मुक़ाम छठे चक्र में है), और जोगी ज्ञानियों ने इसी पद को सूरज ब्रह्म भी कहा है ॥

५–जिन लोगों से प्राणों के रोकने, और चढ़ाने का अभ्यास दुरुस्ती से नहीं बना, या जिन में पूरी

ताक़त इस अभ्यास के करने की नहीं पाई गई, उनके वास्ते यह जुगत उपाशना की जोगी और जोगेश्वर ज्ञानियों ने जारी की, कि हर एक चक्र में वहां के देवता के स्वरूप का ध्यान करें, और एक खास मंत्र का, जो उसी चक्र के मुतअल्लिक़ है, ध्यान के साथ जाप करें ॥

जोकि यह अभ्यास करने से भी मन का सिमटाव और थोडी बहुत चढ़ाई मन और प्राणों की ऊंचे अस्थानों की तरफ़, और सफ़ाई अन्तर की हासिल होती है, इस वास्ते इस भक्ती मारग के जारी होने से किसी क़दर आसानी जोग के अभ्यासियों को हुई, कि बिना प्राणों पर जोर देने के, वह अपनी चढ़ाई का अभ्यास थोड़ा बहुत करके अन्तर का रस ले सकें ॥

और जिन जीवों के मन और बुद्धी और शरीर निहायत अस्थूल थे उनके वास्ते क्रिया जोग और अनेक तरह के आसनों की जुगत बताई, कि जिस से वे अन्तर में अस्थूल अङ्ग की सफ़ाई करें, यानी अपने अंग २ को इस क़दर साफ़ रक्खें कि जिस से तमोगुन और बिकारी चाहें दूर या कम होवें, और सतोगुनी बढ़ते जावें, और मालिक के चरनों में प्रेम और सच्ची दीनता पैदा होवे, और

अन्तरमुख अभ्यास प्रानायाम या मुद्रा या उपाशना के अधिकारी हो जावें ॥

६–पहिले वक्तों में दस्तूर था कि अभ्यासी को दरजे बदरजे एक २ अस्थान का भेद और जुगत उसके अभ्यास की बताई जाती थी पहिले ही यानी एक दम कुल्ल अस्थानों का भेद नहीं देते थे इस सबब से जो २ अभ्यासी जिस अस्थान यानी चक्र तक पहुंच कर थक कर ठहर गये, उन्हों ने वही उपाशना अपने २ संगियों मे जारी रक्खी और जो कि उनको धुर अस्थान का भेद नहीं मालूम हुआ था, इस सबब से उसी अस्थान यानी चक्र के ध्यान और जाप को, (जहां तक वह अभ्यास करके पहुंचे) मुख्य अभ्यास समझ कर रह गये इस तरह एक मत के अनेक मत हो गये, यानी गनेश उपाशक और वैष्णव और शिव उपाशक यानी शैवी, और शक्ती और ब्रह्म उपाशक वगैरह और हर एक अपने मत को, दूसरे के मत से बढ कर यानी ऊंचा मानने लगे, और आपस में तकरार और झगड़ा करके, हर एक क़िस्म के अभ्यासियों का फ़िरक़ा जुदा हो गया ॥

७–जब और ज्यादा वक्त गुज़रा, और जीवों की दशा और हालत बदलती गई, यानी वे दुनिया के

भोग बिलास की चाह बढ़ाते गये, और उन भोगों की प्राप्ती के लिये ज़्यादा से ज़्यादा जतन करने लगे, इस सबब से परमार्थ की बड़ाई दिन २ उनके मन से कम होती गई, और सच्चे परमार्थी और अनुरागी बहुत कम होते गये–तब उस वक़्त के परमार्थ के चलानेवालों ने बाहरमुख उपाशना यानी भक्ती हर एक चक्र के देवता की जारी करी, यानी जिस स्वरूप का कि ध्यान और मंत्र का जाप वे ख़ास चक्र में अपने अन्तर में करते थे, उस स्वरूप की नक़ल धात या पत्थर की बना कर और एक मकान ख़ास यानी मंदिर में उसको पधरा कर लोगों को समझाया कि यह स्वरूप वही स्वरूप है; यानी मंत्रों करके उसकी प्राण प्रतिष्ठा होने से देवता उस में आन समाया; और उसकी पूजा असल की पूजा के बराबर है; इस पूजा को जारी हुए भी कई हज़ार वर्ष का अरसा गुज़र गया ॥

८–बहुत से जीव इस क़िस्म की पूजा यानी मूर्त्ती पूजन में लग गये, जब कुछ वक़्त और इस तौर पर गुज़र गया तब जो जुगत कि मूरत के रूबरू बैठकर उसका ध्यान और मंत्र का जाप करने की बताई गई थी उसको आहिस्ता २ लोग छोड़ते गये, और

सिर्फ़ दर्शन का महातम यानी मंदिर में जाकर दूर से मूरत की झांकी कर लेना और पूजा भेंट कर देना आम तौर से जारी हो गया ॥

९—फिर कुछ अरसे के बाद सिवाय उन स्वरूपों के जोकि अंतर के चक्रों से मुतअल्लिक़ थे, औतार स्वरूपों की मूरत मिस्ल रामचन्द्र जी, कृष्णचन्द्र जी नरसिंह जी, लक्ष्मण जी, बलदेव जी और और देवताओं की मूरतें बनाकर नये २ मंदिरों मे पधराना शुरू हुआ—खुलासा यह कि जैसा जिसके मन ने चाहा, या जैसा जिसको पंडितों ने समझाया, उसके मुवाफ़िक़ अनेक तरह की पूजा जारी हो गईं, और उसके साथ तीरथों की महिमा भी फैलाई गई—यानी जिस जगह जो औतार या देवता प्रगट हुए थे, वह जगह पवित्र समझ कर, वहां मंदिर कसरत से बनाये गये, और महातम वहां के दर्शनों का बहुत से बहुत करके वर्णन किया ॥

१०—जब इस तौर से मंदिर ज्यादा बनते गये, और हर एक मंदिर में भेंट और पूजा ज्यादा आने लगी, और वह ब्राह्मण पुजारियों को जोकि हर एक मंदिर में मुक़र्रर किये गये थे मिलने लगी, तब यह आम-

दनो की सूरत देख कर पंडितों और ब्राह्मणों ने ज्यादा भाव के साथ मंदिरों के बनाने और मूरत पूजा के बढ़ाने में मदद देना शुरू किया–और पोथियां उसकी महिमा और महातम की बना कर जारी करीं, कि वह किताबें सुन कर थोड़ा बहुत सब लोगों का झुकाव मूरत पूजा की तरफ़ हो गया, और भेद असली रूप परमेश्वर और औतार और देवताओं का, और उसका खोज और उसके प्राप्ती की जुगत, गुप्त होती गई, यानी रफ़्ता २ पंडित और भेष जोकि वेद और शास्त्र और परमार्थी पोथियों के पढ़ने और पढ़ानेवाले थे, आपही असली परमार्थ को छोड़कर और संसार के भोगों की चाह बढ़ा कर, मान और धन की प्राप्ती के लिये जतन करने लगे, और ब्रह्म विद्या का पढ़ना और अन्तर में अभ्यास करना भूल गये, और बाहरमुखी पूजा में आम जीवों के साथ शामिल हो गये, और उसकी टेक और पक्ष धारन करके सच्चे अंतरमुख अभ्यासियों से विरोध और तकरार करना शुरू किया, जिस में उनकी आमदनी और रोज़गार में ख़लल न पड़े, और वे अपने चेलों की नज़र में मूरख और नादान न ठहरें—इस तौर से बहुत पुराने वक़्तों से जीवों की परमार्थी

हालत का उतार ऊंचे दरजे से नीचे के दरजों में होता चला आया ॥

११-इसी तरह जो जीव कि क्रिया योग और आसनों के साधन में लगे थे, वे भी एक २ क़िस्म या अंग का थोड़ा बहुत अभ्यास करके पूजा और मान बड़ाई के फेर में आ गये, और उतने ही अभ्यास को बड़ा समझ कर अपने तईं पूरा और मुक्ती का अधिकारी मान बैठे-बल्कि बहुतेरों ने तो इस क़िस्म का अभ्यास जगत के दिखाने और पूजा भेट लेने के वास्ते स्वांगियों की तरह करना शुरू कर दिया-और जोकि यह अभ्यास ज़ाहिरा कठिन और सख़्त था, जैसे धोती नेती वस्ती क्रिया और नख पखार क्रिया और खड़े रहना और पंचअग्नी तपना और जलशयन करना और तरह २ के आसन बांधना और मौन रहना और नंगे रहना और कांटों या कीलों पर बैठना वग़ैरः, इस वास्ते दुनिया के लोग ऐसे अभ्यासियों को अचरज की नजर से देखने और पूजा और भेट रखने लगे और वाह २ करने लगे ॥

१२-सच्चे जोगी और जोगेश्वर लोग ईश्वरकोटी थे, और उनके दिलों में असली और सच्ची चाह परमार्थ की बहुत ज़बर थी, और अभ्यास में मिहनत

करने से उनको रस आनन्द आता था, और संसार के भोग बिलास उनको नाशमान और तुच्छ दिखाई दिये, इस सबब से उन्होंने यह कठिन अभ्यास प्राणायाम का दुरुस्ती से कर के ब्रह्म या पारब्रह्म पद में बासा किया।

१३–जब ईश्वर कोटी कोई बिरले रह गये, और जीव कोटी लोग उस अभ्यास में शामिल हुए, तब उन से वह अव्वल दरजे का अभ्यास यानी प्राणायाम जैसा चाहिये न बना, पर उन में जो उत्तम जीव थे, उन से मुद्रा का अभ्यास या अंतर में ध्यान और जाप हर एक चक्र का दुरुस्त बना, और जो संजम कि इस काम के करने के वास्ते उनको बताये गये, वह भी उनसे किसी क़दर दुरुस्त बन पड़े, इस तरह उनको भी आतम या परमातम पद की प्राप्ती हुई॥

१४–जब कि उत्तम जीव भी कम हो गये, और संसार के भोग बिलास की तरफ़ सब का झुकाव ज्यादा होता गया, तब कसरत से जीव मूरत पूजा में लग गये, पर उन जीवों से रफ़्ता २ मूरत पूजा भी जैसा चाहिये था दुरुस्त कम बनी, यानी वे ऊपरी तौर से उसका बरतावा करने लगे, और इतने ही

काम में अपनी मुक्ती समझ कर निचिन्त हो रहे, और जो किसी ने उनको अंतर का भेद सुनाया या उन से मूरत के असल का हाल दरियाफ़्त किया, तो अपनी नादानी की वजह से या पंडितों और भेषों के बहकाने से, उस से लड़ाई और झगड़ा करने लगे–इस तौर से नक़ली परमार्थ यानी नक़ली भक्ती और नक़ली पूजा की चाल जहां तहां कसरत से जारी हो गई ॥

१५–जब प्राणों या मुद्रा की पूरी तौर से साधना करने वाले गुप्त हो गये, और यह अभ्यास भी बजाय चढ़ाने मन और प्राणों के सिर्फ़ मन के ठहराने के वास्ते मुफ़ीद समझाया गया, यानी थोड़े दिन ऐसा अभ्यास करके लोग अपने आप को पूरा समझने लगे, और कसरत से जीव मूरत या निशानों या तीरथ की पूजा में लग गये, और जो कोई थोड़े बहुत विद्यावान थे वे वाचक ज्ञान में मगन हो गये, और अपने को ब्रह्म मानने लगे, और अकसर क्रिया योग वाले स्वांगी बन गये, तब इस तरह मुक्ती का रास्ता बिलकुल बंद देख कर, कुल्ल मालिक दयाल की मौज से संत प्रगट हुए, और उन्हों ने सब मतों की कसरें दिखला कर सुरत शब्द मारग का उपदेश

क्रिया—हरचन्द शुरू में बहुत कम जीवों ने उनके बचन को माना, फिर बहुत से उनकी बानी और बचन पढ़ने और सुनने लगे और थोड़ी बहुत उनको अपने परमार्थ की कसरों की खबर पड़ती गई ॥

१६—फिर मौज से साध एक के पीछे एक कितने ही देशों में प्रगट हुये, और उन्हों ने शब्द मारग का भेद उसी मुक़ाम तक का जो कि वेदों का सिद्धान्त है प्रगट किया, इस में बहुत से जीव लग गये, पर उनमें से पूरे और सच्चे अभ्यासी कम निकले, लेकिन संतों और साधों ने अपनी दया के बल से बहुत से जीवों का उद्धार किया ।

१७—जब यह संत और साध भी गुप्त हो गये, और उनके घरानों में भी सिर्फ़ बानी का पाठ और नाम का ज़बानी सुमिरन रह गया, या कोई रसम और पूजा बारहमुखी चल गई. और विद्या के ज़्यादा फैलने से उन में से कितने ही वाचक ब्रह्म ज्ञान की तरफ़ रुजू हो गये, और प्राण और मुद्रा के साधन करने वाले और उसका भेद और जुगत के जानने वाले भी बहुत कम रह गये और रसमी तौर पर कसरत से जीवों का झुकाव मूरत पूजा और तीरथ बर्त और नेम और आचार की तरफ़ हो गया, और

कोई २ नये विद्यावान नास्तिकों की समझ पकड़ने लगे. तब कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल आप सतगुरु रूप धार कर जगत में प्रगट हुए, और आसान तौर से सुरत शब्द मारग की जुगत जो धुर मुक़ाम तक पहुंचानेवाली है और जिसको आज तक किसी संत ने भी साफ़ तौर पर प्रगट नहीं किया था, सहज और आम तौर पर समझाई, कि जिस में हर कोई मर्द और औरत विद्यावान और अविद्यावान हिन्दू और मुसलमान और ईसाई और जैनी और स्रावग और पारसी और यहूदी यानी किसी क़ौम या पंथ या देश का आदमी होवे, शामिल होकर अपना सच्चा उद्धार आप हासिल कर सकता है, और जीते जी अपने मुक्त होने की सूरत किसी क़दर (यानी जिस क़दर उसका अभ्यास तेज होवे) अपने अंतर में अपनी हालत को परख कर आप जांच सकता है॥

१८–इस मत को राधास्वामी मत या संत मत कहते हैं। और इसकी काररवाई इस तौर पर है कि बाहर तो संत सतगुरु या साधगुरू का (जो भाग से मिल जावें) सतसंग, और उनकी और उनके सच्चे भक्तों या प्रेमियों की सेवा तन मन धन से करना, और अंतर में सुमिरन करना सच्चे नाम का मन से, और सुनना नाम

की धुन का चित्त के साथ—और मालूम होवे कि वह धुन घट २ में यानी हर एक आदमी के अंतर में हर वक़्त आपही आप हो रही है, और उसका भेद मय तफ़सील अस्थानों के जहां होकर उस धुन की धार सच्चे मालिक के चरनों से उतर कर पिंड यानी देह में आई है, संत सतगुरु या साधगुरू या उन के सच्चे अभ्यासी सतसंगी से मिल सकता है, और राधास्वामी दयाल के बानी और बचन मे भी साफ़ तौर पर लिखा है पर बिना भेदी अभ्यासी के समझाये किसी की समझ में नहीं आ सकता है ॥

१९—इस अभ्यास की कमाई से जो कोई सच्चा होकर प्रेम के साथ करेगा आहिस्ता २ मन और इन्द्रियां क़ाबू में आती जावेंगी, और एक दिन सुरत यानी रूह अन्तर में चढ़ कर अव्वल त्रिकुटी में जहां वेद मत का असली सिद्धान्त है, और जहां मन समा जावेगा, और वहां से सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुंच कर (जिस को दयाल देश कहते हैं और जो माया की हद्द के पार है) अजर और अमर हो जावेगी, और परम आनंद को प्राप्त होगी, यानी अपने निज घर में जहां से कि आदि में सुरत, उतर कर और पिंड में ठहर कर मन और

माया के साथ भोगों में फंस गई थी पहुंच जावेगी, और जनम मरन से सच्ची रहित हो जावेगी ॥

२०–जो कोई राधास्वामी दयाल के बचन को मान कर जो जुगत कि उन्होंने बताई है उसका अभ्यास सच्चे मन से शौक़ के साथ करेगा, उसको पूरा फ़ायदा हासिल होगा, यानी एक दिन उसका सच्चा उद्धार हो जावेगा, और जो अपने मन हठ से या दुनिया और उसके सामान की जबर पच्छ धार कर न मानेगा, उसका भारी नुक़सान होगा, यानी वह जनम मरन और देहियों के साथ दुख सुख भोगता रहेगा, और अमर देश का परमानन्द उसको प्राप्त नहीं होगा, और न सच्चे मालिक का दर्शन पावेगा ॥

बचन पच्चीसवां

अभ्यास में तरक्क़ी की परख और पहिचान और वर्णन उन संजमों का जिन से अभ्यास दुरुस्त बने ॥

१–बाजे सतसंगी ऐसा ख़याल करते हैं, कि उन को किसी क़दर अर्से यानी दो चार बर्ष राधा-स्वामी मत में शामिल होकर थोड़ा बहुत अभ्यास

करते गुजर गये, पर उनको अभी कुछ अन्तर में खुला नहीं, या कुछ तरक़्क़ी अभ्यास की मालूम नहीं होती ॥

२-जवाब इसका यह है, कि यह ख़्याल इन सतसंगियों का दुरुस्त नहीं है, उनको अपने हाल की परख नहीं है या वे अपने पिछले और हाल की हालत और तबीअत की जांच नहीं करते, क्योंकि जो कोई सच्चे मन और सच्चे शौक़ के साथ राधास्वामी मत में दाख़िल होकर प्रेम के साथ थोडा बहुत अभ्यास दो मर्तबा हर रोज सुरत शब्द मारग और सुमिरन और ध्यान का कर रहा है, तो मुमकिन नहीं, कि वह राधास्वामी दयाल की दया से ख़ाली रहे-यानी उसको थोडा बहुत रस और आनंद भजन और ध्यान का न आवे ॥

३-रोशनी और माया के चमत्कारों का नज़र आना, यह भी एक क़िस्म की दया में दाख़िल है, और उससे किसी क़दर तरक़्क़ी अभ्यास की पाई जाती है-पर अभ्यासी को मालूम होना चाहिये कि सुफ़ेद रोशनी का चांदनी के मुवाफ़िक़ खिले हुए नजर आना, या पांच रंग की रोशनी जुदा २ दिखलाई देना, या सूरज और चांद और तारों का नज़र आना,

तरक़्क़ी का निशान है—मगर जो मकानात या बाग़ात या सूरतें मर्द और औरत की नूरानी नज़र आवें, इनमें ज़्यादा मन लगाना या अटकना नहीं चाहिये, और न उनके बार २ नजर आने की ख़्वाहिश करना चाहिये. क्योंकि यह कैफ़ियतें वक़्त गुज़रने अभ्यासी के मन और सुरत के खास २ मुक़ामों से जरूर दिखलाई पड़ेंगी, और जल्द ग़ायब भी हो जावेंगी॥

४—असली तरक़्क़ी का खास निशान यह है, कि अभ्यासी को भजन और ध्यान में थोड़ा बहुत रस और आनंद आवे, यानी मन थोड़ा बहुत निश्चल हो कर अभ्यास मे लगे, और शब्द पहिले मुक़ाम का दिन २ साफ़ और नजदीक सुनाई देने लगे, और वक़्त अभ्यास के मन और सुरत किसी क़दर रसीले होकर सिथिल होते जावें, और कभी २ इस क़दर अन्तर में लग जावें. कि इस तरफ़ की ख़बर और सुध न रहे॥

५—ऐसी हालत बग़ैर मन और सुरत के सिमटाव के, या थोड़ा बहुत ऊपर को तरफ़ चढ़ने और शब्द या स्वरूप से मिलने के, नहीं हो सक्ती है—फिर जिस किसी की ऐसी हालत रोजमर्रा या कभी २ होती है, तो समझना चाहिये कि उसको राधास्वामी दयाल जैसा २

उसकी चाल के मुआफिक मुनासिब समझते हैं, तरक़्क़ी देते जाते हैं, यानी सिमटाव और चढाई उसके मन और सुरत की करते जाते हैं, और उसका नशा भी उसको अपनी दया से थोडा बहुत हजम कराते जाते है. नहीं तो इस क़दर रस पाकर बहुतेरे अभ्यासी मस्त होकर घरबार और कारोबार छोडने को तैयार हो जावें ॥

६—जो किसी को अपने अभ्यास के समय ऊपर की लिखी हुई हालत की पहिचान कम होती है, तो सबब उसका यह है, कि उस अभ्यासो को गुनावन यानी ख्यालात अक्सर भजन और ध्यान में सताते और बिघन डालते रहते हैं। इस वास्ते उसको चाहिये कि वह अपनी एक या दो वर्ष गुजरी हुई पहले की हालत तबीअत को, साथ अपनी हाल की हालत के मुक़ाबिला करे, तो जो वह सच्चा सतसंगी और सच्चा अभ्यासी है, तो उसको और उसके घरवालों को इस क़दर जरूर मालूम पड़ेगा, कि पहिले की निस्बत उसकी तबीअत संसारी लोगों के संग में, और संसारी ब्यौहार और कारोबार ग़ैर जरूरी और ग़ैर मामूली में कम लगेगी, और दुनियावी ख्यालात भी उसके दिन २ किसी क़दर कम होते जावेंगे, और फजूल और ग़ैर वाजिब चाहें और तरंगें दुनिया

के भोगों और मुआमलों की भी कम होती जावेगी, और सतसंग और बानी और बचन में, और भी गुरू और साध और सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में, प्रीत और प्रतीत पहले से किसी क़दर ज्यादा होती जावेगी।

७–जो ऊपर को लिखी हुई हालत किसी अभ्यासी सतसंगी को एक या दो वर्ष के अभ्यास के बाद मालूम पड़े, तो फिर इस से ज्यादा और सबूत दया और तरक़्क़ी का क्या चाहिये। असल मतलब राधास्वामी मत और उसकी जुक्ती के अभ्यास का यह है, कि दुनिया की मुहब्बत और चाह दिन २ कम होवे, और मन और सुरत सिमट कर किसी कदर ऊपर को तरफ़ चढ़ने लगे, और अन्तर में थोड़ा बहुत रस लेने लगें, क्योंकि बग़ैर सिमटाव और चढ़ाई के हालत मन और इन्द्रियों की कभी नहीं बदल सक्ती है॥

८–पर मालूम होवे कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल अंतरजामी सब के हाल और ताक़त को खूब जानते हैं, और उसके गृहस्ती कारोबार और रोजगार की सम्हाल के साथ जिस क़दर उसकी ताक़त हाज़मे की देखते हैं उसी क़दर उसके मन और सुरत का सिमटाव और चढ़ाई आहिस्ता २ करते जाते

हैं-जो कोई जल्दी के वास्ते अर्ज़ या फ़रियाद करे, और उस जल्दी मे उसके किसी कारोबार का हर्ज या जिस्मानी तकलीफ़ का अंदेशा है, तो ऐसी अर्ज या फ़रियाद को फ़ौरन् नही सुनते, पर आहिस्ता २ मुनासिब वक्त़ पर उसको बख़शिश ज़रूर देवेंगे, और उसके साथ ताक़त हाज़मह की भी बख़्शेंगे-एकाएक दया होने में आदमी मस्त और बेहोश होकर, और दुनिया के कारोबार और कुटुम्ब परिवार को बिल्‌कुल छोड कर, मजज़ूब (मस्त) फ़क़ीरों के मुवाफ़िक़ सरगरदां (बे ठिकाने) फिरता फिरेगा, और अपनी आइन्दा की तरक़्क़ी को आप बन्द कर देगा, क्योंकि ऐसी हालत में फिर दुरुस्ती से अभ्यास नहीं बन पड़ेगा, और इस वास्ते तरक़्क़ी बन्द हो ज़ावेगी ॥

९-बहुत से सतसंगियों को ख़बर भी नहीं है, कि पहिला मुक़ाम किस क़दर दरजा बुलंद (ऊंचा) रखता है, यानी, कुल्ल बडे मतों का यह पद सिद्धान्त है, और जहां से तीन लोक की रचना की काररवाई हो रही है, और जहां पहुंच कर जोगी लय हो गये, और इधर का होश उनको नहीं रहा-अब बडी भारी दया राधास्वामी दयाल की है, कि ऐसे रास्ते और ऐसी जुक्ती से अपने सच्चे परमार्थी जीवों को चलाते और

चढ़ाते है, कि जिस में उनके दुनिया के किसी कारोबार में हर्ज भी न होवे, और परमार्थ में आला दरजा सहज मे वे मालूम हासिल होता जावे–इसका ज्यादा और मुफ़स्सिल हाल लिखने में नही आ सक्ता, अलबत्ता कुछ थोड़ा सा ज़बानी कहा जा सक्ता है॥

१०–सच्चे और प्रेमी अभ्यासी को चाहिये कि वह सतसंग में बैठ कर अच्छी तरह से निर्नय और तहक़ीक़ के बचन, इन पांच बातों को ग़ौर से सुनकर और समझ कर, अपने मन के भरम और सन्देह और शक्कों को जिस क़दर जल्दी हो सके दूर करे, नहीं तो वह अभ्यास में बिघन डालेंगे और इसके मन और सुरत को सफ़ाई और शौक़ के साथ भजन और ध्यान में लगने नहीं देंगे; और वह पांच बातें यह है।

पहली–निर्नय इस बात का कि राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक और सर्व समरत्थ और सच्चे माता पिता कुल्ल रचना के हैं॥

दूसरी–यह कि सुरत शब्द मारग सच्चा और पूरा और सहज में धुरपद तक पहुंचाने वाला रास्ता और तरीक़ा अभ्यास का है–इस से बढ कर कोई जुगत या रास्ता रचना भर में नहीं है और न हो सक्ता है,

क्योंकि और जितने रास्ते हैं वह सब उन धारों के वसीले के हैं जो माया की हद्द में ख़तम हो जाती हैं, और इस सबब से दयाल देश तक नहीं पहुंच सक्ते, और यह मारग जान यानी रूह या सुरत की धार पर सवार हो कर चलने का है, और जो कि जान या रूह या सुरत कुल्ल रचना में सब से बढ़ का जौहर है, और सब रचना उसी के आसरे ठहरी हुई है और उसी से हो रही है, इस वास्ते इस धार से बढ कर और कोई धार नहीं है ॥

तीसरी–यह कि मन और इन्द्रियों का खमीर (स्वभाव) माया के मसाले का है और इस वास्ते उनका असली झुकाव बाहर और नीचे की तरफ़ संसार के भोग और पदार्थों में है ॥

ज़रूरत के मुवाफ़िक़ उनकी काररवाई दुरुस्त समझी जाती है, मगर फ़ज़ूल तरंगें और ज़रूरत से ज़्यादा चाहें उठाने में हर्ज और नुक़सान है–इस वास्ते अभ्यासी को थोड़ी बहुत रोक और सम्हाल अपने मन और इंद्रियों की ख़ास कर वक़्त अभ्यास के बहुत ज़रूर है, नहीं तो भजन और ध्यान का रस जैसा चाहिये नहीं आवेगा ॥

चौथी–यह कि दुनिया और दुनिया परस्तों और

धनवालों की मुहब्बत और संग से सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों के प्रेम में और भी अभ्यास में किसी क़दर ख़लल और बिघ्न पड़ता है–यह बात हर एक अभ्यासी ऐसे लोगों का थोड़ा संग करके अपने अंतर में परख सक्ता है। इस वास्ते मुनासिब और जरूरी है कि ऐसे जीवों का संग और मुहब्बत उसी क़दर रक्खी जावे कि जिस क़दर ज़रूरी और वाजिब होवे, और ज़्यादा उन में अपने दिल को बांधना, या अपना वक़्त बेफ़ायदा उनके संग में या दुनिया की गप शप में ख़र्च करना, अभ्यासी को मुनासिब नहीं है॥

विद्यावान लोग भी जिनको सच्चा शौक़ किताबों के पढ़ने का है, अपने वक़्त को बहुत सम्हाल कर खर्च करते हैं, यानी सिवाय रोज़गार और देह और गृहस्त के ज़रूरी कामों के बाक़ी वक़्त अपना नई २ किताबों और अख़बारों की सैर में ख़र्च करते हैं–फिर परमार्थी अभ्यासी को किस क़दर ख्याल अपने वक़्त का कि फ़ज़ूल और बेफ़ायदा ख़र्च न होवे रखना चाहिये॥

पांचवीं–राधास्वामी दयाल के चरनों की सच्ची सरन और उनकी मेहर और दया का आसरा और भरोसा॥

११–जब इन पांच बातों की सम्हाल थोड़ी बहुत दुरुस्ती से बराबर जारी रहेगी, तो यक़ीन है कि ऐसे अभ्यासी को मन और माया और दुनिया के विघ्न बहुत कम सतावेंगे, और उसका अभ्यास दिन २ दुरुस्ती से बनेगा, और थोड़ा २ रस और आनंद के साथ बढ़ता जावेगा ॥

और मालूम होवे कि अभ्यास में यह सब काम शामिल हैं:–१ सुमिरन करना, २ सुमिरन और ध्यान करना, ३ भजन करना, ४ पोथी का थोड़ा बहुत समझ २ कर पाठ करना, या सतसंग में बैठ कर सुनना, ५ राधास्वामी मत की चरचा करना या सुनना, ६ राधास्वामी मत और उसके अभ्यास के तअल्लुक़ की बातों का मन में बिचार और निर्नय और ख़्याल करना, ७ अपने मन और इंद्रियों की चाल को हर रोज़ निरख परख करते रहना और जिस क़दर मुमकिन होवे उसकी सम्हाल रखना ॥

१२–अभ्यासी को बेफ़ायदा जल्दी इस काम में नहीं करना चाहिये, और ग़ौर करना चाहिये कि दुनिया के काम भी, जैसे विद्या सीखना, जल्दी के साथ दुरुस्त नहीं बनते इस में पन्द्रह और अठारह बरस सहज में गुज़र जाते हैं, जब कि विद्यार्थी कुल्ल

वक़्त अपना इसी काम में लगाता है, बल्कि घरबार और कुटुम्ब परवार से भी जुदा हो कर मदरसे में रहना क़बूल करता है-फिर यह भारी परमार्थ का काम जब कि सिर्फ़ दो तीन या चार घंटे उस में दिक़्क़त से लगाये जाते हैं, और बाक़ी वक़्त दुनिया के काम और दुनियादारों के संग में गुजरता है, किस तरह ऐसा जल्दी बन सक्ता है-बड़ी दया राधास्वामी दयाल की समझना चाहिये कि वे ऐसी थोड़ी मिहनत पर भी अपनी दया करते हैं और सच्चे अभ्यासी को थोड़ा बहुत अन्तर मे सहारा थोड़े दिनों में बख़्शते हैं ॥

बचन २६

परमार्थ की ज़रूरत हर एक जीव को और संतों के उपदेश का सच्चा और पूरा फ़ायदा ।

१-सब जीवों को चाहे मर्द होवें या औरत बराबर जरूरत परमार्थी अभ्यास की है, जो कि संतों ने दया करके जारी फ़रमाया है-यानी जिस वक़्त कि मर्द या औरत बीस बाईस वर्ष की उमर तक पहुंचे, उसी वक़्त से उसको मुनासिब है कि सन्तों के

उपदेश के मुवाफ़िक़ सुरत शब्द योग का अभ्यास शुरू करे—और जो कोई काम परमार्थी कि बाहरमुख है (सिवाय इसके कि मालिक के नाम पर जीवों को तन और धन से सुख पहुंचाना) कोई फ़ायदा अंतरी परमार्थ का नहीं दे सक्ता है ॥

२—बाहरमुखी कामों में सुरत और मन की धार इन्द्रियों के द्वारे बाहर फैलती है, और सुरत शब्द के अभ्यास में सुरत और मन की धार बाहर से सिमट कर अन्दर में ऊपर को अपने भंडार की तरफ़ चढ़ती है, और इस अभ्यास से ज्यादा ताक़त और सुख मिलता है ॥

३—मालिक ने हर एक जीव में तीन क़िस्म की ताक़तें रक्खी हैं:—एक देह और इन्द्रियों की ताक़त, दूसरी विद्या और बुद्धी और मन की ताक़त, तीसरी चैतन्य सुरत यानी आतमा या रूह की ताक़त। लेकिन यह ताक़तें जब तक कि मिहनत और शौक़ के साथ साधना और मथन न किया जावे तब तक प्रघट नहीं हो सक्ती हैं—यानी जिस किसी ने अपने शौक़ के मुवाफ़िक़ जिस क़ूवत के जगाने और उसके काम की तरफ़ तवज्जह सीखने की करी, उसने उसी काम को उसके सिखाने वाले यानी उस्ताद से मिल कर और मिहनत करके सीख लिया,

और आहिस्ता २ उस में कामिल हो गया और उसका फल पाया ॥

४–पहिली ताक़त देह और इन्द्रियों का साधन। यह बोझ उठाने और हल जोतने से लगाकर उमदह तसवीर खींचना और लिखना और गाना और बजाना और क़िस्म २ की चीजें कारीगरी के साथ बनाना, और तरह २ के तमाशे और चालाकी दिखलाना, जैसे नाचनेवाले और नट वग़ैरह दिखलाते है। इन सब कामों का नफ़ा या मजदूरी ज्यादा से ज्यादा है, यानी सैकडों रुपये महीना पैदा कर सक्ते हैं–मगर बोझ उठाने वाला और हल जोतने वाला दो तीन या चार आने रोज से ज्यादा नहीं कमा सक्ता है॥

५–दूसरी क़ूवत मन और बुद्धी की। यह विद्या या इल्म के पढ़ने से जागती है, और यह इल्म मदरसे में उस्ताद से सीखने और मिहनत करने से हासिल होगा। जो कोई जिस इल्म की तरफ़ शौक़ के साथ तवज्जह करे, वह उसी इल्म को कुछ अरसे में सीख सक्ता है और इमतिहान देकर राज दरबार से बड़े से बड़ा काम पासक्ता है, जिसमे वह हज़ारों लाखों बल्कि करोड़ों आदमियों पर हुक्म चला सक्ता है, और मुल्कों का बन्दोबस्त करता है, और हज़ारों रुपये

की तनख़्वाह पाता है, और बहुत बड़ी इज़्ज़त और हुकूमत उसको मिलती है, और शहरों में नामवरी उसकी होती है, और दुनिया के सब तरह के भोग और बिलास उसको आसानी से प्राप्त होते है॥

६-तीसरी क़ूवत रूहानी यानी चेतन्य सुरत या आत्मा की,-यह ताक़त पूरे और सच्चे परमार्थी गुरू से मिलकर, और उनका और प्रेमी अभ्यासियों का सतसंग करके, और अपने मालिक के चरन में मुहब्बत और दुनिया से वैराग करने से, और मन और सुरत को साफ़ करके घट में ऊंचे की तरफ़ चढ़ाने से, जागती है। जो कोई अपने मन और इन्द्रियों को रोक कर और सच्चे मालिक और सतगुरु का प्रेम हिरदे में धर कर बराबर अभ्यास करे, वह एक दिन अपनी सुरत की ताक़त को जगा सक्ता है, और फिर बिना उसके मांगे देशों में नामवरी फैलती है, और दूर २ से मर्द और औरत और लड़के बाले उसके पास आकर उसको पूजा और प्रतिष्ठा करते हैं, और अपने जीव के वास्ते मुक्ती और नजात हासिल करने के लिये उसको एक बड़ा वसीला अपना समझ कर, उसकी सेवा और खिदमत तन मन और धन से करते हैं और सिर्फ़ उसकी जिन्दगी में नहीं, बल्कि

बाद चोला छोड़ने के उसके नाम और निशान की पूजा और अदब कसरत से मुल्कों और देशों में जारी होता है, और हर एक देश के लोग मर्द और औरत और लड़के उसके नाम और उसकी बानी को गाकर अपना जनम सुफल करते हैं। इस क़िस्म के लोग अपने २ दरजे के मुवाफ़िक़ संत और साध और औतार स्वरूप और महात्मा और पैग़म्बर और औलिया कहलाते हैं। उनका मालिक आप उनको प्यार करता है, और उनकी इज्ज़त और महिमा और बड़ाई बढ़ाता है, और उनके मत को जो वे अपने मालिक के हुक्म से जारी करें दूर २ तक फैलाता है॥

७–ऊपर के बयान से तीनों कुव्वत के जगानेवालों का दरजा और महिमा और बड़ाई और फ़ायदे का हाल ज़ाहिर होता है। अब हर एक जीव को इख्तियार है चाहे तीनों कुव्वतों को जगावे चाहे एक या दो को। हर एक कुव्वत का दरजा और फ़ायदा अलहिदा २ है। पर जिसने रूहानी यानी सुरत या आत्मा की ताक़त को जगाया, वह मालिक के देश मे पहुंच कर परम आनंद को प्राप्त होगा, और देहियों और जनम मरन के दुख से बच जावेगा, और इस लोक में भी उसको इस क़दर बड़ा दरजा ज़िन्दगी में और

भी मरने के पीछे मिलेगा कि जो बादशाहों और राजों और अमीरों और विद्यावानों और बुद्धिवानों को नहीं मिल सक्ता है—और जो इस कुव्वत को या विद्या और बुद्धी की कुव्वत को नहीं जगावेंगे, तो वे कुव्वतें उनकी सोती हुई रहेंगी, और न उनको पूरा २ दुनिया का सुख मिलेगा, और न परमार्थ का आनंद हासिल होगा, और न दुक्खों से बचाव होगा ॥

८—जो कोई पूरा २ सुरत यानी आतमा की कुव्वत को नहीं जगावे तो उसको मुनासिब है कि कुछ मिहनत करके थोड़ा बहुत इस कुव्वत को ज़रूर जगावे, ताकि उसको इस दुनिया में भी आराम मिले और परलोक में भी सुख पावे, यानी जो थोड़ी बहुत मिहनत करके सुरत शब्द का अभ्यास करता रहे, और सच्ची सरन पूरे गुरू और सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल को धारन करे, तो वे अपनी मेहर से उसको संसार सागर से बचा कर पार ले जावेंगे, और महा सुख का अस्थान बख़्शेंगे, और जो इस बचन को नहीं माने तो उसको इख़्तियार है, पर उसको हमेशा जनम मरन भुगतना पड़ेगा, और देहियों के साथ ऊंचे नीचे दरजे में सदा दुख सहता रहेगा, और आत्म-

घाती यानी अपने जीव का आप नुक़सान और अकल्यान करने वाला क़रार दिया जावेगा ॥

९—सब मतवाले और कुल्ल जीव कहते हैं कि मालिक हर जगह मौजूद है, यानी सर्बव्यापक है, और जो ऐसा है तो वह आदमी और कुल्ल जानदारों में भी मौजूद है। आदमी में मालिक का तख़्त उसके मस्तक यानी दिमाग़ में है, और जीव यानी सुरत उसकी अंस है, और जब इसकी बैठक जाग्रत अवस्था में आंखों के मुक़ाम मे है, तो मालिक का तख़्त बहर सूरत इस अस्थान से ऊंचे पर मस्तक में होना चाहिये, जहां से यह सुरत की धार उतर कर पहिले ब्रह्माण्ड में और फिर पिण्ड में आंखों के अस्थान पर ठहरी, और वहां से तमाम देह मे पैरों तक रगों के वसीले से व्यापक हुई ॥

१०—अब समझना चाहिये कि इस सुरत की धार को पहले उसकी बैठक की तरफ़ उलटना और समेटना, और फिर वहां से यानी आंखों के ऊपर अंतर में होकर उसके भंडार की तरफ़ चढाना, यह काम आत्मा यानी सुरत की कुव्वत का जगाना कहलाता है। रास्ते में कई ठेके यानी मुक़ाम हैं, सो जितनी दूर तक यानी जिस अस्थान तक जो कोई पहुंचा

उसी क़दर उसकी सुरत जागी, और उतनाही भेद कुदरत और रचना का उसको मालूम हुआ, यानी उस मुक़ाम से नीचे का सब हाल उसको मालूम पड़ा, पर जो कोई कि धुर अस्थान तक पहुंचा, जहां से आदि में सुरत का ज़हूर हुआ, और वहां से नीचे २ रचना होनी शुरू हुई, उसको कुल्ल भेद कुदरत का मालूम हुआ, और उसी को दर्शन परम भण्डार यानी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का हासिल हुआ, और उसी का नाम परम संत और परम गुरू है, और वही परम आनंद को प्राप्त होकर अमर और अजर हो गया, और उसी की नरदेह सुफल हुई, यानी उसी ने अपनी चेतन्य शक्ती पूरी २ जगाई ॥

११-अब मालूम होवे कि यह काम सुरत शब्द मारग के अभ्यास से हो सक्ता है, यानी सुरत को जिस धार पर कि यह सवार होकर उतरी है, उसी धार के वसीले से चढ़ाना, और वही धार जान और अमृत और रूह और शब्द की धार है, क्योंकि जहां धार रवां (जारी) है वहीं आवाज़ भी संग है, उस आवाज़ का जैसे २ कि हर एक अस्थान से प्रघट हुई, भेदी से भेद लेकर, और उसी आवाज़ की डोरी को पकड़ कर, यानी सुरत से तवज्जह के साथ उस आ-

वाज को सुनते हुए, ऊपर को यानी उसके भण्डार की तरफ़, चलना सुरत शब्द जोग का अभ्यास कहलाता है, और यह सिर्फ़ संत मत में जारी है, यानी उस का मुफ़स्सिल भेद आजकल राधास्वामी मत में मिल सक्ता है. और किसी मत में भेद और चलने की जुगत का जिकर भी नहीं है-सिर्फ़ इशारे में इस क़दर महिमा शब्द की लिखी है, कि आदि में शब्द प्रघट हुआ, और शब्द ही कर्ता है, और शब्द ही मालिक का स्वरूप है—पर इसका भेद कि किस तरह पर शब्द से रचना हुई, और कैसे शब्द मालिक का स्वरूप है, और किस तरह उसकी डोरी पकड के आदि यानी धुर अस्थान तक जहां से उसका अव्वल ज़हूर हुआ पहुंचना हो सक्ता है, और वह धुर अस्थान कहां है, कुछ नहीं लिखा है, और न कोई मतवाला इस भेद का जानकार है । इस सबब से सब के सब पोथियों और मजहबी किताबों के पढ़ने और पढ़ाने और बाहर की पूजा और रसमों के चलाने में अटक गये, और जो थोड़े बहुत विद्या और बुद्धिवान थे वे अपने आप को ब्रह्म यानी चेतन्य समझ कर चुप्प हो रहे, और इस सबब से सच्चा उद्धार यानी सच्ची मुक्ती किसी की भी नहीं हुई और न होती है ॥

बचन २७

जवाब थोड़े से सवालों के जो एक सतसंगी ने भेजे।

१—सत्तपुर्ष से जोत निरंजन दो कला प्रगट हुईं, और यह दोनों कला चेतन्य है, और इन्हीं ने तीन लोक की रचना करी—पहले ब्रह्म सृष्टी और बाद उसके और क़िस्म की रचना यानी सुर नर और चारों खान, और यह रचना तीन धारों से प्रगट हुई, और यह तीन धारें ब्रह्म और माया से मुक़ाम सहसदलकंवल से निकलीं, और वह तीन गुण कहलाते हैं। सहसदलकंवल तक माया चेतन्य और निहायत लतीफ़ है—सहसदल और तीन गुनों के मंडल के नीचे जड़ता शुरू हुई, और जिस क़दर उतार नीचे होता गया कसाफ़त यानी जड़ता बढ़ती गई—सबब इसका यह है कि सत्तलोक तक निरमल चेतन्य देश है, और उसके नीचे हलकी तह चेतन्य पर थी सो जब ऊपर से धार आई, उसने उस तह को और निरमल चेतन्य को जुदा करके रचना करी, और वह गिलाफ़ या ख़ोल जो अलहिदा हुआ उस से नीचे की रचना की देह ज़ाहिर हुई, और इसी तरह हर मुक़ाम से गिलाफ़

या खोल जोकि बनिस्बत ऊपर के ज़्यादा मोटा होता गया, ख़ारिज करके नीचे को गिरा दिया गया, और निरमल चेतन्य अलहिदा कर लिया गया, और उसी ग़िलाफ़ या खोल के मसाले से नीचे की रचना की देह ज़ाहिर होती गई। ग़रज़ कि इस मुक़ाम पर जहां कि इन्सानी और उससे भी नीचे की रचना है, ग़िलाफ़ ज़्यादा मोटा था, और वह बवजह इस मुटाई के महज़ जड़ हो गया—जैसे कि किसी दरख़्त पर बहुत चमड़ी जो चढ़ी होती है, वह कुछ अरसे बाद खुश्क होकर गिर जाती है, और उसमें तरी बिल्कुल नहीं रहती है—यही हाल नीचे बढ़ता गया॥

२—रचना के अरसे की कुछ तायदाद नहीं है, और न उसका शुमार मुमकिन है—जो शुमार पुरान और दूसरी किताबों में लिखा हुआ है, वह सिर्फ़ इसी सूरज मंडल या उसके ऊपर के सूरज का है, और इसी सूरज मंडल को पैदा हुए मुवाफ़िक़ इल्म सितारों के बेशुमार वर्ष गुज़रे है—और सन्त फ़रमाते है कि एक सूरज मंडल के नीचे दूसरा, और दूसरे के नीचे तीसरा इसी तरह रचना होती चली आई है, यानी अव्वल सूरज मंडल का दूसरे मंडल का सूरज जो उसके नीचे है एक तारा है—अब दराज़ी और वसअत (विस्तार)

रचना का ख़्याल करो कि क़ियास काम नहीं करता, और हर एक मैदान मे बे हिसाब रचना है। मैदान से मुराद हर एक मंडल के घेर से है, सो हर एक मंडल में ऊपर से नीचे तक बराबर रचना होती चली आई है। ऊपर की रचना नीचे की बनिस्बत ज़्यादा से ज़्यादा निरमल और रोशन है–जैसे इस लोक की हवा के मंडल में बहुत से दरजे लताफ़त (सूक्ष्मता) और सरदी के है, और पहाड पर चढ़ने से इन दरजों की ख़बर पड़ती है, या अपने मकान के ऊपर के खनों पर चढ़ने से तफ़ावत हवा का मालूम होता है, इसी तरह रचना में मंडल हैं, और उनकी रचना में ऊपर और नीचे के हिसाब से तफ़ावत और फ़र्क़ है। सब से ऊपर जो देश है वह निर्मल चेतन्य और ऐन रूहानी है, और वहां मिलौनी खोल या तह की नहीं है, और इसी वजह से वहां माया के मसाले की बनी हुई देह नहीं है, (और माया के मसाले के बड़े जुज़ पांच तत्व और तीन गुन हैं) और इसी सबब से वह परम आनन्द और सरूर का मुक़ाम है, और जनम मरन और तकलीफ़ देह की वहां नहीं है, वहां पहुंचना सुरत का, वास्ते हासिल करने सच्ची और पूरी मुक्ती के, सब मंडलों को फोड़ कर ज़रूर है और यह काम

सुरत शब्द योग के अभ्यास से बन सक्ता है, और किसी तरह से मुमकिन नहीं है, क्योंकि शब्द की धार धुर से आई है उस पर सवार होकर धुर मुकाम तक पहुंचना मुमकिन है-और बाक़ी धारें जो रचना में आई हैं, वे किसी न किसी नीचे के मुक़ाम से पैदा होकर उतरी है-उन धारों को पकड़ कर उस मुक़ाम तक पहुंच सक्ता है कि जहां से वह धारें निकली है-उस मुक़ाम के ऊपर यानी धुर अस्थान तक किसी तरह से नहीं जा सक्ता है ॥

३-ऊपर के हाल से फ़र्क़ और तफ़ावत रचना का एक दरजे और सब दरजों में समझ लो-यह बसबब मिलौनी खोल यानी माया के हुआ है, और इस तफ़ावत से कर्त्ता की ज़ात पर किसी तरह का दोष नहीं आ सक्ता है, क्योंकि निरमल चेतन्य देश में सत्तलोक और अलख लोक और अगम लोक की रचना में किसी तरह का फ़र्क़ और तफ़ावत नही है, और नीचे के लोकों में जहां से कि माया का ज़हूर हुआ थोड़ा थोड़ा फ़र्क़ और तफ़ावत पैदा होता गया, और नीचे के मंडलों में ज़्यादा बढ़ता गया। यह रचना जो सत्त-लोक के नीचे हुई है ब्रह्म और माया की करी हुई है, यानी ब्रह्म ने सतपुरुष से सेवा करके इजाजत

लेकर यह रचना करी है, सो इन माया ब्रह्म की निस्बत अलबत्ता इस क़दर इल्ज़ाम लगाया जा सक्ता है कि उन्होंने जीवों को सत्तपुर्ष का भेद नहीं दिया, और वास्ते बढ़ाने और क़ायम रखने रचना के अपनी हद्द में अनेक तरह के धोखे देकर जीवों को अपनी अमलदारी में रक्खा, और अनेक मत जारी करके उन को भरमा और भुला दिया—इसी वजह से संत फ़रमाते हैं कि ब्रह्म देश के पार जाना चाहिये—इस करता का स्वरूप किसी क़दर नाक़िस है, यानी बसबब संगत माया के सफ़ाई कामिल इस में नहीं है, इसी सबब से इसकी रचना में भी कसर है। इस तीन लोक की रचना की उमर है, यानी हद्द मुक़र्रर है, जैसे कि आदमी की उमर है—यह सदा एक रस नहीं रहेगी इसी वजह से संत कहते हैं कि इस देश में जनम मरन से बचाव नहीं होगा—इस वास्ते ज़रूर है कि ब्रह्म देश के पार जाना चाहिये ॥

४—इस लोक की हद्द इस सूरज मंडल के तअल्लुक़ है, यानी यह सूरज मंडल जहां तक कि है वहां तक इस दरजे की रचना की हद्द है, मगर वह रचना जो नीचे की तरफ़ है वह इस लोक की रचना से भी कम दरजे का है, और इसी तरह नीचे के दरजात में

और जियादा कमी ताक़त की होती गई है, और सब से नीचे रचना नहीं है–वहां इस क़दर कसीफ़ (मोटे) ख़ोल चेतन्य पर चढ़े हुए है, कि कसीफ से कसीफ़ रचना भी वहां नही हो सक्ती–वह जगह बतौर खाली मैदान के पडी हुई है–वहां रचना किसी वक्त में भी नहीं होगी, मगर तायदाद उसके फ़ासले और वसअत की कुछ नहीं कही जा सक्ती, क्योंकि अगर महासंख को एक अदद तजवीज़ करके शुमार किया जावे, तो भी हिसाब नही लग सक्ता, वहां गिनती का शुमार नहीं हो सक्ता है, और न इस तायदाद के जानने की कुछ ज़रूरत है–मनुष्य को अपने उद्धार यानी ऊपर को चढ़ने का फ़िकर करना चाहिये, और रचना के हिसाब में जोकि बेशुमार है जियादा पडना बेफ़ायदा है–सिर्फ़ ख़ास क़ायदः को जान लेना चाहिये, और जोकि क़ानून कुदरत का सब जगह एकसां है, उसको समझ कर सब जगह की चाल का अनुमान करके, अपने मन को तसल्ली देकर, अपने ख़ास काम को, जो कि अपने जीव का कल्यान है, शुरू करना चाहिये ॥

५–अजपा जाप यानी सोहं शब्द का स्वांसा से सुमिरन का ऊपर के दरजे के सोहं से कुछ तअल्लुक़

नहीं है, और इस अभ्यास की रसाई किसी मुक़ाम पर नहीं है, सिर्फ़ थोड़ी सफ़ाई मन की इससे हो सक्ती है ॥

६-यही भारी दलील आवागमन की है, कि जब तक निरमल चेतन्य देश में सुरत न पहुंचेगी, तब तक किसी न किसी क़िस्म के ख़ोल में रहेगी, और वह ख़ोल या ग़िलाफ़ उसकी देह समझना चाहिये, और जनम मरन गिलाफ़ का है न कि सुरत या रूह का, फिर सुरत जो एक देह को छोड़ती है तो ज़रूर दूसरी देह उसको धरनी पड़ती है, चाहे इस लोक में चाहे ऊंचे या नीचे के लोक में-और जिन मतों में आवागमन नहीं मानते है, उनसे पूछना चाहिये कि बहिश्त (स्वर्ग) और ऐराफ़ और जहन्नुम (नर्क) में यह रूहें कौन और किस क़िस्म की देह रख कर दुख सुख पावेंगी । इस बात का वे जवाब साफ़ तौर पर नहीं दे सक्ते हैं क्योंकि सुरत बग़ैर देह के तो ऐन आनन्द स्वरूप है, उसको किसी सूरत में दुख सुख नहीं हो सक्ता है, और दुख सुख के भोगने के वास्ते देह का होना ज़रूर है, और रूह या सुरत जब बहिश्त और ऐराफ़ और दोज़ख़ में जो तीन मुक़ाम जुदा इस लोक से हैं जाती है, और वहां दुख सुख भोगती है,

तो कोई न कोई देह मे जरूर उसकी बैठक होगी, तो इस लोक की देह से उस देह में उन स्थानों में जाना आवागमन को साबित करता है, और इल्म नजूम पढ़ने से बहुत सा हाल रचना का, कि किस तौर से शुरू हुई, और किस क़दर अरसा (काल) दराज से चली आती है, मालूम हो सक्ता है, और उससे किसी क़दर उनमान ऊंचे की रचना का हो सकता है॥

७–जीव यानी सुरत सत्तपुरुष राधास्वामी की अंस है, जैसे सूरज और सूरज की किरन। रचना से पेश्तर यह सत्तपुर्ष राधास्वामी के साथ अभेद थी–जब सत्त-लोक की रचना के नीचे सत्तपुर्ष के चरनों से प्रथम अंस निरंजन यानी कालपुर्ष प्रगट हुआ, और उसने वास्ते करने तीन लोक की रचना के सत्तपुर्ष से सेवा करके आज्ञा मांगी, और उसको इजाजत दी गई और वह अकेला रचना न कर सका, तब उस वक्त आद्या को (जो दूसरी अंस सत्तपुर्ष की है) प्रगट करके, और उसको बीजा जीवों यानी सुरतों का हवाला करके, निरंजन के पास भेजा गया, और इन दोनों अंसों ने मिल कर रचना तीन लोक की करी॥

८–त्रिकुटी के मुक़ाम से माया प्रगट हुई, और यह

गुबार रूप, यानी परमानू स्वरूप थी, और यह माया असल में एक ग़िलाफ़ या तह थी, जो चेतन्य पर दसवें द्वार के नीचे बतौर मलाई के दूध पर चढ़ी हुई थी– जब वह दोनों धारें, यानी निरंजन और आद्या यानी जोत, इस मुक़ाम पर आईं, तब वह तहें अलहिदा की गईं, और वह गुबार यानी परमानू स्वरूप होकर फैली, और इन तीनों की मिलौनी से निहायत सूक्ष्म धारें तीन गुन सत रज तम की त्रिकुटी से अरूप प्रगट हुईं, और सहसदलकंवल के स्थान से जो त्रिकुटी के नीचे है यह धारें स्वरूपवान प्रगट हुईं, और पांच तत्त्व भी प्रगट हुए, और यह तत्त्व और गुन माया के मसाले के बड़े अंस हैं ॥

९–अब मालूम होवे कि त्रिकुटी को ब्रह्म पद कहते हैं, और सहसदलकंवल के धनी यानी मालिक को ईश्वर कहते हैं, और इस अस्थान से सुरत यानी जीव की धार और मन और माया की धार जुदा २ प्रगट होकर नीचे उतरी और तीन लोक की रचना हुई, जिन मतों की रसाई यहां तक हुई (और असल में सब मत इसी अस्थान तक ख़तम हो गये) उन को इसके ऊपर का हाल मालूम न हुआ–इस वास्ते उन्होंने ईश्वर और जीव और माया (यानी परमानू)

को अनादी कहा—पर संत मत के मुवाफ़िक़ माया और उसके परमानू की आदि त्रिकुटी से हुई, और सुरत सत्तपुरुष राधास्वामी के अस्थान से आई, और ईश्वर भी यानी निरंजन सत्तपुर्ष से प्रगट हुआ, फिर यह सब किस तरह अनादी हो सक्ते हैं, क्योंकि सत्त लोक और उसके ऊपर के अस्थानों में इनका वजूद और निशान भी नहीं है ॥

१०—सुरत का बीजा आद्या की मारफ़त एकही वार सत्तलोक से आया, अब बार २ सुरतें वहां से नहीं आती है ॥

११—निरंजन यानी काल अंस भी एकही दफ़ा वहां से आया, अब वह उलट कर वहां नहीं जा सक्ता है ॥

१२—संतों के मत के मुवाफ़िक़ परलय के वक़्त में त्रिकुटी का अस्थान भी सिमट जावेग, और उस वक़्त ईश्वर और जीव यानी सुरत और माया (मय अपने मसाले तीन गुन और पांच तत्त्व के) दसवें द्वार में समा जावेंगी, और उनका रूप जो उस मुक़ाम के नीचे जाहिर हुआ है अपने २ भंडार में लय हो जावेगा॥

बचन २८

रचना का बर्णन कि आदि में कैसे हुई ॥

१—आदि में जब किसी क़िस्म की रचना नहीं हुई

थी, तब अनामी पुर्ष था, और उसका स्वरूप अंडाकार था। स्वरूप के कहने से कोई आकारी रूप नहीं समझना चाहिये, यह स्वरूप अपार अनंत अकह अनाद और अरूप था, एक हिस्सा ऊपर का निरमल यानी नूरानी या प्रकाशवान था—और बाक़ी नीचे की तरफ़ दरजे बदरजे तहों या ग़िलाफ़ों से ढका हुआ था, इस तौर से जहां कि तह या ग़िलाफ़ शुरू हुआ, वहां से जिस क़दर प्रकाशवान हिस्से से दूरी होती गई, उसी क़दर नीचे की तह या ग़िलाफ़ भारी या मोटी होती गई, इस हालत में यह तह या ग़िलाफ़ कोई दूसरी चीज नहीं समझी जा सक्ती है, उसकी कैफ़ियत ऐसी थी जैसे दूध के ऊपर मलाई, हरचंद मलाई दूसरी चीज़ नहीं है मगर वह दूध नहीं हो सक्ती, पर उसका ग़िलाफ़ या ख़ोल होकर रहती है, और फिर उस मलाई में भी दरजे होते हैं, जैसे निहायत बारीक और बारीक और फिर मोटी और ज़्यादा मोटी वग़ैरः ॥

२–जिस वक़्त कि अनामी पुरुष का यह स्वरूप था, उस वक़्त जो अङ्ग उसका कि नूरानी हिस्सा से नीचे निहायत बारीक तह से ढका हुआ था, उसकी कशिश नूरानी हिस्से की तरफ़ जारी थी, जैसे जब

किसी बरतन में घी भर कर ऊपर का हिस्सा उसका रोशन कर दिया जावे तो उसके नीच के घी की दौड़ रोशन घी की तरफ़ होती है, और उस नीचे के हिस्से के घी की तह या गिलाफ़ धुआं रूप होकर जुदा हो जाती है ऐसे ही जो नीचे का हिस्सा कि रोशन और प्रकाशवान हिस्से से मिला उसी वक्त उसकी तह जुदा होकर नीचे की तरफ़ गिर गई, और वह हिस्सा भी रोशन हिस्से से मिलकर रोशन हो गया, फिर उस रोशन हिस्से से मौज यानी धार प्रगट हुई और नीचे उतर कर किसी क़दर फ़ासिले पर ठहरी, और वहां उसने उस देश के चेतन्य से तह या गिलाफ़ को अलहिदा करके नीचे की तरफ़ गिरा दिया, और जो रोशन रूप बरामद (प्रगट) हुआ उसको अपने रूप में मिला लिया, और फिर उसका मंडल बढता गया, यानी सब तरफ़ से गिलाफ़वाला चेतन्य रोशन चेतन्य की तरफ़ खिंच कर और उससे मिलकर रोशन होता गया, और इसी तरह उस मण्डल मे फिर कार-रवाई रचना की जारी हुई, और जो गिलाफ़ कि ऊपर से उतर कर नीचे गिरा था उसके मसाले से उस रचना की रूहों की देह बनाई गई जब उस मण्डल की सब रचना हो गई और उस पर कुछ

अरसा गुज़र गया, तब उस मुक़ाम से पहिले दस्तूर के मुवाफ़िक़ नई धार या मौज प्रगट हुई, और इसी तरह् नीचे उतर कर किसी क़दर फ़ासिले पर ठह्री, और वहां के गिलाफ़दार चेतन्य की तह को हटाकर नीचे गिराया, और नूरानी स्वरूप जो बरामद हुआ उसको अपने से मिलाकर बदस्तूर मंडल बांधा, और रचना करी, यानी ऊपर से उतरे हुए गिलाफ़ या तह का जो मसाला था उससे इस मंडल की रूहों की देह तय्यार करी, और यही देह उनका गिलाफ़ होती गई, यह दोनों मंडल अगम लोक और अलख लोक कहलाते हैं और इनके मालिक अगम पुर्ष और अलख पुर्ष हैं ॥

३-इसी तरह् से अलख लोक से धार उतर कर नीचे आई, और सत्तपुर्ष रूप होकर सत्तलोक रचा, और फिर उस लोक में रचना करी-यह तीनों मुक़ाम और उनकी रचना उस हिस्से अनामी पुर्ष में रची गई कि जो सदा प्रकाशवान और निरमल चेतन्य के क़रीब नीचे था, और जहां की तह बहुत बारीक थी, जैसे कि संगतरह की फांक के ज़ीरे का गिलाफ़ होता है, और वह तह या गिलाफ़ और उसका मसाला भी ऐन नूरानी और चेतन्य स्वरूप था, यानी अनामी

पुर्ष के नूरानी अंग के स्वरूप में और उस तह के रूप में बहुत कम भेद या फ़रक़ था, यानी वह भी वहां के नूरानी चेतन्य के मुवाफ़िक़ नूरानी थी, और इसी सबब से उस चेतन्य का ग़िलाफ़ होकर रही, और जब रूहों की जुदा २ रचना हुई तब वही तह या ग़िलाफ़ के मसाले से उन रूहों की चेतन्य यानी रूहानी ख़ोल या देह तैयार हुई ॥

४–सत्तलोक के नीचे जो ग़िलाफ़दार चेतन्य था वह किसी क़दर काले रंग का था–जब उसको कशिश सत्तलोक की तरफ़ हुई, तो उसका ग़िलाफ़ दूर होकर नीचे को गिराया गया, पर वह क़ाबिल इसके न था कि सत्तलोक के चेतन्य के साथ तदरूप हो जावे, इस वास्ते वह सत्तलोक के नीचे के अंग से किसी क़दर श्याम रंग नूरानी धार रूप होकर प्रगट हुई, और वह धार नीचे की तरफ़ दिन २ बढ़ती गई, और किसी क़दर फ़ासिले पर सत्तपुर्ष के सन्मुख ठहरी–इसी धार का नाम निरंजन और कालपुर्ष है–इसी ने कुछ अरसे के बाद सत्तपुरुष से दरख़्वास्त की कि मुझको हुक्म और इख़्तियार सत्तलोक के मुवाफ़िक़ रचना करने का मिले, और वहां मैं तुम्हारा ध्यान करता रहूं, सो

उसकी ऐसी ख़्वाहिश देख कर सत्तपुर्ष ने इजाज़त दी कि नीचे के देश में जाकर रचना करे ॥

५-तब यह निरंजन की धार उतर कर नीचे आई और चाहा कि रचना करे, पर इसकी ताक़त ऐसी न थी कि तनहा (अकेला) कार्रवाई कर सके-फिर इसने सत्तपुर्ष के चरनों में अर्ज़ हाल किया, तब वहां से दूसरी धार पीले रंग की जो कि ऐन चेतन्य थी, और सुरत यानी रूहों का बीज उसमें मौजूद था नीचे उतारी गई-इसका नाम आद्या या जोत हुआ ॥

६-जिस अस्थान पर यह दोनों धारें आकर पहिले ठहरीं उसका नाम सुन्न यानी दसवां द्वार है-वहां पर इनका नाम पुर्ष प्रकृति हुआ और यही अस्थान निरमल सुरत का प्रथम ठेका है ॥

७-फिर यह दोनों धारें उतर कर नीचे के मुक़ाम पर जिसको त्रिकुटी कहते है ठहरीं, और वहां इनका नाम माया ब्रह्म हुआ, क्योंकि दसवें द्वार के नीचे के चेतन्य पर ग़िलाफ़ किसी क़दर मोटा यानी दूना था, एक तह या ग़िलाफ़ पहिली तह के मुवाफ़िक़ और दूसरा ज़्यादा अस्थूल, और जब तह या ग़िलाफ़ अलहिदा किया गया, और ऊपर से दोनों धारें उतरीं तब इस ग़िलाफ़ का मेल करके उनका नाम ब्रह्म

और माया हुआ, और इन दोनों की मिलौनी से तीन धारें अति सूक्ष्म गुप्त यहां से जारी हुईं। यहां माया का रूप भी चेतन्य और लतीफ़ और निरंजन का रूप भी चेतन्य और लतीफ़ यानी सूक्ष्म है॥

८–फिर मुक़ाम त्रिकुटी से दोनों धारें उतर कर सहसदलकंवल में आकर ठहरीं, और यहां इनका नाम जोत निरंजन और शिव शक्ति हुआ–ब्रह्मांड में ब्रह्म सृष्टी की रचना इन्हों ने करी–यहां पर निरंजन जोत का स्वरूप जुदा २ प्रगट हुआ, और यह दोनों चेतन्य और निहायत लतीफ़ यानी सूक्ष्म स्वरूप हैं–इस मुक़ाम से तीनों गुन की धारें यानी सत, रज, तम, जिनको ब्रह्मा, बिष्णु और महेश कहते है, और पांच तत्त्व सूक्ष्म यानी पृथ्वी, जल, अग्नी, पवन और आकाश जाहिर हुए–इन आठों से मिलकर चेतन्य पुर्ष और माया ने तीन लोक की रचना करी यानी देवता, असुर और चार खान के जीव (जेरज, अंडज, सेतज और उषमज) जिसमें मनुष्य, चौपाये, परिंद और कीड़े मकोडे और अनेक क़िस्म के दरख़्त और बनस्पती और खानें शामिल है पैदा किये और सूरज और चांद और जमीन और आसमान रचे गये॥

९--अब समझना चाहिये कि सहसदलकंवल के नीचे प्रगट काररवाई तीन धारों की है ॥

पहली चेतन्य धार जो सत्तपुर्ष राधास्वामी की अंस है और यहां अनेक जिस्मों में जीव चेतन्य या सुरत कहलाती है और कारफ़रमा यानी करता यही है ॥

दूसरी निरंजन यानी कालपुर्ष की धार जो मन रूप होकर हर एक जिस्म में सुरत की ताक़त से काररवाई करती है ॥

तीसरी माया की धार जो देह और इन्द्री रूप होकर सुरत और मन का ग़िलाफ़ हो रही है--नीचे के देश में माया की तह या ग़िलाफ़ और उसका मसाला (जो तीन गुन और पांच तत्त्व में) अस्थूल और ज़्यादा अस्थूल यानी मलीन से मलीन होते गये, और इसी सबब से इन देशों में रचना भी निहायत अस्थूल और मलीन है ॥

१०--ऊपर के बयान से मालूम होगा कि ब्रह्म और माया, यानी ब्रह्मांडी मन और उसकी शक्ति, जिस को खुदा और परमेश्वर और सिफ़त यानी माया
दूसरा ज़्यादा ऩलोक के नीचे से पैदा हुई, और इन्हीं
अलहिदा किय के देश यानी पिंड में मन और इच्छा
उतरीं तब इस गि़ड दोनों पिंड देश में सुरत चेतन्य

की शक्ती से जो सत्तपुर्ष की निज अंश हैं चेतन्य है और अपनी २ कार्रवाई करते है ॥

११-मालूम होवे कि पहिला गिलाफ या तह जो चेतन्य पर सत्तलोक के नीचे चढा हुआ था वह निरंजन रूप हुआ. और उसका रुख़ या मुख बाहर की तरफ़ है, और हमेशा चेतन्य का गिलाफ रहता है-त्रिकुटी में इसका नाम ब्रह्मांडी मन है, और इसी तह से सहसदल कंवल के नीचे से मन पैदा हुआ, जिसका रुख भी बदस्तूर बाहर की तरफ़ है, और इस लोक यानी पिंड की रचना में सुरत चेतन्य का गिलाफ़ हो रहा है-दूसरी तह जो चेतन्य पर दसवे द्वार के नीचे चढ़ी हुई थी वह चेतन्य माया हुई, और ब्रह्म सृष्टी की रूहों की देह का मसाला उस ही से निकला, और इसी तरह सहसदल कंवल के नीचे जीवों की देह का मसाला वहां की माया से पैदा हुआ, और ऐसे ही जिस क़दर नीचे से नीचे रचना होती गई पहली और दूसरी तह मोटी होती गई, और उसमें दरजे हो गये, यानी मन और माया का मसाला अस्थूल से अस्थूल और मलीन से मलीन होता गया ॥

बचन २६

राधास्वामी मत क्या है और उसके अभ्यास सुरत शब्द मारग का फल क्या है।

१—राधास्वामी मत सच्चे कुल्ल मालिक और उसके निज धाम का भेद समझा कर सुरत को अपने सच्चे मालिक और निज माता पिता के चरनों में जहां से यह आदि मे उतर कर आई पहुंचने का रास्ता बताता है और जुगत उस रास्ते पर चलने की उपदेश करता है ॥

२—यह सुरत अपने धाम से जुदा होकर तिरलोकी मे माया और काल के जाल मे फंसकर, और पिंड के बंदीख़ाने मे क़ैद होकर, और मन और इन्द्री और उनके भोगों के संग लिपटकर, इस लोक में सब तरह के दुख सुख और संताप सह रही है—इस वास्ते राधास्वामी मत इसके दुख हमेशा को दूर करने के लिये सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल की सर्व समरत्थता और मेहर और दया की महिमा सुनाकर चरन सरन दृढ़ कराता है, जिसके सबब से चलनेवाली सुरत को उस रास्ते के तै करने में बहुत

आसानी होती है, और चाल सुखाली चलती है, और दया और मेहर संग रहती है, और काल और माया के विघन सहज में दूर होते हैं, यह मत कुदरती है यानी सच्चे मालिक के मिलने का सच्चा रास्ता कुद-रत के क़ायदे के मुवाफ़िक़ समझाया जाता है, यानी जैसे कि आदि में जब प्रथम सुरत के उतार के साथ रचना शुरू हुई, उसी तरह और उसी रास्ते से सुरत का उलटाव यानी चढ़ाई की जुगत बताई गई है—और यह हाल हर एक जीव का मरने के वक़्त होता है कि उसकी रूह की धार का खिंचाव पैरों की उंग-लियों से शुरू होकर आंखों की पुतली के खिंचाव तक आंख से नज़र आता है, और इसी खिंचाव के साथ ताक़त देह और इन्द्रियों का घटती और खिच-ती हुई मालूम होती है—इसी तरह से अभ्यास के वक़्त सुरत शब्द मारग के अभ्यासी की सुरत और मन का उलटाव और खिंचाव ऊपर की तरफ़ स्वतन्त्रता के साथ होता जावेगा, और जो अभ्यास दुरुस्ती से शौक़ के साथ बनता चला गया तो एक दिन वह अभ्या-सी मौत के मुक़ाम पर पहुंच कर उसको जीत लेगा, और जिस किसी से इस क़दर अभ्यास न बना तो भी वह बहुत दूर तक अपना रास्ता अख़ीर वक़्त

पर चलने का साफ़ करके बहुत से दुख सुख संसारी और तकलीफ़ मौत से अपना बचाव कर सकता है ॥

यह रास्ता और जुगत किसी आदमी की बनाई हुई या निकाली हुई नहीं है, इसका उपदेश और भेद सच्चे मालिक ने आप संत सतगुरु रूप धार कर जीवों पर अति दया करके प्रघट किया ॥

३—जो कोई इस मत में शामिल हुआ और सुरत शब्द का उपदेश लेकर उसके अभ्यास में लगा, तो उसको सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल का दामन या चरन पकड़ा दिया गया, क्योंकि धुर मुक़ाम से शब्द की धार हर एक रास्ते के मुक़ाम से होकर बराबर नीचे तक जहां कि पिण्ड में सुरत की बैठक है, और जहां बैठ कर यह सुरत देह और संसार के साथ कारवाई करती है, जारी है; और जिसको उस धार का और उन धुनों यानी आवाजों का जो उन धारों के साथ हो रही हैं भेद मिला, और मन और सुरत को उस धुन के संग लगाकर चढ़ाने की जुगत बताई गई, तो उस सुरत को धुन के वसीले से सच्चे मालिक के चरन के साथ मेल करने और उसको पकड़ कर चढ़ने का क़ायदा मालूम हो गया, और वह उसी दस्तूर के मुवाफ़िक़ जब चाहे जब चरन के साथ

लिपट कर उसका रस और आनन्द ले सक्ती है, और उसी धार को पकड़ कर आहिस्ता २ अभ्यास करके धुर मुक़ाम तक पहुंच सक्ती है ॥

४-ऊपर के लिखे हुए से साफ़ मालूम होगा कि राधास्वामी मत का मतलब यह है, कि सुरत को दुख सुख और जनम मरन के अस्थान से हटा कर, उसके निज घर में जो महा सुख और परम आनन्द का भंडार है पहुंचाना, यानी पिण्ड और ब्रह्मांड से जो कि काल और माया का देश है निकाल कर संतों के दयाल देश यानी निरमल चेतन्य में पहुंचाना, ताकि काल कलेश से बच कर दयाल देश में सदा का आनंद यानी अमर सुख पावे और आप भी अमर हो जावे ॥

५-बरख़िलाफ़ इसके और मतों का जो दुनिया में जारी हैं यह हाल है, कि जीवों को इसी देश के ऊंचे नीचे और मध्य स्थान में रख कर कभी सुख और कभी दुख के चक्कर में डाले रक्खें, और जनम मरन की फांसी काटी न जावे, बल्कि उनको पूरा भेद रचना का और पता सच्चे मालिक और उसके सच्चे देश का मालूम भी नहीं हुआ, इसी सबब से वे काल और माया देश के पार का हाल नहीं बयान

करते, और न उसके पार जाने की जुगत समझाते और बताते हैं–इसका हाल इस दृष्टान्त से जो नीचे लिखा जाता है साफ़ २ मालूम होवेगा ॥

दृष्टान्त

जैसे पानी असल में गैस रूप था और फिर हवा रूप और बादल रूप और बुख़ार रूप से पानी रूप हो कर बरसा–और फिर जम कर बर्फ़ रूप हो कर जड़ यानी बेहिस्स और हरकत हो गया–और जब उस को गर्मी पहुंचाई गई, तब फिर पानी रूप और बुख़ार यानी भाप रूप और बादल रूप और हवा रूप होकर फिर गैस रूप होकर गुप्त हो गया, और ऊंचे से ऊंचे देश में जहां उस का पहले बासा था जाकर ठहरा ॥

६–अब समझना चाहिये कि संत सतगुरु का मत यानी राधास्वामी मत बर्फ़ रूप को उस के असली घर में पहुंचा कर गैस रूप बनाने की जुगत बताता है, कि जिस से वह तोड़ फोड़ और ख़ुश्की और गरमी और पाकी और नापाकी और इस्त-हालह यानी जनम मरन की हालत से छूट कर अपने असली रूप में जो एक रस और एक हालत में क़ायम रहता है मिल जावे, और तकलीफ़ात से

नजात पावे–और इस्तहालह उस को कहते हैं कि कभी कोई और कभी कोई हालत या रूप बदलना, और यही मतलब जनम मरन से है–कि एक देह या रूप से दूसरी देह या रूप में बदल जाना ॥

७–और २ मत बर्फ या पानी रूप को इसी जगह के रूप या निशानों में या पोथी और किताबों में जिस में असली हाल निज रूप और निज घर का और उस की प्राप्ती और वहां पहुंचने की जुगत का ज़िकर भी नहीं है अटकाते हैं, और इसी जगह सफ़ाई रखने या कुछ दिन आराम हासिल करने की तरकीब बयान करते हैं–पर उस तरकीब से चाहे जिस कदर कोई करे सच्ची और पूरी सफ़ाई और दुखों से बचाव यानी पूरा आराम हासिल नहीं हो सक्ता है, और न वह तरकीब जैसा चाहिये किसी से बन पड़ती है–इसी से सब जीव बहुत करके लाचार और ख़ाली नज़र आते हैं, और न अपने निज घर और निज रूप का भेद जानते हैं, और न उस की प्राप्ती की जुगत की ख़बर है ॥

कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल ने दया करके सब भेद और जुगत साफ़ २ करके समझाई और

बानी में बयान करी है । अब जीवों को इख़्तियार है कि चाहे उन के बचन को बिचार करके मानें या नहीं ॥

राधास्वामी मत में जब्र और ज़बरदस्ती नहीं है, और न किसी को लालच या डर दिखाया जाता है । अलबत्ता बचन और बानी करके भेद सुनाया और समझाया जाता है । जो बड़ भागी हैं वे मानते हैं और अपने जीते जी उस का फल देखते हैं, यानी दुनिया में भी उस के दुख सुख से बहुत कुछ बचे रहते हैं, और अंत समय पर सुखाले जाते हैं ॥

और जो नहीं मानते उन को इस दुनिया और देह का भी दुख सुख बहुत व्यापता है, और अंत समय पर इधर से अंधे और बेहोश होकर जाते हैं, और अंतर में तरह २ की तकलीफ़ें रास्ते में सहते हैं ॥

पर इस में भी मौज है, जिन का भाग जल्द उद्धार का है वे बचनों को सुन कर जल्द समझते और मानते हैं, और जिन के उद्धार में अभी देरी है वे बचनों को उछाल देते हैं और नहीं मानते ।

———o:———

बचन ३०

सुरत को भी अहार और रस देना चाहिये जैसे तन मन और इंद्रियों को दिया जाता है ॥

१-सब आदमी खाना पीना अच्छा चाहते और खाते है, जिस से उन की देह की और उस के साथ मन और इन्द्रियों की ताक़त बढ़ती है-और जो खाना न मिले तो तमाम देह और उसके अंगों में नाताक़ती और ज़ोफ़ आजाता है, और फिर जो काम कि उन से लिये जाते है उन की काररवाई दुरुस्त नहीं होती ॥

२-जो कुछ कि आदमी खाता और पीता है, उस का खुलासा खून के वसीले से तमाम बदन और अंग २ में पहुंच कर, और उस का अहार हो कर उस को ताक़त देता है-और इसी तरह ताजह हवा खानी और बाग और फुलवारी के देखने और राग और बाजे के सुनने से दिल और इन्द्रियों को ताक़त और फ़रहत (खुशी) हासिल होती है ॥

३-सिवाय खाने और पीने और देखने और सुनने और सूंघने की चीज़ों के हर एक आदमी सूक्ष्म तत्त्व और तीन गुन और रोशनी और बिजली वग़ै-

रूह से भी कुछ मदद वास्ते परवरिश और ताक़त और सेहत (आराम) अपने बदन के लेता है—पर इन सब चीज़ों से सुरत को अहार और ताक़त बहुत कम बल्कि कुछ नहीं मिलती। वह जिस क़दर मुमकिन है अपने मंडल के चिदाकाश से मामूली मदद और ताक़त लेती है, जैसे कि आदमी की देह इस मंडल के आकाश से मदद और ताक़त लेती है॥

४—सुरत यानी रूह को बढ़ का अहार और गहरी ख़ुशी और ताक़त और ताजगी देने वाली मदद जब मिल सक्ती है, कि कोई आदमी सुरत शब्द अभ्यास के वसीले से उसको ऊपर को चढ़ावे, और जो धार अमृत की ऊंचे देश से आती है उसके साथ सुरत की धार का मेल अभ्यास के वसीले से किया जावे॥

५—जब ऐसी ताक़त और ख़ुशी अंतर में सुरत को ऊंचे चढ़ कर हासिल होती है, तब वह अपने भागों को सराहती है, और गुरू की महिमा जिन की दया से वह सुरत शब्द के अभ्यास में लग कर इस आनंद और सरूर को पाती है, बारम्बार गाती है, और निहायत दरजे की इहसानमंदी उनकी ज़ाहिर करती है॥

६—इस हालत अभ्यास में सुरत को साफ़ मालूम होता है, कि जो आनंद उसको शब्द की धार से (जो कि अमृत और प्रकाश की धार है) मिल कर हासिल होता है, वैसा रस या आनंद इस लोक में बिलकुल नहीं है—और ज्यों २ अभ्यास बढ़ता जाता है यानी जिस क़दर सुरत ऊंचे को चढ़ती जाती है उसी क़दर वह आनंद दिन २ बढ़ता जाता है, और अभ्यासी की हालत बदलती जाती है, यहां तक कि उसको इस दुनिया के भोग बिलास और राज पाट और हुकूमत कुछ भी नहीं सुहाते हैं, और कुल्ल मालिक सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत और प्रतीत गहरी और ज़्यादा से ज़्यादा होती जाती है, और दुख सुख देह और दुनिया के उसको मालिक की दया से और अंतर के आनंद हासिल होने से बहुत कम व्यापते हैं, और जो ज़्यादा ऊंचे दरजे तक पहुंच हो जावे तो बिलकुल नहीं व्यापते ॥

७—सिवाय ऊपर के लिखे हुए फ़ायदे के सुरत शब्द मारग के अभ्यासी को बीमारी और मौत के वक़्त तकलीफ़ कम होती है, क्योंकि जिस रास्ते हो कर मरने के वक़्त सुरत जाती है, वह उस रास्ते को जीते जी किसी क़दर देख लेता है, और वहां की

कैफ़ियत उसको सब मालूम हो जाती है-फिर मरने के वक़्त उस रास्ते पर बहुत सुख और आनंद के साथ जाता है, और अपने मालिक की कुदरत और दया को देख कर बहुत मगन हो कर अपनी बड़भागता को सराहता है ॥

८-सब आदमियों को चाहे मर्द होवें या औरत मुनासिब मालूम होता है, कि जैसे अपने तन मन और इन्द्रियों को अहार और ताक़त देने के लिये रात दिन मिहनत करते हैं, तो थोड़ा बहुत अपनी सुरत को भी ताक़त और अहार देने के वास्ते ज़रूर जतन करें, नहीं तो सख़्त और भारी तकलीफ़ होगी, और मौत के वक़्त उनको बहुत दुख सहना पड़ेगा, और उस वक़्त का पछतावा कुछ फ़ायदा नहीं देवेगा ॥

जो बीस २० या बाईस २२ घंटे दुनिया के कामों में ख़र्च करें, तो लाज़िम है कि दो या तीन या चार घंटे अपनी सुरत के फ़ायदे के वास्ते, जो कि तन मन और इन्द्रियों की चेतन्य करने वाली है ज़रूर ख़र्च करें। जो वे यह काम सचौटी से करेंगे, तो इसका फ़ायदा थोड़े दिन के अभ्यास से उनको आप दीखने लगेगा, और सच्चे मालिक की अपने अंतर में मौजूदगी और उसकी दया की भी ख़बर पड़ेगी, और तब सच्ची

प्रतीत और प्रीत उसकी चरनों में आवेगी, और फिर आहिस्ता २ अपने सच्चे उद्धार का सबूत अपने अंतर में मिल जावेगा ॥

९–यह काम सबको करना जरूर मालूम होता है, और जो कोई थोड़ा सा भी अभ्यास सुरत शब्द मारग का जीते जी कर लेगा, तो भी वह चौरासी से बचा कर ऊंचे देश में पहुंचाया जावेगा। और जो दुनिया के भोग बिलास मे अटक कर इस अभ्यास को नहीं मानेगा और नहीं करेगा, तो वह अपने करमों के मुवाफ़िक़ ऊंची नीची जोन में जावेगा, और जमदूतों के हाथ से बहुत दुख पावेगा, और जनम मरन की तकलीफ़ हमेशा सहता रहेगा ॥

बचन ३१

सुरत शब्द मारग के अभ्यास से मन और इन्द्रियों का क़ाबू में आना।

१–सब महात्माओं और सब मतों के आचारजों ने ऐसा कहा है, कि जब तक मन और इन्द्री क़ाबू में नहीं आवेंगे, तब तक तत्त पद का ज्ञान यानी सिद्धान्त पद की प्राप्ती नहीं होगी ॥

२–और मन और वासना यानी संसारी चाह के

अभाव या नाश करने के लिये अनेक जुक्तियां हर एक ने लिखी हैं, पर उनमें से कोई भी जुक्ती ऐसी नहीं है कि जिसका अभ्यास बे ख़तरे और बे ख़ौफ़ गृहस्ती और बिरक्त जीव बराबर कर सकें, और जीते जी उसका फल भी अपनी आंख से देखें ॥

३–प्राणायाम के अभ्यास को अकसर लोगों ने सब जुक्तियों और अभ्यासों से बढ कर रक्खा है, और कहा है कि इससे मन और इन्द्री बस में आ सक्ती हैं। यह बात तो सही है, पर इस अभ्यास की कमाई यानी प्राणों का रोकना किसी से दुरुस्ती के साथ नहीं बन सकता है, और खतरे और बीमारी के सबब से किसी की जुर्रत (हिम्मत) और ताक़त इस अभ्यास के करने की नहीं होती, और इस समय में ख़ास करके प्राणायाम की जुगत किसी गृहस्ती या भेष से नहीं बन सक्ती है ॥

४–इस वास्ते ऐसी हालत जगत की देख कर कुल्ल मालिक सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल ने संत सतगुरु रूप धार करके सुरत शब्द मारग की आसान जुक्ती प्रगट की, कि जिसका कुल जीव गृहस्त होवें या विरक्त, अथवा औरत होवें या मर्द, कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की सरन लेकर अभ्यास करके सत्तलोक

यानी दयाल देश में पहुंच सक्ते हैं, और जनम मरन की क़ैद से बच कर, और देह और संसार के दुख और सुखों से न्यारे होकर, अमर देश में परम आनंद को, जिसका कभी अभाव या नाश नहीं हो सक्ता है, प्राप्त हो सक्ते हैं ॥

५—वह जुक्ती सुरत शब्द की यह है, कि अपनी सुरत यानी रूह की तवज्जह को अपने घट में जहां शब्द की धुन हरदम हो रही है, उस आवाज़ का पता और भेद लेकर लगाना, और उसकी धुन को सुन कर छांट करना, और जो शब्द कि संत सतगुरु ने हर एक अस्थान रास्ते के तअल्लुक़ समझाये हैं, उसी मुवाफ़िक़ धुन को पकड़ के सुरत और मन को ऊपर को चढ़ाना, और इसी तरह रास्ते के मुक़ामों को तै करके धुर मुक़ाम पर जो कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का अस्थान है पहुंच कर वहीं बिसराम करना ॥

६—जिस क़दर इस अभ्यास की कमाई राधास्वामी दयाल की दया से बनती जावेगी, उसी क़दर मन और सुरत सिमट कर, आकाश की तरफ़ पिंड में, और फिर उसके परे ब्रह्मांड में, और फिर उसके भी परे दयाल देश यानी सत्तपुर्ष राधास्वामी देश में, चढ़कर

पहुंचते जावेंगे, और देह और इन्द्री और मन और संसार की सुध बुध दिन २ बिसरती जावेगी ॥

७-जिस किसी से एक दरजे की भी कमाई किसी क़दर बन पड़ेगी, वह मुताबिक़ अपनी सुरत की चढ़ाई के तन मन और इन्द्रियों को किसी क़दर बस में लावेगा, और उसी क़दर उसको अंतर में मालिक का दर्शन प्राप्त होता जावेगा, यानी पहले दरजे में आत्मा और परमात्मा का, और दूसरे दरजे यानी ब्रह्मांड में ब्रह्म और पार ब्रह्म का, जोकि तिरलोकी का नाथ है, और तीसरे दरजे में सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल का, जो कि कुल्ल मालिक और सर्ब समरत्थ हैं, दर्शन पावेगा ॥

८-परम तत्त नाम सत्त शब्द का है, जोकि आदि में सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल के चरनों से प्रगट हुआ, और कुल्ल रचना जिसकी चेतन्यता से पैदा हुई-और तत्त नाम अनहद शब्द का है, जो ब्रह्म अस्थान से ज़ाहिर हुआ, और जिसकी चेतन्यता से तीन लोक की रचना क़ायम है ॥

इसी तौर से सुरत शब्द का अभ्यासी तत्त और परम तत्त को प्राप्त होकर, अपने जीव का सच्चा कल्यान यानी पूरा कारज कर सक्ता है ॥

९—यहां यह बात बयान करना जरूर है, कि जब कि सुरत शब्द मारगी अपने अभ्यास के बल से सुरत चेतन्य को जब चाहे शब्द चेतन्य की धार से मिला कर ऊपर को चढ़ा सकता है, और उस वक़्त तन मन और इन्द्री किसी क़दर या बिल्कुल उसके क़ाबू में आ सक्ते हैं, तो उसको इख़्तियार हासिल हो जावेगा, कि जब चाहे जिस क़दर ताक़त मुनासिब जाने उनको देकर काम लेवे, या किसी वक़्त बिलकुल उनसे काम न लेवे ॥

१०—पर इसके साथ यह भी जरूर होगा कि वह बाहर और अंतर गहरा सतसंग करके अपने मन और इन्द्रियों को कोई दिन सतगुरु या साध का संग करके अच्छी तरह गढ़त करावे, कि उनमे कोई वासना इस लोक और परलोक के भोगों की बाक़ी न रहे, तब काम पूरा होगा। और यह बात आहिस्ता २ सतसंग और अभ्यास करके दुरुस्त बन आवेगी, जल्दी का काम नहीं है, क्योंकि जो मन और इन्द्रियों की गढ़त और सफ़ाई नहीं होगी, तो वे आकाश के परे नहीं चढ़ सकेंगे, और अभ्यास में हमेशा अनेक तरह की तरंगें उठा कर ख़लल डालते रहेंगे ॥

बचन ३२

मन का प्रबल (ज़बर) झुकाव संसार की तरफ़ और उसकी तरंगों के रोकने की जुगत।

१-मन का स्वाभाविक झुकाव इन्द्रियों के द्वारे संसार और उसके भोग बिलास की तरफ़ है, और जिस क़दर माया के पदार्थ और सामान तरह २ के हैं, और हमेशा नये २ क़िस्म के मौजूद होते जाते हैं, वह भी सब इन्द्रियों को और उनके साथ मन की धार को अपनी तरफ़ खैंचते हैं-इस सबब से मन और इन्द्रियां हमेशा चंचल रहती हैं ॥

२-जब कि आदमी पैदा होता है, उस वक़्त से बराबर माया के पदार्थ और अपने प्यारे और रिश्तेदार लोग नज़र में आते हैं, और संसारी बातें सुनने और समझने का दिन २ अभ्यास बढ़ता जाता है, और इन्द्रियों के भोगों का रस मिलता जाता है, और उन्हीं की चाह जैसे कि उमर और समझ बढ़ती जाती है, आदमी के मन में पैदा होती जाती है, और उसके पूरा करने के वास्ते जतन सीखता है और करता है, और संसार ही के ख़्यालात दिल में भरते जाते हैं, और नये २ भी पैदा होते जाते हैं ॥

३-इस तौर से सब आदमी संसार ही के कारोबार में अटके रहते हैं, और उसके सामान की प्राप्ती के लिये अनेक तरह के जतन और मेहनत करते हैं, और जब वह सामान हासिल होता है तब अपनी मिहनत की कामयाबी पर ख़ुश होकर अपने तईं बड़ा आदमी और भागवान समझते हैं, और हिर्स और तृष्णा बढ़ाकर आइन्दा को ज़्यादा जतन और मिहनत करने को तैयार होते है ॥

ख़ुलासा यह कि दुनिया ही के कामों में अपना कुल्ल वक़्त ख़र्च करते है, और मन और इन्द्रियों के भोगों की चाह और उसके पूरा करने के फ़िकर में उमर भर खो देते है, और कुटुम्ब और परिवार में आशक्त हो कर उनके राज़ी और ख़ुश करने के वास्ते हमेशा मिहनत करते रहते है ॥

४-इस तरह पर सब जीवों के ख़याल स्वाभाविक संसारी हो जाते है, और उनका मन हमेशा दुनिया के कारोबार के या धन और नामवरी प्राप्त करने के वास्ते तरंगें उठाया करता है, और दूसरों की भलाई और बुराई बिना पूरी तहक़ीक़ात के किया करता है, और अपनी कसरों पर नज़र नहीं डालता है ॥

५-इनमें से जो कोई जीव इत्तिफ़ाक़ से संतों के

सतसंग में आ जाता है, और मत का निरनय सुन कर और भेद समझकर अभ्यास करने पर तैयार होता है, तो उसको पिछले स्वभाव और संसारी करनी के सबब से अपने मन और चित्त को नाम और रूप और शब्द को धुन के साथ जोड़ने में शुरू में किसी क़दर दिक़्क़त पड़ती है, और बारम्बार दुनिया और उसके भोगों के ख़्याल गुनावन रूप होकर अभ्यास के वक़्त सताते हैं, और भजन और ध्यान का रस जैसा चाहिये नहीं लेने देते ॥

६–इसके सिवाय जिन लोगों ने कि थोड़ी बहुत विद्या पढ़ी है, और अनेक तरह के ख़्यालात पिछले वक़्त के विद्यावालों के उनके मन और बुद्धी में भरे हुए हैं, उनको तरह २ की गुनावन विद्या और बुद्धी की वक़्त सतसंग और अभ्यास के उठती रहती हैं, और संतों के बचन का पूरा पूरा निश्चय नहीं आने देती हैं ॥

७–इन सब विघनों के दूर करने के वास्ते राधास्वामी दयाल ने दया करके यह जुगत बताई है, कि जहां तक मुमकिन होवे कुछ वक़्त अपना भजन ध्यान और सुमिरन और सतसंग और संतों की बानी के पाठ में ख़र्च करें, और जहां तक बन सके अपने मन

को दुनिया के फ़ज़ूल ख़्यालों से बचाकर घट में रोकें, तब आहिस्ता २ मन निश्चल और चित्त निरमल होवेगा. और अपने अंतर में कुछ कुछ रस और आनंद पावेगा, और यही अभ्यास जारी रखने से हालत दिन दिन बदलती जावेगी, और अन्तर में रस और आनंद बढ़ता जावेगा, और तब ससार के भोगों की चाह आहिस्ता २ घटती जावेगी ॥

८–मालूम होवे कि मन से एक वक्त में एकही काम हो सक्ता है–यानी एकही धार ताक़तवाली मन से एक वक्त में उठकर काररवाई कर सकती है, चाहे वह काम परमार्थी करे और चाहे दुनिया का ॥

दुनिया के काम की धार का मुख इंद्रियों की तरफ़ यानी नीचे को है, और परमार्थी काम की धार का मुख जो संतमत के मुवाफ़िक़ उठती है ऊंचे की तरफ़ होता है ॥

९–संसारी परमार्थ की धार (जैसे कि और मतों में परमार्थी काम किये जाते हैं) इन्द्रियों के वसीले या तो बाहर की तरफ़ जारी होती है, या अंतर में नीचे की तरफ़ हिरदे या नाफ के अस्थान की तरफ़ जारी होती है ॥

संतमत के मुवाफ़िक़ यह धार जो बाहरमुख है

दुनिया के साथ मेल रखती है, और जो अन्दर पिंड के हृदय या नाफ़ की तरफ़ जारी होती है, वह भी जो उसका सिलसिला ऊंचे के अस्थान से मस्तक में नहीं लगा हुआ है, तो संतमत के मुवाफ़िक़ बाहर-मुख समझी जाती है, और उसमें सिवाय थोड़ी बहुत मन और इन्द्रियों की सफ़ाई के कोई फ़ायदा सुरत और मन की चढ़ाई का हासिल नहीं होता है ॥

१०–संत कहते हैं कि जब तक सुरत और मन अपना अस्थान जो पिंड मे है आहिस्ता २ छोड़कर ऊंचे देश यानी ब्रह्मांड में न चढ़ेंगे, तब तक पक्की और सच्ची सफ़ाई और अंतर का सच्चा रस और आनन्द प्राप्त नहीं होगा, और संसारी बासना और तृष्णा का मैल जो मन और सुरत पर चढ़ा हुआ है कभी नहीं उतरेगा–इस वास्ते सब जीवों को मुनासिब है कि संतमत के अनुसार भेद समझकर और सुरत शब्द योग की जुगत लेकर, अपने मन और सुरत को आहिस्ता २ ब्रह्मांड की तरफ़ चढ़ाने का अभ्यास शुरू करें, तो मन का झुकाव संसार की तरफ़ दिन २ कम होता जावेगा, और अंतर में शब्द का रस पाकर ब्रह्मांड की तरफ़ चढ़ता जावेगा, और तब सच्चा बैराग संसार से और सच्चा अनुराग सच्चे मालिक के चरनों में उसको हासिल होता जावेगा ॥

११-इस वास्ते कहा जाता है कि जो कोई सचौटी के साथ अपने मन और इन्द्रियों को संसार के भोगों की तरफ़ से हटाना चाहता है. और सच्चे मालिक के चरनों में प्रेम के साथ अपने सुरत और मन को जोड़ना चाहता है, उसको चाहिये कि हमेशा अपने मन और उसकी तरंगों की चौकीदारी करे, यानी नज़र करता रहे कि वह क्या २ तरंग उठाता है-जो तरंगें संसारी फ़ज़ूल हैं उनको रोके. और जो परमार्थी तरंग उठे उसको बढ़ावे और ताक़त देवे ॥

१२-संसारी तरंगों का रोकना इस तरह पर हो सकता है कि जब इस क़िस्म की हिलोर मन में उठती हुई मालूम पड़े, उसी वक़्त मन और सुरत की तवज्जह को ऊपर की तरफ़ जैसा कि भेद अस्थानों का संत मत के मुवाफ़िक़ समझा गया है, पहले अस्थान पर नाम के आसरे, चाहे स्वरूप के आसरे, और चाहे शब्द के आसरे लगावे, और उसी जगह पर जमा देवे-फ़ौरन उस धार का मुख जो इन्द्रियों की तरफ़ जाने वाली थी ऊपर की तरफ़ मुड़ जावेगा, और वह संसारी तरंग हट जावेगी, या मिट जावेगी, और अंतर में थोड़ा बहुत ऊंचे देश का रस मिलेगा ॥

१३-नाम के सुमिरन का रस, और स्वरूप के ध्यान

का रस, जो ऊंचे अस्थान पर आंखों के ऊपर किया जावे, और शब्द का रस जो पहले अस्थान सहसदल-कंवल, या दूसरे अस्थान त्रिकुटी की धुन सुनकर प्राप्त होवे, इस क़दर ताक़त रखता है कि मन की धार को अपनी तरफ़ थोड़ा बहुत खींचकर दूसरी तरफ़ से हटा लेगा, और जो ज्यादा रस मिलेगा तो वह धार उसी तरफ़ को रवां होकर उस अस्थान पर ठहर जावेगी और थोड़ी देर खूब रस देवेगी, और जो तवज्जह किसी क़दर कम रही तो रस कम आवेगा— फिर भी दूसरी, यानी इन्द्रियों और नीचे की तरफ़, उस धार की चाल बंद हो जावेगी, या कम हो जावेगी, कि उस तरफ़ कुछ काररवाई नहीं कर सकेगी ॥

१४—जब कभी ऐसा इत्तिफ़ाक़ होवे कि अभ्यासी का ज़ोर वास्ते मोड़ने धार के मुख के काम न देवे, यानी ऊंचे की तरफ़ को नाम या स्वरूप या शब्द के आसरे न चढ़े, और बाहर की तरफ़ को रवां होवे, तो भी इस खैंचातानी में उस धार की ताक़त नीचे की तरफ़ कुछ न कुछ कम हो जावेगी, और जो बिलकुल मोड़ी न गई तो भी उसकी काररवाई नीचे की तरफ़ यानी इन्द्रियों द्वारे किसी क़दर ज़ईफ़ और कमज़ोर या कम हो जावेगी ॥

१५–और जो किसी वक़्त अभ्यासी का बस न चले, और धार ज़ोर के साथ इन्द्रियों की तरफ़ रुजू करे, और ऊपर की तरफ़ तवज्जह नाम या रूप या शब्द में न आवे, तो अभ्यासी को चाहिये कि उस धार की काररवाई के पीछे अपने मन में पछतावे और शरमावे, और चरनों में राधास्वामी दयाल के प्रार्थना करके माफ़ी मांगे, और आइन्दा को होशियारी करे–तो भी उस धार की कारखाई का असर कम हो जावेगा, यानी उस कारखाई का फल बहुत हलका हो जावेगा, और जो आइन्दा को होशियारी जारी रही तो माफ़ी भी हो जावेगी ॥

१६–इसी तरह से परमार्थी का काम आहिस्ता २ बनता जावेगा, यानी भूल चूक उसकी बराबर माफ़ होती जावेगी, इस शर्त पर कि वह अपनी मिहनत और कोशिश वास्ते फेरने धार के मुख के सच्चे मन से जारी रक्खे, और अपने क़सूर पर शरमाता और पछताता रहे, और प्रार्थना करता रहे–तब दिन २ सफ़ाई हासिल होती जावेगी, यानी मन और चित्त निरमल और निश्चल होते जावेंगे, और एक दिन माया के घेर से निकलकर उसकी सुरत संत सतगुरु राधास्वामी दयाल की मेहर से दयाल देश यानी अपने निज घर में पहुंच जावेगी ॥

शब्द ।

सुरतिया मान तजत ।
आज सतसंग में रस पाय ॥ १ ॥
मन का संग कर हुई दिवानी ।
भोगन में लिपटाय ॥ २ ॥
जगत बासना नित्त बढावत ।
दुक्ख सहत फिर फिर पछताय ॥ ३ ॥
करम धरम संग हुई बावरी ।
देवी देव पुजाय ॥ ४ ॥
तीरथ बरत जगत ब्योहारा ।
नित्त करे सिर करम चढ़ाय ॥ ५ ॥
संतन की बानी नहीं पढ़ती ।
मोह जाल में रही फसाय ॥ ६ ॥
भाग जगा गुरु सन्मुख आई ।
निज घर का उन भेद सुनाय ॥ ७ ॥
जग का झूठा खेल पसारा ।
बहु बिध गुरु ने दिया समझाय ॥ ८ ॥
समझ बूझ सतसंग में लागी ।
मान बड़ाई तज दई आय ॥ ९ ॥
गुरु से प्रीत करत अब सांची ।
सुरत सब्द की कार कमाय ॥ १० ॥

घट में निरख बिलास नवीना ।
गुरु चरनन परतीत बढाय ॥ ११ ॥
चरन सरन राधास्वामी हिये धर ।
लोना अपना काज बनाय ॥ १२ ॥

बचन ३३

सच्चे और पूरे गुरू की पाहिचान जल्द नहीं हो सकती इस वास्ते पाहिले उनके साथ साधभाव का बरताव करे और सतसंग और अभ्यास करे जावे तब कोई दिन में कुछ कुछ परख आती जावेगी ।

१-संत मत और संतों की बानी में सतगुरु की महिमा बहुत से बहुत सुनाई और कही गई है-और संत सतगुरु नाम उन्हीं सत्तपुरुषों का है कि जो सत्तलोक और राधास्वामी पद में पहुंचे, और सत्त पुरुष और राधास्वामी के स्वरूप से जिनकी एकता हुई । उनकी महिमा जिस क़दर करी जावे वह कम से कम है ॥

२-ऐसे सतगुरु दुर्लभ है और जो किसी को मिल भी जावें तो पहिचान नहीं आती-क्योंकि संसारी

और दुनियादार जीवों की ताक़त नहीं है कि सच्चे और पूरे महात्माओं की पहिचान कर सकें॥

इस दुनिया में इस कदर गुरुओं की भीड़ भाड़ और कसरत है, और वे सब धन और मान के चाहने वाले हैं, कि उनमें से सच्चे और पूरे गुरू की छांट और पहिचान करना बहुत मुश्किल है॥

३—जो कोई पोथियां पढ़कर, और उनमें से लक्षण महात्माओं के समझकर, अपनी विद्या और बुद्धी से सच्चों की जांच करना चाहे, तो हरगिज नहीं कर सकता। पाखंडी और झूठे गुरू बाहर का रूप थोड़ी देर के वास्ते बनाकर चाहे धोखा देवें, पर जो पूरे और सच्चे हैं, वे कोई रूप या स्वांग नहीं बनाते, और जीवों के मुवाफ़िक़ साधारण रहनी उनकी होती है॥

जो कोई करामात या शक्ती उनकी देखना चाहे तो हरगिज़ बचन करके, या और तरह भी, कोई ताक़त अपनी नहीं दिखाते, और न वे चाह धन और मान की जीवों से रखते हैं, फिर उनकी पहिचान कठिन है॥

४—झूठे परमार्थी यानी स्वार्थी जीव कुछ शक्ती और कला और करामात देखकर यक़ीन और बिस्वास लाना चाहते हैं—पर ऐसे जीवों को करामात या कला दिखाने का हुक्म नहीं है, क्योंकि जो उनको कोई

शक्ती दिखाई भी जावे, तो वे संसारी और दुनिया के मतलब, यानी औलाद और धन और तन्दुरुस्ती के मांगने के सिवाय और कुछ नहीं चाहेंगे, यानी वे परमार्थ की कोई चाह नही रखते, और जो किसी के कहने सुनने से परमार्थ की चाह भी जाहिर करेंगे, तो ऐसी मांग मांगेंगे कि एकही दिन में या बहुत जल्दी उनको अंतर में कुछ कला या शक्ती या मालिक का दर्शन या रोशनी नज़र आवे, तब यक़ीन और प्रतीत लावेंगे, नहीं तो सच्चे परमार्थ को झूठा, और सच्चे सतसंग को धोखे की जगह, और सच्चे परमार्थियों को जो प्रीत और प्रतीत करते है नादान और मूरख और खुशामदी और स्वार्थी समझकर उन का निरादर करेंगे, और अपने मन में उनको ओछे और तुच्छ समझवाले जानकर उनके संग से नफ़रत करेंगे ॥

फिर इन जीवों को सच्चे सतसंग में लगाने की मौज नहीं है, क्योंकि वे सतसंग मे बिघ्न डालते है, और उनके संग से सच्चे परमार्थियों का किसी क़दर अकाज होता है ॥

५–जो सच्चे परमार्थी जीव हैं उनको संत सतगुरु या साध गुरू जरूर मदद देते हैं, और जो वे उनका बचन मानकर सतसंग और अंतर अभ्यास बराबर

करे जावेंगे, तो ऐसे जीवों को थोड़ी बहुत पहिचान भी पूरे गुरू की आहिस्ता २ आती जावेगी, पर जब तक कि अंतर में सफ़ाई अच्छी तरह न होवेगी, और सच्चे मालिक का सच्चा प्रेम थोड़ा बहुत मन में नहीं आवेगा, तब तक यह पहिचान पक्की नहीं होवेगी, और न हर वक्त क़ायम (ठहराऊ) रहेगी ॥

६–अंतर की सफ़ाई से मतलब यह है कि मन में चाह संसार के भोग बिलास की और उसकी तृष्णा बाक़ी न रहे ॥

जरूरी और वाजिबी चाह वास्ते अपने और अपने कुटुम्ब के पालन और पोषन के औसत यानी मध्य के दरजे पर सच्चे परमार्थ की प्राप्ती में इस क़दर बिघ्न नहीं डालती है, पर अनेक तरह की चाहों का मन में भरा रहना, और नित्त उनका बढ़ाना और उन्हीं के पूरा करने के निमित्त जतन और मेहनत करते रहना, मन को मैला करता है–और ऐसे मन में सच्ची प्रीत और प्रतीत का सच्चे मालिक और सच्चे गुरू के चरनों में ठहरना, और उनकी दया की परख और पहिचान का आना मुश्किल है ॥

७–जिस किसी के मन में सच्ची चाह भी सच्चे मालिक से मिलने की पैदा हुई है, और वह अपनी

वड़ भागता यानी सच्चे मालिक की मेहर और दया से संतों के सच्चे सतसंग में भी आगया, तो भी कुछ अरसे में वह चाह मज़बूत और पक्की होवेगी, और संसार की वासना जो जन्म जन्म से मन में भरी चली आती है आहिस्ता २ कम होकर दूर होवेगी— यानी जिस क़दर वह बचन सतसंग में समझ २ कर सुनेगा, और अंतर मे अभ्यास करेगा और रस मिलता जावेगा, उसी क़दर संसार का भाव और प्यार उसके मन में घटता जावेगा, और सच्चे मालिक और सच्चे गुरू के चरनों में उसी क़दर प्रीत और प्रतीत बढ़ती जावेगी । लेकिन यह काम जल्दी का नहीं है, आहिस्ता २ मन की हालत बदलेगी, और निरमल समझ उसकी बुद्धी में धसती जावेगी, और उसके मुवाफ़िक़ रहनी भी सम्हलती जावेगी ॥

८—इस वास्ते हर एक परमार्थी को मुनासिब है कि पहिले कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के धाम का भेद और उनके मत का निरनय करके, यानी उस की ऊंचाई और गहिराई की समझ लेकर, और उनके अभ्यास सुरत शब्द मारग की महिमा और बड़ाई अच्छी तरह समझकर, सतसंग और अभ्यास शुरू करे, और सच्चे मालिक और सर्व समरत्थ राधास्वामी दयाल

का इष्ट बांधकर, यानी उनके चरनों का निश्चय धारन करके, जिस क़दर हो सके प्रीत और प्रतीत जगाता और बढ़ाता रहे, और उनके बचन के मुवाफ़िक़ अंतर सुख सुरत शब्द मारग का अभ्यास करता रहे, तो उसके अंतर में आहिस्ता २ अनुभव जागेगा, और सब परमार्थी बातों और कामों का हाल और उनका फायदा अंतर के अभ्यास से उसको आप नजर आता जावेगा ॥

९—पहिले इसी क़दर काफ़ी होगा कि सच्चा परमार्थी शख़्स अपने मन में राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक और उनके अभ्यास सुरत शब्द जोग की प्रतीत करके काम शुरू करे, और बाहर से सतसंग शब्द भेदी और शब्द अभ्यासी गुरू या उनके सत संगी का, और जो किसी का भी संग हर रोज न मिले तो संत सतगुरु की बानी का समझ २ कर थोड़ा बहुत पाठ रोजमर्रा, और अंतर में अभ्यास सुरत शब्द का करता रहे—कोई दिन में उसको हाल सचाई और बड़ाई अपने उपदेशक और सच्चे मारग सुरत शब्द का मालूम होता जावेगा, और अंतर में राधास्वामी दयाल की दया से परचे भी मिलते जावेंगे, कि उससे थोड़ी बहुत पहिचान सच्चे गुरू की होती जावेगी।

इसी तरह कमाई करते २ प्रेम भी जागेगा, और प्रतीत भी बढ़ती जावेगी, और गुरू की क़दर और शब्द की ताक़त भी मालूम होती जावेगी, और राधास्वामी दयाल की दया की परख अपने अंतर में और उनकी रक्षा और सम्हाल की अंतर और बाहर ख़बर पड़ती जावेगी ॥

१०-जिस क़दर ऊपर लिखी हुई हालत पैदा होती जावे, उसी क़दर प्रीत गुरू के चरनों में बढ़ाता जावे, और उनके दर्शन और सेवा और सतसंग से फ़ायदा उठाता जावे, पर जब तक अंतर में परचे न मिलें और अभ्यास का रस और आनन्द न आवे, और थोड़ा २ बढ़ता न जावे, और दया और रक्षा परख में न आवे, तब तक राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक के चरनों में, जो घट २ मे अंग संग हर एक अभ्यासी के मौजूद है, प्रीत और प्रतीत धरकर उनकी दया और मेहर के आसरे अभ्यास करे जावे, और गुरू यानी अपने उपदेशक को अपने से बड़ा और अपना हितकारी समझकर, जब २ मौक़ा होवे या जब जब बन सके उनका सतसंग करता रहे, और अपने संसय और भरम और बिपरजै उनकी मदद से दूर करता रहे, और राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत और प्रतीत बढ़ाता रहे ॥

११–संसारी और संसारी गुरू निन्द्या से डरते रहते हैं कि कहीं उनके सेवक उनसे फिर न जावें, और आइन्दा को सेवकों की तायदाद बढ़ाने में कसर न पड़े, पर सच्चे और पूरे गुरू जान बूझकर अपनी निंद्या कराते है, कि जिससे संसारी जीव उनके सतसंग में न आवें, और सिर्फ़ सच्चे परमार्थी, जो कि उस निंद्या को सच्चे परमार्थ का सबूत समझकर जियादा शौक़ के साथ लगेंगे, उनके सतसंग में शामिल होवें॥

१२–सच्चे गुरू यह अभिलाषा नहीं रखते है कि हमारे सतसंग मे भीड़ भाड होवे, और नाम मशहूर होवे–बल्कि वे यह चाहते हैं कि चाहे थोड़े जीव आवें पर सच्चे परमार्थी होवें–और बसबब निंद्या के आ़म जीव आपही उनके सतसंग से दूर रहते है, और संसार की निंद्या के डर से उनके पास आने से डरते हैं॥

१३–सच्चे परमार्थी को मुनासिब है कि ख़ूब समझ समझकर, और अपने मन में निरनय और जांच करके, जो जो बचन सुने उनकी प्रतीत करता जावे, और जिस क़दर अपने अंतर में कैफ़ियत देखे और रस लेवे उसके मुवाफ़िक़ प्रीत बढाता जावे। दूसरों के कहने और सुनने से जिस क़दर प्रीत और प्रतीत आवेगी उसका पूरा भरोसा नहीं हो सकता है, क्योंकि

तकलीफ़ और निंदकों के जोर के वक्त ऐसी प्रीत और प्रतीत जल्द डिगमिग हो जावेगी और निश्चय क़ायम नहीं रहेगा ॥

१४—मन का स्वभाव है कि जरासी तकलीफ़ या संसार के पदार्थ की हान में, या कोई उलटा सीधा बचन परमार्थ के विरोधियों का सुनकर जल्द कच्चा होकर अपने निश्चय से डिग जाता है, और गुरू की तरफ़ अनेक तरह के भरम उठाता है। इस वास्ते मुनासिब है कि जब तक पूरा २ निश्चय उनकी तरफ़ न आवे, तब तक उनके साथ साध भाव यानी जैसा कि अपने से बढ़कर साधना करने वाले के साथ बरता जाता है बरताव करे, और संत सतगुरु का भाव न लावे—यह भाव राधास्वामी दयाल के चरनों में जो कुल्ल मालिक है (और वह सब नाम यानी संत सतगुरु और गुरू उन्हीं के हैं) बढाता और पकाता रहे, और उन्ही को कुल्ल का करता और धरता मानता रहे, और हर दम उनकी दया और मेहर मांगता रहे। वे अपनी कृपा से ऐसे सच्चे अभ्यासी की हालत आप दिन २ बदलते जावेंगे, और जिस क़दर उसको उन के चरनों में और गुरु और साध के संग प्रेम सहित बरताव करना चाहिये कराते जावेंगे, और आहिस्ता

आहिस्ता उसके अंतर की दृष्टी खोलते जावेंगे, याना अनुभव जगाकर समझ बूझ बढ़ाते जावेंगे, तब राधास्वामी दयाल और गुरू की गत की पूरी २ समझ उसको आप आती जावेगी, और उस वक़्त में जैसा भाव चाहिये वैसा राधास्वामी दयाल और गुरू के साथ सच्चे तौर पर वर्त सकेगा ॥

वचन ३४

जीवों पर सच्चे मालिक की दया का हाल और बर्णन उनकी ग़फ़लत और बेपरवाही का उसकी तरफ़ से और मुनासिब और लाज़िम होना हर एक जीव पर उस दया की परख करके उससे संत सतगुरु के वचन के मुवाफ़िक़ कमाई करके अपने सच्चे उद्धार का फ़ायदा हासिल करना ।

१-सच्चे मालिक ने अपनी दया से जीव के गुजारे के लिये इस लोक में उसको अनेक औज़ार बख़्शे हैं, कि जिनके वसीले से वह अपनी रोटी और इंद्रियों के भोग का सामान पैदा करके रस और आनन्द

ले सके जैसे दसों इन्द्रियां और चार अंत'कर्ण ॥

२-इन्द्रियों की दो क़िस्म है-एक ज्ञान इन्द्री जैसे आंख, कान, नाक, ज़बान और तुचा यानी छूने वाली ताक़त बदन की चमड़ी मे-और दूसरी करम इन्द्री जैसे हाथ, पांव, जबान, पेशाब और पाख़ना की इन्द्री-और चार अंतःकर्ण मन, चित्त, बुद्धि, अहंकार है ॥

३-इन चौदह औजारों के वसीले से आदमी अनेक तरह के नये २ काम करता है, और नई २ चीजें और विद्या की पोथियां बनाता है, और मिहनत और मज़दूरी और हुनर के काम और लिखना पढ़ना और बन्दोबस्त दुनिया का करता है, और इस तौर से धन पैदा करके अपने खाने पीने और पहरने और रस और स्वाद की चीज़ों का भोग करने का बन्दोबस्त करता है ॥

४-अब ख़्याल करो कि जिस मालिक ने यह सब औज़ार और समझ और ताक़त उन औज़ारों (जंत्रों) के काम में लाने को बख़्शी है, किस क़दर इस आदमी को उसकी शुकरगुज़ारी (धन्यवाद) और सेवा जान और दिल से करना चाहिये ॥

५-वह सच्चा मालिक कुल्ल दयाल और दातार है, और सब जीवों पर चाहे वे समझें या न समझें और

उसकी दया और दात का शुकराना करें या न करें बराबर दया कर रहा है, और सब तरह से उनकी सम्हाल और रक्षा जैसे २ जब २ मुनासिब होती है करता है ॥

६–सिवाय औज़ारों के तन में उस सच्चे मालिक ने बाहर से भी बहुत सामान आदमी और जानदारों के आराम के लिये जैसे सूरज और चांद और पानी और हवा और अगनी और रोशनी और बिजली वग़ैरह पैदा किये हैं ॥

७–इस सब दया और दात के एवज में वह सच्चा दाता और दयाल मालिक, कि जो सब का सच्चा माता और पिता है, कोई ख़िदमत या सेवा या शुकरगुजारी का काम या उस शुकरगुज़ारी का इज़हार और बर्णन जीवों से नहीं चाहता है, और न इन बातों की उसको परवाह है ॥

८–पर उन जीवों पर जिनको उस मालिक ने बुद्धी की ताक़त निरनय और भेद करने वाली, और नफ़ा और नुकसान की परख करने वाली, और रचना और उसके सामान को देख कर उसके बनाने और पैदा करनेवाले की पहिचान करनेवाली, बख़्शी है फ़र्ज़ (उचित) और लाज़िम (करतव्य) है, कि वे दरियाफ़्त करें

कि उनके जीव यानी रूह का असली मुकाम कहां है, और वहां कैसा आनन्द और सुख है, और इस देश में जहां कि वह तन मन और इन्द्रियों के साथ संसार में बंध गई है और उस देश के सुखों में क्या फ़र्क़ है, और उनके सच्चे पिता और माता कुल्ल मालिक का कैसा स्वरूप और धाम हैं, और उस मालिक से मिलने मे क्या फायदा और दूरी में क्या नुक़सान है, और वह दूरी किस तरह दूर हो सक्ती है, यानी वह रास्ता किस तरकीब और किस सवारी से तै करके (चलकर) सुरत यानी रूह अपने निज घर में पहुंच सक्ती है ॥

९—और हरचन्द (जो कि) वह सच्चा मालिक जीवों की शुकरगुजारी और खिदमत और सेवा का मोहताज (आधीन) नहीं है, पर जीवों को मुनासिब है कि अपने नफ़े और फ़ायदे के वास्ते जरूर शुकरगुज़ारी उसकी दया और दात की हमेशा और हर दम करते रहें। जो वे ऐसा करेंगे तो उनके मन में उस सच्चे मालिक का प्यार और भाव क़ायम होगा और बढ़ता जावेगा, और उसके सबब से अंतर में शान्ती और एक तरह की खुशी पैदा होगी कि जो उनकी सुरत यानी रूह को ताक़त देती रहेगी ॥

१०—देखो दुनिया में जो एक आदमी दूसरे आदमी से किसी तरह का सलूक करता है, या तकलीफ़ के वक़्त में उसकी मदद और ग़मख़्वारी (सहायता) करता है, या जरूरत के वक़्त में धन देता है, तो वह शख़्स किस क़दर उसका इहसानमंद होता है, और तहेदिल से यानी अपने अंतर के अंतर से उसको दुआ देता है, और जिस क़दर उससे बन सके उसकी सेवा और उसके लड़कों या प्यारों की सेवा करने को तैयार रहता है, और जब मौक़ा पाता है तब फ़ौरन सेवा करके थोड़ा बहुत उस इहसान का एवज़ाना (बदला) करके अपने मन में बहुत खुश होता है ॥

११—जो कि सुरत यानी सब जीव उस सच्चे मालिक की अंस है, और इन में यह स्वभाव और चाल जारी है कि एक दूसरे की तकलीफ़ और सख़्ती में मदद करता है, और फिर वह दूसरा उसका इहसान मानकर एवज में प्यार और मुहब्बत और खिदमत (सेवा) करता है, तो उसी स्वभाव और चाल के मुवाफ़िक़ जरूर हर एक आदमी के मन में सच्चे मालिक की दया और दात के एवज़ में उसके चरनों में प्यार और भाव और उसकी सेवा का शौक़ पैदा होना

चाहिये, और उसका जहूर भी अच्छी तरह होना चाहिये-पर आम तौर यह बात नज़र नहीं आती यानी आदमियों मे यह चाल मालिक के शुकरगुज़ारी की कम देखने में आती है ॥

१२-सबब इसका यह है कि पहिले तो वह मालिक किसी को नज़र नहीं आता और न मिलता है, और जहां कहीं वह प्रघट यानी ज़ाहिर होता है, वहां उसकी पहिचान नहीं आती, और जो उसने इस मामले में हुक्म दिया है उस से लोग नावाक़िफ़ है ॥

१३-मालिक ने कहा है कि जहां सच्चे प्रेमी और भक्त जन हैं उनके हृदय में मेरा वासा रहता है, और कहीं जो मुझको कोई ढूंढना और तलाश करना चाहे तो मै नहीं मिलूंगा, पर प्रेमी भक्त के हृदय में बसता हूं, वहां मुझको तलाश करे और जो सेवा और भाव और प्यार करना होवे वहां उस सच्चे प्रेमी भक्त के साथ बरताव करे, तो वह सब सेवा मेरी है, और जिस क़दर भाव और प्यार कोई करेगा वह मेरे साथ भाव और प्यार समझा जावेगा और उसका फल मैं दूंगा ॥

१४-दुनिया में भी इस बात का सबूत प्रत्यक्ष दिखाई देता है कि जो कोई किसी के बालक से प्यार

करे और उसको कुछ खिलावे पिलावे या पहिरावे, तो उस बालक के मा बाप उस शख़्स से बहुत ख़ुश होते हैं, और उसकी सेवा का बदला आप देते हैं—इसी तरह जो कोई दुखी और निर्धन जीवों की (जो कि सच्चे मालिक के बालक हैं) मदद और उपकार करे उस से मालिक राज़ी होता है, और और जीव भी उसकी कारवाई देखकर राज़ी और ख़ुश होते हैं, और जहां तक जिस से बने मदद भी करते हैं, और जो ऐसा काम निष्काम बन आवे तो उसके बदले मे मालिक प्रेम और भक्ती की बख़्शिश करता है, और नहीं तो इस लोक में या परलोक (स्वर्ग) मे सुख देता है। यह तो हाल आम जीवों के साथ उपकार करने का बयान हुआ, और प्रेमी जन जो कि मालिक के निज प्यारे बालक हैं, बल्कि किसी दर्जे में खुद उसी का स्वरूप हैं, उनकी सेवा का फल तो कुछ कहने और लिखने में नहीं आ सकता, मुक्ती का देना तो ऐसी सेवा के बदले में बहुत ज़र्रह सा (किनका मात्र) इनाम है। ऐसी निष्काम सेवा के फल में मालिक का दर्शन और निजधाम का बासा मिलता है॥

१५--और मालिक ने कहा है कि प्रेमी और भक्त जन मेरी आतमा यानी मेरी जान है, उनकी मार्फ़त

जो कोई मुझ से मिलना चाहे मिल सकता है, और उनके वसीले से जो कोई मेरी सेवा करना चाहे वह सेवा मुझको पहुंच सक्ती है-ऐसे पूरे प्रेमी और भक्त जन जो कि सच्चे मालिक सत्त पुरुष राधास्वामी दयाल से मिल रहे हैं वे संत कहलाते हैं, और जो ब्रह्म और पारब्रह्म से मिल रहे है वह साध कहलाते हैं, और जो मिलने का जतन और अभ्यास कर रहे हैं और अभी ब्रह्म पद तक नही पहुंचे वह सतसंगी कहलाते है॥

१६-संत जन तो आपही सच्चे मालिक सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल का स्वरूप हैं. और साध जन ब्रह्म पारब्रह्म का स्वरूप हैं. और सच्चे सतसंगी जो अभ्यास में दर्द और शौक़ के साथ लगे हुए हैं वह सच्चे मालिक के निज प्यारे बाल बच्चे हैं, जो कोई मालिक के निमित्त इनकी सेवा करेगा और इनके साथ भाव और प्यार करेगा उससे कुल्ल मालिक प्रसन्न होवेगा, और मेहरबान होकर भक्ती यानी प्रेमदान देवेगा कि जिस से वह भी एक दिन साध और संत गती हासिल करके सच्चे मालिक के दरबार में दाखिल होकर अजर अमर हो जावेगा, और जनम मरन से रहित होकर परम आनन्द और महासुख को जिसमें कमी व वेशी नही होवेगी प्राप्त होवेगा॥

१७–बाज़े आदमी ख़याल करते हैं कि वह मालिक तो चेतन्य और अरूप है, उसको किसी के नफ़ा और नुक़सान और आराम और तकलीफ़ से कुछ वास्ता नहीं है, और न किसी की प्रार्थना और बिन्ती की वहां ख़बर होती है, और न कोई कारज वह करता है, यानी वह अकरता और निरलेप है, इस वास्ते उसकी कोई सेवा और ख़िदमत नहीं हो सक्ती है ॥

१८–यह ख़याल इन विद्यावान और बुद्धिमान लोगों का ग़लत है। सच्चा मालिक अरूप और अकरता भी है और स्वरूपवान और करता भी है, जो वह आदि में आप रूप नहीं धरता तो रचना में कोई रूप प्रघट नहीं होता ॥

१९–अब ख़याल करो कि आदमी इस लोक की रचना में सब से श्रेष्ठ और उत्तम है, और उसको कुल्ल इख़्तियार और हुकूमत इस लोक में दी गई है, उसका जो रूप है वही रूप या उसका नक़्शा या ख़ाका थोड़ी बहुत कमी के साथ सब जानदारों में जैसे चौपाये और परन्द और कीड़े मकोड़े वग़ैरह मे बराबर नज़र आता है। जब कि नीचे की रचना में इसी आदमी का रूप या उसका नक़्शा या ख़ाका

बराबर चला गया है, तो अब दरियाफ़्त करना चाहिये कि आदमी का रूप कहां से आया, यानी ऊपर के लोकों की रचना में यही रूप बढ़के दर्जे का ज़रूर होगा, और कोई ऐसा अस्थान रचना मे ज़रूर है कि जहां आदि में आकार स्वरूप मालिक का प्रघट हुआ, और फिर उससे नीचे की रचना में उसी का नक़्शा या खाका दरजे बदरजे कमी के साथ बराबर चला आया है ॥

२०–संत सतगुरु जो कुल्ल मालिक का स्वरूप हैं, और तमाम रचना के भेद को जानते हैं, फ़रमाते हैं कि प्रथम रूप रंग और रेखा सत्तलोक में प्रघट हुआ, और वहां से दरजे बदरजे जैसे कि रचना नीचे के अस्थानों में होती आई, उस रूप का भी उसी के साथ उतार होता चला आया ॥

२१–अब विचारना चाहिये कि जहां से आदि ज़हूर स्वरूप का हुआ, वही स्वरूप कुल्ल नीचे की रचना का कर्ता है, और वही प्रेम स्वरूप और दयाल स्वरूप है, और जिस अरूप से कि आद धार आई वह प्रेम और दयालता और कुल्ल स्वरूपों का भंडार है। यही स्वरूप उस अरूप को जो उसका निज रूप और भंडार है लखावेगा, और बग़ैर इस स्वरूप की मदद के कोई उस अरूप भंडार तक नहीं पहुंच सक्ता है ॥

२२-इस वास्ते जो कोई उस अरूप से मिलना चाहे उसको चाहिये, कि पहिले उस आदि स्वरूप की भक्ती करके वहां तक उस रास्ते से कि जो उस स्वरूप ने संत सतगुरु रूप धर कर इस संसार में प्रघट किया है पहुंचे, तब अरूप से मेला होगा, और जो ऐसा नहीं करेगा तो जिस जगह कि जीव की पिंड में बैठक है वहीं बैठा २ चाहे जिस तरह अरूप की महिमा गाया करे और ज़िकर किया करे और निरनय और तह-क़ीक़ात करता रहे, पर जब तक कि उस जुगत की जो कि उस स्वरूप ने आप संत रूप धर कर प्रघट की है कमाई और अभ्यास नहीं करेगा तब तक अपनी ज-गह से नहीं हिलेगा, और इस वास्ते देह का बंधन उसका कभी नहीं काटा जावेगा, और न जनम मरन से रिहाई होवेगी, और न अपने निज घर में यानी सत्तलोक और राधास्वामी पद में दख़ल पावेगा॥

२३-इस सबब से कुल्ल विद्यावान् और बुद्धिवान लोग ख़ाली रह गये, सिर्फ़ बातें विद्या बुद्धि की ब-नाते रहे, और जो कुछ उन्होंने उस मालिक के रूप या अरूप का निरनय किया वह भी सही नहीं हो सकता, और न उनको रचना के भेद की सही ख़बर मिली-इस वास्ते उनके मन और बुद्धि का अंधेरा

और भरम और संदेह बिल्कुल दूर नहीं हुए, और इसी सबब से इन लोगों के बचन में आपस में इत्त-फ़ाक़ नहीं है-कोई कुछ कहता है और कोई कुछ बकता है और दूसरा उसी को रद्द (खंडन) करता है और दूसरी बात बताता है, पर यह सबके सब भूल और भरम में पड़े हुए है और अक़ल से अनुमान करके बातें बनाते है, सुरत यानी रूह की आंख से कुछ देखा नहीं, और संत सतगुरु जो हाल फ़रमाते हैं वह देखे हुए कहते हैं, और उनका बचन एकही है और हमेशा क़ायम है, कोई उसको काट नहीं स-कता और न उसमें कमी बेशी कर सकता है ॥

२४-इस वास्ते सब जीवों को चाहिये कि संत बचन को मानें और मुवाफ़िक़ उनके हुक्म के भक्ती करके और जो जुगत वे बताते है उसकी प्रेम के साथ क-माई करके जो रास्ता कि उन्होंने बताया है, उसी रास्ते होकर पहले सतलोक में पहुंच कर दर्शन सत्त-पुर्ष का करें, और वहां से सत्तपुर्ष की मदद लेकर राधास्वामी पद में जो कुल्ल मालिक और सब का निज भंडार है पहुंचें ॥

२५-बाज़े आदमी कहते हैं कि देहधारी मालिक का स्वरूप कैसे हो सक्ता है, वह तो बेहद्द और

अनंत और अपार है और देहधारी का स्वरूप हद्दार है, यह बात भी निहायत नादानी यानी अनजानताई की है, क्योंकि सब कहते हैं कि मालिक सर्वव्यापक है यानी सब जगह है, तो जो वह सब जगह है तो आदमी में भी जरूर मौजूद है, पर किसी को नजर नहीं आता--जो कोई संतों की जुक्ती की कमाई कर के अपने अंतर में मथन करेगा उसको मालिक का रूप जरूर नजर आना चाहिये, क्योंकि वह आवरनों यानी परदों से ढका हुआ है, जब अभ्यास करके सब आवरन दूर किये जावें तब उस मालिक का जलवह और जमाल नजर आना चाहिये, पर किसी को इस भेद की ख़बर नहीं है, इस सबब से वे अपनी तुच्छ बुद्धी से जो निहायत अनजान है ऐसी उलटी समझ निकालते हैं ॥

२६--उस अपार और अनन्त रूप मालिक का हर जगह और देहधारी स्वरूप में मौजूद होना इस दृष्टान्त से साफ़ तौर पर समझ में आ सकता है--जैसे कि हवा या आकाश हर घर में मौजूद है और उस घर को लम्बाई और चौड़ाई के मुवाफ़िक़ हद्दार मालूम होता है, पर वह क़भी हिस्से और टुकडे नहीं हुआ, बाहर के मंडल से जो निहायत वसीअ है

हमेशा मिला हुआ है, और दरजे बदरजे ऊंचे की तरफ़ लतीफ़ और सूक्ष्म होता चला गया है, और यह हाल उस मकान के दरजे या खनों से जो पांच या सात होवें मालूम हो सक्ता है—सब से ऊपर के दरजे की हवा या आकाश निहायत सूक्ष्म और साफ़ होता है, और हर दरजे की हवा और आकाश बाहर के मंडल के उसी दरजे या तह से मिले हुए हैं, फिर जो जुगत के साथ नीचे के दरजे या खन की हवा मथन करके ऊपर चढ़ाई जावे तो वह बिल्कुल साफ़ और निरमल और सूक्ष्म होकर अपने मंडल के साथ मिल जावेगी—और वहां पर न वह मकान के अंदर मे कही जा सकती है और न बाहर—और कोई हद्द उसकी नही है यानी अंदर और बाहर एक ही है और मुवाफ़िक अपने मंडल के अपार और बेहद्द है, इसी तरह से मालिक सब जगह और सब देहों मे बग़ैर टुकड़े और हिस्से होने के मौजूद है, और जितने दरजे कि उस चैतन्य में कहे जा सक्ते हैं, वह बसबब माया की मिलौनी के हुए हैं और माया भी किसी मुक़ाम पर पैदा हुई है। निरमल चैतन्य देश में जो संतों के सच्चे मालिक का देश है उस माया का नाम और निशान भी नहीं है—

यह सब दरजे देह धारी के स्वरूप में सूक्ष्म रीति से मौजूद हैं, और हर एक दरजे का चैतन्य उसी दरजे के बाहर के चैतन्य मंडल से मिला हुआ है– जो सुरत चेतन्य कि उस निरमल चेतन्य से धार रूप होकर पिंड में उतर कर ठहरी है, उस निरमल चेतन्य देश के बासी और भेदी संत सतगुरु से मिलकर, और रास्ते का भेद और जुगत उसी धार पर सवार होकर लौटने की दरियाफ़्त कर के अभ्यास करे, यानी अपने घट को मथ कर आवरन दूर करती जावे, अथवा उनको छेद कर ऊपर को चढ़ती जावे, तो वह सुरत एक दिन निरमल चेतन्य देश में पहुंच कर उस अपार और अनंत रूप से मिल कर एक हो जावेगी, और देह की हद्द किसी तरह से उसके अपार और अनन्त रूप में हारिज और मानै नहीं होगी। जैसे कि मकान में ऊंचे दरजे या खन की हवा का मेल साथ उसके मंडल के होने में मकान की रोकनेवाली हद्द कोई रोक नहीं कर सक्ती है, ऐसे ही जिस अभ्यासी सुरत का रास्ता नीचे से ऊपर तक घट में इस तौर से खुल गया, वही सुरत उस अरूपी अनन्त और अपार रूप से मिल कर एक हो गई–पर बाहरमुख दृष्टी वालों को हद्द

दार और देह स्वरूप ही दिखलाई देती रहेगी—पर जो भेदी और अभ्यासी हैं वह उसके अपार और अनन्त रूप की पहिचान करके उसके साथ मालिक के मुवाफ़िक़ प्रेमपूर्वक बरतावा करेंगे ॥

२७—मालिक हर एक के घट में ऐसे गुप्त है जैसे फूल में ख़ुशबू और दूध में घी, पर जब तक कि मथन नहीं किया जावेगा फूल में से इत्तर और दूध में से घी नहीं निकलेगा—सो मथन की तरकीब और घट के भेद की किसी को ख़बर नहीं है, और जो उनको जताया जाता है तो दुनिया और उसके सामान और मन और इन्द्रियों के भोगों की आशक्ती के सबब से नहीं मानते है, और हंसी और ठठोली या और वाद विवाद करके सच्ची बात को उड़ा देते है, और अपनी अभाग्यता को दूर नहीं कराना चाहते, बल्कि और उसी को बढ़ाते चले जाते है, और इस सबब से जनम मरन के चक्कर से नहीं बच सक्के, और बारम्बार देह धर कर दुख सुख ऊंचे नीचे देश और जोनों में भोगते रहते हैं ॥

२८—अब समझना चाहिये कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का धाम ऊंचे से ऊंचे देश में है, और वही सब का मरकज (केन्द्र) यानी मध्य है, और आप अनन्त और अपार रूप है—वहीं से आदि में

धार प्रघट हुई और नीचे का तरफ़ ठेके २ पर ठहरती हुई और रचना करती हुई चली आई—जो कोई उस धार का भेद जैसा कि संत सतगुरु ने फ़रमाया है लेकर और उसी धार को पकड़ कर ठेके २ यानी मंज़िल २ पर होता हुआ चढ कर चलेगा, वही एक दिन उस निज धाम में पहुंच कर अजर अमर हो जावेगा और परम आनन्द को प्राप्त होगा ॥

२९—यह सच है कि वह धाम और वह अरूप चैतन्य और प्रेम का भंडार किसी की सेवा का मुहताज नहीं है, पर जो जीव उस कुल्ल मालिक की दया और दात का बिचार करेगा उसके मन मे ज़रूर अभिलाषा दर्शन और सेवा करने की पैदा होगी, और प्रेम और भाव उस मालिक के चरनों में जागेगा—फिर उस प्रेम और भाव के प्रघट करने और उस सेवा की अभिलाषा पूरा करने के वास्ते उसी अरूप मालिक का स्वरूपवान रूप संत सतगुरु रूप धार कर जगत में प्रघट हुआ, और अपने सच्चे प्रेमी और भक्तों की अभिलाषा देह रूप धर पूरी करी, और फिर अपनी मेहर और दया दिन दिन उन पर ज़्यादा से ज़्यादा करके, और भेद अपने निज धाम और उसके रास्ते का देकर, और उस आदि धार की डोरी पकड़ा के, और चलने की जुगत का अभ्यास

कराके, उनको अपने संग निज घर में पहुंचा कर परम आनन्द को प्राप्त कर दिया ॥

३०—सिवाय उस जुगत के जो कि ऊपर लिखी गई और कोई तरकीब या रास्ता निज धाम में पहुंचने का नहीं है, क्योंकि वह सच्चा मालिक आप प्रेम का भंडार है, और जीव यानी सुरत भी प्रेम स्वरूप है, पर इसका प्रेम उलटा होकर संसार और उसके भोगों की चाह में लग गया जिसको मोह और माया का जाल कहते हैं । इस वास्ते जब तक कि प्रेम अंग लेकर जीव उस आदि धार को जोकि प्रेम की धार है पकड़ कर नहीं चलेगा, तब तक रास्ता नहीं तै होगा, और यह प्रेम इस देह और इस लोक में सेवा और भाव सहित संत सतगुरु और साधगुरू और सच्चे प्रेमी सतसंगियों के संग से पैदा होगा, और सुरत शब्द योग की कमाई से जिसको प्रेमयोग कहना चाहिये, वह प्रेम दिन २ बढ़ता जावेगा, और एक दिन निज घर में पहुंचा कर छोडेगा, और जिस क़दर उस तरफ़ सुरत की चाल चलती जावेगी दुनिया और उसके सामान का मोह आप ही दिन २ कम होता जावेगा। जो कोई बडभागी जीव हैं वे इस वचन को मानेंगे और उससे पूरा २ फ़ायदा उठावेंगे, यानी अपना सच्चा और पूरा उद्धार संत

सतगुरु राधास्वामी दयाल की मेहर से करावेंगे, और जिनका भाग जागनहार नहीं है वे इस बचन को नहीं मानेंगे, और इस वास्ते माया और काल की रचना में पड़े रहेंगे, और देह और संसार के दुख सुख और बारम्बार जनम मरन की तकलीफ़ सहते रहेंगे ॥

बचन ३५

बर्णन हाल सच्चे परमार्थी जीवों का और दरजे उनकी प्रीत और प्रतीत के सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल और सच्चे गुरू के चरनों में और यह कि कैसे यह प्रीत और प्रतीत दिन २ बढ़ती जावे ।

१—सच्चा परमार्थी वह है कि जिसके मन में सच्चे मालिक से मिलने और अपने जीव का सच्चा और पूरा कल्यान करने की चाह ज़बर है, और संसार के पदार्थ और भोगों की चाह थोडी और ज़रूरत के मुवाफ़िक़ है, और फिर उनमें भी उसके मन का बंधन बहुत कम है, और धन संतान और कुटुम्ब परिवार में भी बहुत आशक्ती और गिरफ़ारी नहीं है ॥

२—ऐसे परमार्थी जीवों के मन में थोडी बहुत तड़प और बेकला लगी रहती है कि कैसे और कब सच्चे मालिक का दीदार मिलेगा, और जो उसका

भेद और रास्ता बतानेवाले हैं यानी संत सतगुरु अथवा साधगुरू कैसे जल्दी से मिलें कि रास्ता चलने का काम जल्दी से जारी होजावे ॥

३–ऐसे परमार्थी जीवों को जो कोई सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल की महिमा सुनावे, और उनके धाम का भेद और उनके मिलने की जुगत लखावे, तो वे निहायत इहसानमन्द और मगन हो जाते हैं, और उसका संग ज्यादा से ज्यादा करना चाहते हैं, और जो जुगत वास्ते हासिल होने इस मतलब के बताई जावे उसको बहुत शौक़ के साथ करने को तैयार होते हैं ॥

४–ऐसे सच्चे परमार्थियों को जो भेद और हाल रास्ते का और महिमा सच्चे मालिक की सुनाई जावे, उसको दिल और जान से सुनते है, और उसमें कोई तर्क बेजा नहीं उठाते, और न सच्चे मालिक की मौजूदगी मे कोई शक लाते है, बल्कि रचना और कुदरत का कारख़ाना देख कर उनके मन में पहले ही से यह यक़ीन होता है कि ज़रूर इस रचना का कोई सच्चा करतार है, और वह सर्व समरत्थ और सर्व ज्ञानी और अपनी शक्ती के साथ सब जगह मौजूद है ॥

५–ऐसे सच्चे मालिक का भेद और उनके दर्शनों के प्राप्ती की जुगत सुन कर निहायत खुशी उनके दिल में पैदा होती है, और हर तरह से उसके मिलने के वास्ते तन मन धन लगाने को अपनी बड़ भागता समझते हैं ॥

६–ऐसे जीव जिस वक़्त कि अपने घट में अभ्यास (मुवाफ़िक़ उस जुक्ती के जोकि संत सतगुरु बतलावें) शुरू करते है, तो उनको जल्द परचा भी मिलता है, यानी मन उनका शब्द की धुन सुन कर और स्वरूप का ध्यान करके फ़ौरन थोड़ा बहुत निश्चल हो जाता है, और आनन्द पाता है, और दिन २ उनका शौक़ बढ़ता जाता है ॥

७–ऐसे अभ्यासी जीव सतगुरु के संग में उनके दर्शन और बचन के रस में रसीले और मगन होते जाते हैं, और अन्तर अभ्यास में भजन और ध्यान का रस और आनन्द लेते हैं, और दिन २ उनके मन में प्रीत और प्रतीत सच्चे मालिक और गुरू के चरनों में बढ़ती जाती है, और उमंग और प्रेम के साथ तन मन धन से अन्तर और बाहर सेवा करते हैं, और जगत का भय और भाव और लज्या छोड़ कर और भरम और संशय को दूर हटा कर भक्ती की चाल

और रीत में बेखटके बर्ताव करते हैं, बल्कि अपने प्रेम की उमंग में नई २ रीति आप निकालते हैं, और दुनियादारों की निन्दा और अस्तुती का ख़्याल नहीं करते, क्योंकि यह उन लोगों को परमार्थ के हाल और चाल से बिल्कुल बेख़बर और नादान देखते हैं। यह जीव उत्तम परमार्थी कहलाते है॥

८–जो जीव कि मध्यम परमार्थी है उनके मन में अपने जीव के कल्यान की चाह भी मजबूत होती है, पर संसार की सम्हाल और दुनियादारों के नाराज न करने का ख़्याल भी बराबर रहता है, और धन सन्तान और जक्त के पदार्थों में भाव और आशक्ती वनिस्बत उत्तम परमार्थियों के ज़्यादा होती है। यह लोग ऐसा चाहते है कि परमार्थ सहज २ हासिल होता जावे, और दुनिया का भी नुक़सान किसी तरह या उस में बदनामी भी न होवे, पर सच्चे प्रेमियों की हालत और चाल सतसंग में देख कर थोडी बहुत उनके साथ मुवाफ़क़त करके उसकी पैरवी जिस क़दर बन सके करते है, और आहिस्ता २ उनको भी थोड़ा बहुत भजन और ध्यान का रस अभ्यास के समय अन्तर में मिलता जाता है, और कभी २ मालिक की दया का परचा भी देखते हैं। इस तरह सच्चे प्रेमियों की मदद और संत सतगुरु की दया से

उनकी भी प्रीत और प्रतीत सच्चे मालिक और गुरु के चरनों में आहिस्ता २ बढ़ती और पकती जाती है। यह जीव भक्ति और प्रेम की रीति में जैसा चाहिये जल्दी बरताव नहीं कर सकते, पर आहिस्ता २ थोड़ा २ सच्चे प्रेमियों के साथ उनका भी बरताव उसी मुवाफ़िक़ होता जाता है॥

९—मध्यम परमार्थी जीवों के मन में जल्दी प्रतीत सच्चे मालिक और सच्चे परमार्थ की जैसा कि चाहिये नहीं आती है, और सबब उसका यह है कि इनका झुकाव संसार और उसके परमार्थी और स्वार्थी ब्यौहार और चाल ढाल की तरफ़ ज़्यादा रहता है, और पूरा खोज और तहक़ीक़ात परमार्थ की करने में यह लोग किसी क़दर ढीले रहते हैं, और तवज्जह उनको दुनिया के कामों में ज़्यादा बटी हुई रहती है, पर परमार्थ की भी ज़रूरत का इनके मन में थोड़ा बहुत यक़ीन रहता है, और उसके हासिल करने में थोड़ी बहुत कोशिश बराबर जारी रखते हैं॥

१०—तीसरे दरजे के जीव निकृष्ट परमार्थी कहलाते हैं। इनके मन में दुनिया और उसके भोगों की चाह ज़बर रहती है, और परमार्थ में कहने सुनने और कुछ देखा देखी और दबाव के सबब से शामिल

होते हैं। सच्चे मालिक की महिमा और सच्चे परमार्थ की बड़ाई जैसा चाहिये इनके मन में नहीं समाती है, पर दूसरों के आसरे यानी सच्चे परमार्थियों की चाल ढाल देखकर और उनके बचन सुनकर यह भी थोड़ा बहुत उनके मुवाफ़िक़ बरताव करने लगते हैं, लेकिन जब कुछ निंद्या या बुराई की बात सुनें, तब फ़ौरन परमार्थ के छोड़ने को तैयार होते हैं, और दुनियादारों के डर से परमार्थ की महिमा और ज़रूरत का ख़्याल उनके मन से फ़ौरन जाता रहता है॥

११–ऐसे जीवों की सच्ची प्रीत और प्रतीत सच्चे मालिक और गुरू के चरनों में नहीं आती है, पर जब तक उनके दुनिया के कारोबार उनके मन के मुवाफ़िक़ जारी रहें, और कोई उलटे बचन सुनकर उन पर दबाव न डाले, तब तक परमार्थ में थोड़े बहुत लगे रहते हैं, पर जब कोई दुनिया के कामों में नुक़सान आया या तन्दुरुस्ती में ख़लल पैदा हुआ या कोई मतलब उनका मुवाफ़िक़ उनकी चाह के पूरा नहीं हुआ, या उनके कुटुम्बी और बिरादरी ने ज़ोर डाला, उस वक़्त सच्चे परमार्थ और सच्चे गुरू और मालिक के चरनों में अभाव आ जाता है और काररवाई उसकी बन्द कर देते हैं, यानी अभ्यास

भी छोड़ देते है और जो थोड़ा करे भी जावें तो अभाव के सबब से उनको उसमें रस नहीं आता है, और इस वास्ते आहिस्ता २ कम करते जाते हैं और प्रीत और प्रतीत में बड़ा ख़लल पड़ जाता है ॥

१२–ऐसी हालत में जो कोई दुनिया के बड़े आदमी का (जो सतसंग में शामिल है) सहारा मिल जावे, तो अलबत्ता इन जीवों को बहुत मदद हो जाती है, और उनकी भक्ती और अभ्यास थोड़ा बहुत जारी रहता है। इन जीवों का काम संत सतगुरु और सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल अपनी मेहर और दया से आहिस्ता २ बनाते जाते हैं, और किसी न किसी तरह का सहारा वक़्त २ पर देकर भक्ती में उनका निरबाह कराते हैं, और जब कुछ अंतर में रस और आनंद इन जीवों को मिलने लगता है, और परमार्थ के बचन सतसंग में सुनकर समझ बढती जाती है, तब यह लोग भी भक्ती में मज़बूत होते जाते हैं, और आहिस्ता २ दरजा उनका बढ़ता जाता है ॥

१३–चौथे दरजे के जीव निपट संसारी और भोगी कहलाते हैं–इनके मन में सिवाय दुनिया के भोग बिलास और धन और मान बड़ाई के हासिल करने के और चाह ज़बर नहीं है। यह हमेशा परमार्थ की

हंसी उड़ाते हैं और परमार्थियों को नादान समझकर उनके चाल ढाल की निंद्या करते रहते हैं। इनको मालिक का यक़ीन या ख़ौफ़ या प्यार बिलकुल नहीं होता है, अलबत्ता अपने संसारी फ़ायदा और नामवरी के वास्ते चाहे जिसको (जब २ ऐसा मौक़ा आन पड़े) पूजने लगते है, और तन और धन भी ख़र्च करते है, पर निरमल परमार्थी काम इन से बिलकुल नहीं बन सकता है, और न परमार्थ के उपदेश करनेवालों या परमार्थ की कमाई करनेवालों पर भाव और प्यार आ सकता है—इस वास्ते यह जीव सच्चे मालिक के प्रेम और भक्ती से हमेशा ख़ारिज रहते हैं। इस वास्ते सच्चे परमार्थी जीवों को चाहिये कि वे चाहे जिस दरजे के होवें (यानी उत्तम-मध्यम-या निकृष्ट) ऐसे जीवों के संग और सुहबत और सलाह से जिस क़दर बन सके हमेशा अपना बचाव रक्खें, क्योंकि वे आप सच्ची भक्ती नहीं करते, और दूसरों को जो सच्ची भक्ती करते हैं, उनके काम और इष्ट से हटाने में बड़ी कोशिश करते हैं ॥

१४–संत सतगुरु दया करके फ़रमाते हैं, कि कुल्ल जीवों को मुनासिब और कर्तव्य है, कि अपने जीव के फ़ायदे के वास्ते सच्चे परमार्थी या साधगुरू या

संत सतगुरु का खोज करते रहें, और जहां कहीं सच्चे परमार्थ की रीति जारी होवे, यानी सच्चे मालिक सतपुरुष राधास्वामी दयाल की भक्ति का उपदेश दिया जाता होवे, और भेद रास्ते का और जुगत उस पर चलने की सुरत शब्द अभ्यास के साथ बताई जाती होवे, वहां जाकर जरूर शामिल होवें, और कोई दिन सतसंग करके महिमा सच्चे मालिक और सच्ची भक्ती और सच्चे मारग और अभ्यास की ख़ूब ग़ौर करके सुनें और समझें और दुनिया के हाल और कारोबार को अच्छी तरह से देखें और विचार करें कि कोई चीज़ यहां ठहराऊ नहीं है, और यह देश सुरत यानी रूह के रहने का नहीं है, उसका निज घर-माया की हद्द के पार है, और वही निर्मल चेतन्य देश सच्चे मालिक का धाम है ॥

जो इस तरह बरताव करेंगे तो आहिस्ता २ उनके मन में सच्चे मालिक और उसके सच्चे धाम की थोड़ी बहुत प्रतीत और शौक़ उसके मिलने का पैदा होगा, और जिस क़दर सच्चे गुरू और सच्चे प्रेमियों का सङ्ग होता जावेगा उसी क़दर यह प्रीत और प्रतीत बढ़ती जावेगी ॥

१५-जब यह प्रीत और प्रतीत किसी क़दर मज़बूत

हो जावे, तब मुनासिब है कि मारग के भेद और उस पर चलने की जुगत का उपदेश लेकर थोड़ा बहुत अभ्यास अन्तर में शुरू करे, तब जिस क़दर मन और सुरत स्वरूप के ध्यान और शब्द के सुनने मे शौक़ के साथ लगेंगे उसी क़दर अन्तर में रस और आनन्द मिलता जावेगा, और दिन २ मन निश्चल और चित्त निर्मल होना जावेगा, और उमङ्ग के साथ प्रेम गुरू और मालिक के चरनों में पैदा होता जावेगा, और चरनों की प्रतीत गहरी और मजबूत होती जावेगी ॥

१६–अब मालूम होवे कि जिस क़दर मन में संसार के भोगों की चाह ज़बर होगी उसी क़दर संसारी तरङ्गें हर वक़्त उठती रहेंगी, और मन को चंचल और मलीन करती रहेंगी–फिर ऐसे मन में मालिक का भाव और प्यार नहीं ठहर सकता–इस वास्ते कुल परमार्थी जीवों को मुनासिब है कि जो वे अपने सच्चे मालिक के चरनों का नित्य आनन्द और रस लेना चाहते हैं, तो दुनिया के भोग और बिलास की चाह कम करते जावें, और फ़ज़ूल कामों और भोगों में अपना बरताव घटाते जावें, तो आहिस्ता २ एक दिन सफ़ाई हो जावेगी और चरनों का प्रेम पैदा होकर बढ़ता जावेगा ॥

१७-दुनियादार लोगों को भी मुनासिब है कि जो सतसंग सच्चे गुरू और सच्चे परमार्थियों का न कर सकें, तो उनके साथ प्यार और भाव रखें और जब कभी मौक़ा होवे तिथि त्यौहार और कार्य व्यौहार के दिन दर्शन और कुछ सेवा करते रहें, तो उनके जीव का भी थोड़ा बहुत गुज़ारा और चौरासी के चक्कर से बचाव हो जावेगा ॥

१८-जो कोई चरनों में प्रीत और प्रतीत पैदा करना और फिर उसको बढ़ाना चाहे तो उसके वास्ते मुख्य उपाय यह हैं:-

(१) सतसंग में शामिल होकर बचन चित्त से सुनना और ग़ौर के साथ समझना ॥

(२) राधास्वामी दयाल की सर्ब समरत्थता और दयालता के बचन सुनकर यक़ीन करना और यह कि सिवाय सुरत शब्द मारग के दूसरा सीधा और आसान और पूरा रास्ता सच्चे और पूरे उद्धार के हासिल करने के लिये नहीं है ॥

(३) सुरत शब्द मारग की ऐसी महिमा समझ कर उसके अभ्यास की जुगत दरियाफ़्त करके कार-रवाई शुरू करना ॥

(४) मन और इन्द्रियों को थोड़ा बहुत रोककर

स्वरूप के ध्यान और अन्तर शब्द के श्रवण में तवज्जह के साथ अभ्यास करना ॥

(५) सच्चे प्रेमियों से प्रीत भाव के साथ बरताव करके उनके संग से फ़ायदा उठाना और जो भक्ती की रीत में वे बरताव करें उनका संग देना यानी आप भी थोड़ा बहुत उसके मुवाफ़िक़ बरतना ॥

(६) राधास्वामी दयाल की बानी का समझ २ कर और उसके अर्थ अपने ऊपर घटाकर थोड़ा बहुत हर रोज पाठ करना ॥

(७) सतसंग के वक़्त सतगुरु के दर्शन दृष्टी जमा कर करना और अपने मन और सुरत को ऊंचे मुक़ाम पर ठहराकर बचन सुनना और फिर उनका मनन और विचार करके जो २ बचन अपने वास्ते मुनासिब और मुफ़ीद मालूम होवें उनके मुवाफ़िक़ काररवाई करना ॥

(८) तन मन धन से अपने प्रेम और उमंग के मुवाफ़िक़ (जो अंतर और बाहर थोड़ा बहुत रस और आनंद पाकर पैदा होवे) संत सतगुरु या साध गुरू और प्रेमी जन और शब्द अभ्यासी साधुओं की सेवा करना ॥

(९) पिछले और हाल के यानी अपने वक़्त के गुरु

भक्तों की चाल को सुनकर और देखकर उसके मुवाफ़िक़ जिस क़दर मुनासिब और फ़ायदेमन्द मालूम होवे पैरवी करना ॥

(१०) अंतर में कई बार दिन रात में थोड़ी२ देर चित्त को चरनों में जोड़कर चरन रस लेना और इस अभ्यास को आहिस्ता २ बढ़ाते जाना ॥

(११) नित्त सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल की दया और मेहर और सतगुरु की मदद और मेहरबानी का गुन गाते और शुकराना करते रहना ॥

(१२) जगत के परमार्थ की चाल और कर्म धर्म में जग जीवों का बरताव देखकर उसको बमुक़ाबले अंतरमुख ऊंचे और गहरे और सच्चे परमार्थ राधास्वामी मत के ओछा और पोच समझकर उस से बचे रहना और अपने भागों को सराहना और किसी से हुज्जत और तकरार बेफ़ायदा न करना और न किसी पर तान मारना ॥

(१३) अपने मन और इन्द्रियों की चाल को निरखते चलना और फ़ज़ूल तरंगों और चाड़ों को हटाते रहना ॥

(१४) सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की दया को अंतर और बाहर परखते चलना और चरनों में प्रीत प्रतीत बढ़ाते रहना ॥

(१५) अपनी नालायक़ी और निर्बलता की जांच करके सर्व अंग करके राधास्वामी दयाल की सरन दृढ करना और बेफायदा घबराहट छोड़कर धीरज के साथ दुरुस्ती से अभ्यास में लगे रहना ॥

(१६) सतसंग और अभ्यास के समय दूसरे ख़्यालों को जिस क़दर बन सके मन में न आने देना और जो ऐसे ख्याल पैदा होवें तो सुमिरन और ध्यान के बल से हटाते रहना ॥

(१७) जिस संग और सुहबत और तमाशे से मन मे चंचलता और मलीनता यानी भोगों की चाह पैदा होवे ऐसे संग और तमाशे वग़ैरह से हमेशा जहां तक बन सके बचते रहना ॥

(१८) जब कोई संशय या भरम या निरासता मन मे जाहिर होवे उसको फ़ौरन अपने सतसंग की समझ के मुवाफ़िक़ बिचार करके या सतगुरु या प्रेमी सत-संगी के सामने बयान करके, या बानो में से उसी क़िस्म के बचन निकालकर ग़ौर के साथ पाठ करके जिस क़दर जल्दी बन सके उसको दूर करना कि जिस मे प्रीत और प्रतीत और अभ्यास मे बिघन न पडे ॥

(१९) किसी सतसंगी की चाल ढाल नामुनासिब

देखकर या सतसङ्ग की कोई रीत अपनी समझ के मुवाफ़िक़ फ़ज़ूल जानकर सतगुरु और सतसङ्ग में अभाव न लाना क्योंकि सतसङ्ग बेड़ा है, और इसमें हर क़िस्म के जीव शुद्ध और मैले शामिल होवेंगे और जो सच्चे होकर लगेंगे उनकी चाल आहिस्ता आहिस्ता बदलती जावेगी ॥

परमार्थी को अपने काम बनाने का मतलब नज़र में रखना चाहिये और औरों के काम में दख़ल देना अपना अकाज करना है ॥

(२०) जिन सतसङ्गियों पर अपना भाव होवे उन से मेल करना मुनासिब है, और जिनकी चाल अपनी तबीयत के मुवाफ़िक़ न होवे उनसे मेल करना ज़रूर नहीं है, और किसी से ईर्षा या विरोध चित्त में नहीं लाना चाहिये और न किसी पर तान का बचन लगाना चाहिये, क्योंकि इसमें अपने प्रेम और भक्ती में बेफ़ायदा बिघन डालना होता है और ऐसे शख़्स अकसर सतसङ्ग और अभ्यास से दूर पड़ जाते हैं ॥

(२१) जहां तक बन सके और जहां अपना किसी तरह का तअल्लुक़ न होवे वहां किसी का ऐब या बुराई देखकर उसका दूसरे से ज़िकर करना, या अपने मन में उसका ख़्याल रखना नहीं चाहिये,

क्योंकि ऐसी कारवाई से उस ऐब या बुराई का असर और नुक़सान ऐब देखनेवाले के मन में पैदा होगा और इस में बेमतलब उसका अकाज होता है ॥

(२२) शील और क्षमा को जहां तक बन सके हर जगह और हमेशा काम में लाना चाहिये, यानी सख़्ती और तकलीफ़ और कड़ुवे बचन और तान को बरदाश्त करनी चाहिये, और जल्दी भड़क कर झगड़ा और बखेड़ा पैदा करने और बढ़ाने की आदत छोड़ना चाहिये, यह आदत संसारियों की है कि अपना अहंकार और मान बड़ाई का ख्याल करके जल्दी लड़ने को तैयार हो जाते हैं, पर परमार्थी को दीनता और ग़रीबी के साथ बरताव करना चाहिये जो और कोई जगह इसका ख्याल कम रहे, तो सतसंग में ज़रूर लिहाज इस बात का रखना चाहिये कि किसी सतसंगी से झगड़ा और बखेड़ा पैदा न होवे ॥

(२३) संत सतगुरु से रूठना या नाराज़ होना नहीं चाहिये इस में प्रेम अङ्ग को बड़ा झकोला लगता है जो वे कभी बचन ताड़ना या समझौती का कहें उसको चित्त देकर सुनना और उसके मुवाफ़िक़ जहां तक बन सके कारवाई करना चाहिये ॥

(२४) जो कोई सतसंगी किसी दूसरे सतसंगी की बुराई या निंद्या करे तो उसको नहीं सुनना चाहिये, और उसको समझाना चाहिये कि यह आदत निहायत नाक़िस है, बल्कि संसारियों में भी यह आदत बहुत बुरी समझी जाती है, क्योंकि जो कोई एक की बुराई और निंद्या करता है वह इसी तरह सब की बुराई और निंद्या करता फिरेगा, और अपना भारी अकाज करता है कि उसके मन में सच्चे मालिक और गुरू का प्रेम कभी नहीं ठहरेगा और दूसरे के प्रेम और भक्ती को भी गदला करता है। परमार्थी को मुनासिब है कि हमेशा सब के गुन देखता रहे और औगुन दृष्टी न लावे और जो किसी सतसंगी में कोई औगुन नज़र पड़े, तो उसको एकान्त में प्यार से समझा देवे और जो वह उस औगुन को न छोड़े तो सतगुरु से इत्तला करे, वे जैसा मुनासिब समझेंगे काररवाई करेंगे पर इसको चाहिये कि फिर उसका ख्याल अपने मन में न रक्खे॥

मत देख पराये औगुन।
क्यों पाप बढ़ावे दिन दिन॥
मक्खी सम मत कर भिन भिन।
नहिं खावे चोट तू छिन छिन॥

देखा कर सब के तू गुन ।
सुख मिले बहुत तोहि पुन पुन ॥

१९-यह सब बातें जो ऊपर लिखी गईं प्रेम के जगाने वाली और बढ़ाने वाली है और हर एक परमार्थी को मुनासिब है, कि जहां तक बन सके उनके मुवाफ़िक़ कारखाई करे। राधास्वामी बड़े दयाल हैं भूल चूक हमेशा माफ़ करते है पर जीव को चाहिये कि अपनी हालत और भूल चूक को निहारता चले और जब २ कोई कसर पड़े तब २ अपने मन में पछतावे और शरमावे और माफ़ी मांगे ॥

२०-जो लोग कि भजन और ध्यान में रस न मिलने की शिकायत करते है उनको चाहिये कि अपने मन और इन्द्रियों की हालत की परख करते रहें, और जो कसर अभ्यास में उनकी तरफ़ से मालूम पड़े उसके दूर करने मे राधास्वामी दयाल की दया का बल लेकर कोशिश करते रहें। जिस क़दर सफ़ाई मन और इन्द्रियों की होगी और जिस क़दर प्रेम या उमंग या बिरह अंग लेकर वे अभ्यास में लगेंगे, उसी क़दर रस मिलता जावेगा, बेफायदा घबराहट और जल्दी करना मुनासिब नहीं है यह काम आहिस्ता २ करने का है और आहिस्ता २ सफ़ाई होगी और अंतर में रस और आनंद मिलता जावेगा ॥

बचन ३६

धरम और करम का बयान।

१–धरम मतलब उन क़ायदे और दस्तूर से है, कि जिनके मुवाफ़िक़ हरएक आदमी को करम और करतूत परमार्थ की करना चाहिये, और अपने चाल चलन और बर्ताव को दुरुस्ती से सम्हालना चाहिये ॥

२–करम मतलब उस करतूत से है कि जो मन और इन्द्रियों से ज़ाहिर में बने, चाहे वह परमार्थी होवे या संसारी और शुभ होवे या अशुभ ॥

३–यहां परमार्थी धरम और करम का जिकर किया जाता है ॥

जो कोई सच्चा परमार्थी है और सच्चा परमार्थ कमाना चाहता है उसको मुनासिब है कि सच्चे धरम और करम के मुवाफ़िक़ अपना बरताव करे ॥

४–सच्चा धरम यह है कि अपने सच्चे मालिक और माता पिता का भेद और पता दरियाफ़्त करके उसकी भक्ती करे, यानी सच्चे और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत और प्रतीत करे, और उनके धाम में पहुंचने और उनके दर्शन करने की जुगत संत सतगुरु से हासिल करके नित्त उसका अभ्यास करे, और अपने अभ्यास का फल

देखता जावे कि उसके मन और सुरत आहिस्ता आहिस्ता पिंड देश से थोड़े बहुत न्यारे होकर ऊंचे की तरफ़ यानी अपने सच्चे और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के धाम की तरफ़ घट में चढ़ते और चलते जाते हैं ॥

५–सच्चा करम यह है कि जिस करतूत से मन और सुरत की अलहदगी पिंड देश से और चढ़ाई पिंड और ब्रह्माण्ड के पार संतों के देश की तरफ़ आसान होती जावे और जिससे दिन दिन इस काम में मदद मिलती जावे ॥

६–और वह सच्चा करम यह है:–

(१) कि निच्त संत सतगुरु या साध गुरू या प्रेमी अभ्यासी जन का या संत सतगुरु की बानी और बचन का चित्त और तवज्जह और शौक़ के साथ सतसंग किया जावे ॥

(२) और तन मन और धन से जिस क़दर अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ बन सके सत सतगुरु या साध गुरू या प्रेमी जन की सेवा उमंग और भाव के साथ की जावे ॥

(३) और सच्चे नाम का मनसे सुमिरन और सच्चे नामी के स्वरूप का प्रेम और भाव के साथ जिस

रीत से कि संत सतगुरु बतावें अपने घट में ध्यान किया जावे ॥

(४) और सच्चे भूखे और प्यासे और नंगे को बग़ैर ख़्याल ज़ात और क़ौम और किसी वास्ता के अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ जिस क़दर बन सके अपने सच्चे मालिक और सच्चे माता पिता राधास्वामी दयाल के नाम पर अन्न दान और जल दान और बस्तर दान दिया जावे, और उस में अपनी नामवरी का ख्याल बिलकुल न होवे, और न मंगता से किसी क़िस्म की सेवा या खिदमत की उसके एवज में चाह और आस रक्खी जावे ॥

७—इस तरह पर सच्चे परमार्थी को अपना धरम और करम सम्हालना चाहिये, और व्यौहार में दया भाव और सचौटी के संग जिस क़दर मुमकिन और मुनासिब होवे जीवों के साथ बरताव करना चाहिये, और अपना चाल चलन भी इसी तौर पर दुरुस्त करना चाहिये, कि मन से और बचन से और काया यानी करम से जहां तक हो सके अपने निज मतलब के वास्ते या मन रञ्जन के लिये किसी जीवधारी को दुख और कलेश न पहुंचे, बल्कि जहां तक मुमकिन होवे सुख और ख़ुशी पहुंचावे, और जो ऐसा न कर सके तो दुख भी न पहुंचावे ॥

८—जो तफ़सील करम की ऊपर लिखी गई है इसी को संतमत के मुवाफ़िक़ शुभ करम समझना चाहिये और जो करनी इसके बरख़िलाफ़ है, यानी सच्चे मालिक का खोज और उसकी भक्ती न करना, और उसके दरशनों की चाह का न होना, और न उसके निमित्त जतन करना, और न संत सतगुरु और प्रेमी जन की तलाश और उनका संग करना, और न सच्चे ग़रीब और मुहताज की अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ मदद करना वग़ैरह २, यही अशुभ करम है, और इसका फल यह मिलेगा कि सच्चे मालिक से दिन २ दूर होकर जनम मरन के साथ चौरासी जोन और नरकों में दुख सुख भोगना पड़ेगा ॥

९—और मतों में जो धरम और करम बर्णन किये हैं. उनका मतलब सच्चे मालिक की प्राप्ती का नहीं है, जो धरम या कायदे वहां मुकर्रर किये गये हैं, और जो शुभ करम सुख के फल की आसा करके वहां कराये जाते हैं, जिस किसी से वे दुरुस्ती से बन आवें तो उनका फ़ायदा यह होगा, कि इस लोक में या ऊंचे नीचे लोक या जोन में किसी क़दर सुख मिलेगा, पर जनम मरन का चक्कर दूर नहीं होगा, और न सच्चे मालिक का दर्शन और उसके धाम में बिश्राम मिलेगा ॥

१०–फिर जब कि धरम और करम के बरताव में सब जगह थोड़ा या बहुत तन मन धन जरूर ख़र्च करना पड़ेगा, तो हर एक सच्चे परमार्थी को चाहे मर्द होवे या औरत मुनासिब और लाजिम है कि जहां तक हो सके संतों के बचन के मुवाफ़िक़ अपने धरम और करम की सम्हाल करे, तो उसका बहुत जल्द जनम मरन से छुटकारा होना मुमकिन है, नहीं तो हमेशा माया के घेर में यानी काल देश में ऊंची नीची जोनों में दुख सुख सहता रहेगा ॥

११–जो कोई संतों के बचन के मुवाफ़िक़ कारवाई करेगा उसको (सिवाय इसके कि एक दिन उसको सच्ची मुक्ती प्राप्त होगी, और अजर अमर देश में आप अमर होकर सदा परम आनंद को प्राप्त होगा) एक बड़ा फ़ायदा यह हासिल होगा, कि दिन दिन उसको थोड़ा बहुत रस और आनंद सतसंग और अभ्यास का मिलता जावेगा, और सच्चे मालिक की दया उस पर दिन २ बढ़ती जावेगी, और उसके साथ रस और आनंद भी बढ़ता जावेगा, और संतों के मत के मुवाफ़िक़ धरम और करम यानी भक्ती और प्रेम और अभ्यास और अंतर और बाहर सेवा करने की ताक़त भी बढ़ती जावेगी,

और एक दिन सच्चा उद्धार और जनम मरन से हमेशा को बचाव हो जावेगा ॥

बचन ३७

मन और इच्छा का बयान ।

१-पिंडी मन और इच्छा ब्रह्मांडी मन और माया की (जिनको ब्रह्म और माया और शिव शक्ति कहते हैं) अंस है, इनका असली रुख़ बाहर और नीचे की तरफ़ है, और जिस मसाले के यह बने हुए हैं, वह भी तीसरे दर्जे यानी ब्रह्मांड के नीचे के आकाश का मसाला है, यह मसाला भी ब्रह्मांड के मसाले की निस्बत बहुत अस्थूल है, यानी अस्थूल माया की मिलौनी उस में ज़्यादा है और उसके मुख का भी नीचे और बाहर को तरफ़ झुकाव ज़्यादा है, यानी माया के पदार्थों के साथ उसका मेल है, और उन्हीं से यह पिंडी मन और उसके औज़ार इन्द्रियां और देह अपना आहार और ताक़त लेते हैं ॥

२-जब कि इस मन का यह हाल है, तब ज़ाहिर है कि इसका असली झुकाव इन्द्रियों के वसीले से भोगों की तरफ़ बहुत है, पर उस में चेतन्य शक्ती जिस से वह काम दे रहा है सुरत की धार की है ॥

३-पहले इस मन में इच्छा उठती है, यानी एक क़िस्म की हिलोर पैदा होती है, और जिस क़िस्म की वह इच्छा है यानी जिस इन्द्री के भोग की चाह है, उसी इन्द्री की तरफ़ पहले मन में हिलोर उठकर और फिर धार पैदा होकर रवां होती है, और जो भोग का पदार्थ सन्मुख है तो उसका वह इन्द्री भोग करती है, और जो भोग का पदार्थ मौजूद नहीं है, तो उसकी प्राप्ती के लिये जो जतन दरकार है, उस जतन में कारज करने वाली इन्द्री के द्वारे लग जाती है ॥

४-सुरत की शक्ती की धार सिर्फ़ मन तक आती है, और उस चेतन्य को जो मन आकाश में है मदद और ताक़त देती है, फिर वहां से मन आकाश के चेतन्य की धार पैदा होकर इन्द्री द्वार पर आती है, और इन्द्री द्वार से जो इस आकाश के चेतन्य की धार है, उससे मिल कर भोगों और पदार्थों में बाहर जाती है, और इसी तरह मन आकाश से मुवाफ़िक़ इच्छा या चाह के धार पैदा होकर पिंड में इन्द्री द्वार और नीचे की तरफ़ जाती है, और अंग २ को ताक़त देती है ॥

५-अब समझना चाहिये कि जब कि मनाकाश

से धार मुवाफ़िक़ इच्छा के पैदा होकर रवाँ होती है, तो पहले सच्चे परमार्थी को मुनासिब है कि अपनी इच्छा की सम्हाल करे, और यह सम्हाल बिना संत सतगुरु या साधगुरू या सच्चे प्रेमीजन के संग और उपदेश के नहीं हो सक्ती है ॥

संग से मतलब यह है कि संत सतगुरु और साध या प्रेमीजन की रहनी देख कर और उनके संग रह कर उनकी सी रहनी रहना शुरू करे, यानी उनकी चाल के मुवाफ़िक़ यह परमार्थी भी अपनी पहली चाल को बदल कर चलना इख़्तियार करे, तब कोई दिन में असर उनके उपदेश और बचन और रहनी का इसके दिल में पैदा होगा, और तब इस का मन उनकी चाल के साथ ख़ुशी से मुवाफ़िक़त करना शुरू करेगा ॥

६—मालूम होवे कि इच्छा के पैदा होने के तीन सबब हैं—एक संग दूसरा तमाशा और नजारह यानी सैर और देखा भाली और तीसरा जरूरत और एह-तियाज ॥

७—अब इन तीनों सबब का मुफ़स्सिल बयान किया जाता है—

(१) पहिला संग—यह ज़ाहिर है कि जैसा जिस

को संग मिलेगा, यानी जिस क़िस्म के आदमियों के साथ उसका मेल या रहना होगा, उसी क़िस्म की बोल चाल और चाल ढाल और आदत और स्वभाव और मन की चाहें होवेंगी, यानी जिस बात या चीज़ को वे लोग पसन्द करते होंगे या जो काम वे करते होंगे, और जो रीत रहनी और खाने पीने और पहरने ओढ़ने की जारी होगी, तो संग करने वाले की भी वैसी ही आदत और चाह और पसन्द होगी, और उसी सामान की ख़्वाहिशें उसके मन में भरी रहेंगी, और उनके पूरा करने के लिये जो २ जतन वे लोग करते होंगे वह भी करेगा ॥

(२) सैर और देखा भाली–इस से यह मतलब है कि जिस गाँव या क़स्बा या शहर या देश में वह रहता है, या जहां २ सैर और तमाशे को जाता है, और जो २ कारख़ाना और सामान और लोगों की रहनी और समझ बूझ और चाहें और करतूत वह आंख से देखता है, और जिस २ काम और चीज़ की तारीफ़ और बड़ाई सुनता और देखता है, उन्हीं काम और चीज़ों की बड़ाई उसके मन में समाती जाती है, और उन्हीं सामान और असबाब के हासिल करने की चाह पैदा होती है, और उनकी

प्राप्ती के लिये जैसी जैसी करतूत लोगों को करते देखता है, उसी काम करने की ख़्वाहिश बढ़ती जाती है ॥

(३) ज़रूरत और एहतियाज–इस से यह मतलब है कि जिन २ चीज़ों या सामान की जैसे खाने और पीने और पहिरने और ओढ़ने की, या और रोज़-मर्रह के बरताव और गुज़ारे के लिये दुनिया में मुवाफ़िक़ हैसियत (मक़दूर) और रहनी अपने मेल-वालों के ज़रूरत इसको होवेगी, उन चीज़ों और समान की चाह मन में ज़रूर उठेगी, और उनके हासिल करने के वास्ते जो २ जतन या करनी आम तौर पर लोगों को करते देखेगा, उसी मुवाफ़िक़ आप भी चाह उठा कर मिहनत और जतन करेगा ॥

८–इन तीनों ऊपर के लिखे हुए सबब से जो चाह और हालत मन में पैदा होती है, वह इन क़िस्मों में से होगी ॥

(१) स्त्री और पुत्र और धन की चाह और मुहब्बत ॥

(२) मान बड़ाई और हुकूमत की चाह और उस में बंधन ॥

(३) अहंकार अपनी ज़ात पाँत और ख़ानदानी बुज़ुर्गी और धन और हुकूमत और बड़ाई का ॥

(४) तन मन और इन्द्रियों के भोग बिलास और ऐश और आराम की ख़्वाहिश और उसके प्राप्ती के लिये फ़िक्र और मिहनत ॥

९–जो कोई समझवार और बिचारवान आदमी है, वह दुनिया के कारोबार और जीवों की मौत, और भोगों और पदार्थों की नाशमानता, और लोगों की खुद मतलबी के साथ मुहब्बत, और दुक्ख और दर्द में धन और मान बड़ाई और हुकूमत और कुटुम्ब परिवार से कुछ मदद और सहारे के न मिलने का हाल देख कर, जरूर अपने मन में ख्याल करेगा कि जिस क़दर लोग मिहनत और जतन वास्ते पूरा करने अनेक चाहों के जो मन में भरी हुई हैं करते हैं, वे सब कुछ तो बिल्कुल फ़ज़ूल और कुछ जरूरी है, और सच्चा और पूरा सुख का फ़ायदा इन में बहुत कम है, और जब दुख या दर्द पैदा होवे या मौत आ जावे तो उसका फल एक छिन में जाता रहता है, या कुछ अपने मुफ़ीद मतलब नहीं होता है, और कोई २ दुक्ख का जैसे भारी रोग और सोग का कोई जतन और इलाज नहीं है कि जिस्से वे दूर हो जावें, और ऐसी हालत में चाहे सब तरह के सामान सुख के हासिल भी हैं, वे सब के सब फीके और बेकार हो जाते हैं ॥

१०-फिर ऐसे विचारवान के दिल में जरूर तलाश इस बात की पैदा होगी, कि यह जीव कहाँ से आता है और कहां जाता है और वहां दुख पाता है या सुख, और दुख के हटाने और सुख की प्राप्ती के वास्ते कौन जतन मुनासिब है, और किस तरह इस दुनिया में बरताव या गुज़ारा करना चाहिये, कि जिस से दुख कम होवे, और सुख ज़्यादा मिले, और आइन्दा को बाद छोड़ने इस देह के भी सुख मिले और दुख न होवे, और यहां की ज़िन्दगी में जो मिहनत और मशक़्क़त करनी पड़ती है, और अनेक तरह की फ़िकर और चिन्ता घेरे रहती है, उस से थोड़ा बहुत बचाव किस तरह से होवे, और ऐसी कौन सी तदबीर है कि जिस से मौत का दुख कम व्यापे या बिल्कुल न व्यापे॥

११-ऐसे सोच बिचार की हालत में जिस जीव को भाग से संतों का या उनके प्रेमियों का संग मिल जावे, तो उनके बचन चित्त से सुन कर सब संदेह और भरम इसके आहिस्ता २ दूर हो जावें, और अपने सच्चे मालिक और निज घर का पता और भेद और जुगत उसके प्राप्ती को मिल जावे, और दुखों से बचने और परम आनन्द के हासिल

करने का भी जतन इसकी समझ में आजावे, फिर जिस क़दर यह शख़्स उनका तन मन से संग करेगा, और उनके बचन और उपदेश के मुवाफ़िक़ काररवाई करेगा, उसी क़दर दिन २ उसको अपने अंतर में फ़ायदा मालूम होता जावेगा ॥

१२–अब ऐसे शख़्स को मुनासिब और लाज़िम होगा, कि संत सतगुरु और साध और प्रेमी जन का संग करके अपनी पिछली चाल ढाल और रहनी और चाहों को जिस क़दर जल्दी मुमकिन होवे बदलता जावे, और संतों के बचन के मुवाफ़िक़ सच्चे परमार्थियों की रहनी और बरताव इख़्तियार करे। जिस क़दर तन मन और तवज्जह के साथ यह शख़्स संग करेगा, और जिस क़दर ग़ौर और बिचार के साथ प्रेमियों की रहनी और रीत समझ कर उस के मुवाफ़िक़ कारखाई शुरू करेगा, और अपनी पिछली हालत और चाल और स्वभाव और चाहों को निरख परख कर जिस क़दर उन में फ़ज़ूल और नामुनासिब होवें, उनको आहिस्ता आहिस्ता छोड़ता जावेगा, और सच्चे मालिक के मिलने और अपने निज घर में पहुंचने का इरादा मज़बूत करके सचौटी के साथ जो जुगत कि संत बतावें उसके अभ्यास में

लगेगा, उसी कदर उसके मन और इच्छा का रंग बदलता जावेगा, और जो झुकाव उनका दुनिया और उसके भोग विलास और पदार्थों को बड़ा समझ कर बाहर और नीचे की तरफ़ हो रहा है, वह भी बदल कर ऊपर की तरफ़ यानी सच्चे मालिक के धाम और निज घर की तरफ़ आहिस्ता २ बढता जावेगा—और जिस क़दर मन और सुरत की चढाई ऊंचे को घट में होती जावेगी, उसी क़दर मन और इच्छा का ख़मीर यानी मसाला भी निर्मल होता जावेगा, जैसे जिस क़दर नीचे की हवा ऊपर की तरफ़ चढ़ती जाती है, उसी क़दर उसकी कसाफ़त और मलीनता दूर हो कर सीतलता और ताज़गी बढ़ती जाती है, इसी तरह एक दिन उस अभ्यासी की सुरत तन मन और इच्छा और माया के देश से न्यारी होकर, और निर्मल चेतन्य देश में पहुंच कर अपने सच्चे मालिक का दर्शन पावेगी, और अमर अजर होकर परम आनन्द को प्राप्त होगी, और रोग सोग और जनम मरन के दुक्ख से पूरा छुटकारा हो जावेगा ॥

१३—परमार्थी जीवों को अच्छी तरह समझना चाहिये, कि सिवाय संत सतगुरु या उनके प्रेमियों के

संग के जो २ बात ऊपर लिखी है और किसी तरह से हासिल नहीं हो सक्तीं, क्योंकि और मतों में बाहर के करम और धरम का पसारा और बिस्तार बहुत किया है, और सच्चे मालिक और उसके निज धाम का पता और भेद साफ़ २ तौर पर नहीं वर्णन किया है, और न जुगत उसके प्राप्ती की ऐसे आसान तौर पर कि जिस में गृहस्त और बिरक्त और औरत और मर्द सब कोई बिला दिक़्क़त शामिल हो सकें बिल्कुल नहीं बताई है, फिर जीव बिचारे हमेशा डामा डोल रहते है, और भरम और सन्देह उनके बिल्कुल दूर नहीं होते, और न सच्चा सुख और आनंद उनको बाहर की करनी में प्राप्त होता है, और जो किसी मत में अंतर की करनी भी बताई है वह भी पिंड के अंतर की है, चढ़ाई और पिंड के पार जाने की जुगत उस में बिल्कुल नहीं समझाई है, बल्कि उन मतों में चढ़ने और चलने का ज़िकर भी बहुत कम है, फिर जीव से यह मलीन देश जहां कि मलीन माया और इच्छा और मलीन मन दुनिया का काम दे रहे हैं कैसे छूटे और निर्मल चेतन्य देश में कैसे पहुंचे, और जो दुक्ख सुक्ख और अनेक तरह की तकलीफ़े इस मलीन देश में माया की

मिलौनी के सबब से पैदा होते है और सब जीव उन को सह रहे हैं, उनसे कैसे बचाव होवे ॥

१४–इस वास्ते सच्चे परमार्थी जीवों को मुनासिब है, कि संतों की जुगत लेकर अपना काम बनाना शुरू करें, पर इस क़दर ख़ियाल रक्खें कि जितनी बने और जिस क़दर हो सके अपने मन और इच्छा की हालत बदलें, और यह हालत बग़ैर संतों की जुगत के अभ्यास के जिससे यह मलीन देश और मलीन मन और मलीन माया और इच्छा से दिन २ अलहदगी होती जावेगी, किसी सूरत में और किसी तरह से हासिल नहीं हो सक्ती । इस वास्ते चाहिये कि अभ्यास नित्त होशियारी के साथ करें, और अपने मन और इच्छा की हालत परख २ कर संतों के बचन के मुवाफ़िक़ सम्हालते और बदलते जावें, इस काम में सुरत शब्द का अभ्यास उनको मदद देगा, और जो सचौटी के साथ यह अभ्यास शुरू करेंगे, और सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल और उन के सतसंग की सच्चे मन से सरन लेवेंगे, तो राधा-स्वामी दयाल कुल्ल मालिक अन्तर में दया करते जावेंगे और अपनी मेहर और दया से अभ्यासी का काम बनाते जावेंगे, यानी दिन २ उसकी तरक़्क़ी

होती जावेगी, और उसके साथ अन्तर और बाहर और ब्यौहार और बरताव और चाल ढाल में भी सफ़ाई होती जावेगी, और एक दिन सब काम दुरुस्ती के साथ बन जावेगा, यानी सच्चा और पूरा उद्धार हासिल होगा ॥

१५-संसारी लोगों के संग से मन में मलीन इच्छा और तरङ्गें यानी दुनिया के भोग बिलास की चाह पैदा हुई थी, सो संत सतगुरु और उनके प्रेमी जन और उनकी बानी का संग करके इच्छा बदलेगी, और जो कोई अपनी इच्छा के बदलने में थोड़ी बहुत कोशिश नहीं करते जावेंगे, उनको भजन और अभ्यास का भी रस कम आवेगा, और राधास्वामी दयाल के दया की भी परख अंतर में नहीं आवेगी, और न अपने मन के बिकारों की ख़बर पड़ेगी, और न उनके दूर करने का जतन दुरुस्ती से बन पड़ेगा, फिर ऐसे लोगों की संत मत की प्रतीत का भी पूरा २ भरोसा नहीं हो सक्ता और न उनकी राधास्वामी दयाल और गुरू के चरनों में प्रीत बढ़ेगी ॥

बचन ३८

मन की भूल भरम और ग़फ़लत और बे परवाही ।

१-मन में भूल और भरम निहायत दरजे की धसी हुई है-सबब इसका यह है कि अनेक ख़ियाल और अनेक कामों का फ़िकर और अनेक बातों का बन्दोबस्त वाजिबी और जरूरी या फ़ज़ूल इसने अपने सिर पर ले लिया है, और कोई वक़्त ऐसा नहीं होता है कि जो यह मन ख़ाली और चुप्प बैठे ॥

जो किसी वक़्त कोई काम नहीं करता है तो हाल और आइन्दा के दुख सुख के ख़ियालों में लगा रहता है, और अपनी समझ के मुवाफ़िक़ तरह २ की चाहों के पूरा करने की जुगत और जतन सोचता रहता है, या किसी कामों की दुरुस्ती की आसा बांध कर उनके सामान और तैयारी या उनके फल के भोगने के ख़ियाल में अपना वक़्त खोता है, और किसी से प्रीत और किसी से बैर बिरोध और किसी से ख़ौफ़ व ख़तर के झगड़ों में चक्कर खाया करता है, और अपनी पिछली और हाल और आइन्दा की हालत की समझ के मुवाफ़िक़ अपनी तरह २ की

बड़ाई और मान के ख़्याल उठा कर अहंकार बढ़ाता है ॥

२–इन कामों में यह मन हर वक़्त ऐसा लिपटा रहता है कि कभी इसको निचिंताई और फ़ुरसत नहीं मिलती, और जिस किसी के पास दुनिया का सामान और धन और कुटुम्ब परिवार ज़्यादा है उसी क़दर वह मन और माया के पंजे में ज़्यादा गिरिफ़्तार रहता है ॥

अपने मरने का सोच बहुत कम आता है और इस बात का बिचार कि बाद मरने के क्या हाल होगा, और यह जीव कहां जावेगा, कभी मन में नहीं आता है, और जो किसी को मरते देखता है या किसी की मौत का हाल सुनता है, तो शायद थोड़ी देर के वास्ते उसका ज़िक्र अफ़सोस या रंज या अचरज के साथ करता है, और फिर बहुत जल्द उसको भूल जाता है, और दूसरे कामों या बातों के ख़ियाल में पड़ जाता है ॥

३–सब में बड़े ख़ियाल जो मन को घेरे रहते है यह है। १–पहले फ़िक्र धन के कमाने और बढ़ाने का है जिस तरकीब और तदबीर और मिहनत से हो सके। २–दूसरे अपनी और अपने कुटुम्ब परिवार

की तरक़्क़ी और तन्दुरुस्ती और सलामती का-

३-तीसरे ऐश और आराम और मज़े और स्वाद के पदार्थों का हासिल करके उनका भोग करना, और उनकी सम्हाल और हिफ़ाज़त (रक्षा) करना-४-चौथे वे काम सोचना और करना जिन में इसको मान बड़ाई और शुहरत (जस) और हुकूमत और इख़्तियार ज़्यादा हासिल होवे ॥

४-जो यह सब काम थोड़े बहुत इस जीव की ताक़त के मुवाफ़िक़ मालिक की मौज से दुरुस्त बन जावें, तो फिर और उन्हीं के बढ़ाने की फ़िक्र में और उनके प्राप्ती के अहंकार में हर वक़्त लिपटा रहता है और नित्त उसका सामान और असबाब बढ़ाता जाता है, चाहे वह मुनासिब और जरूरी है या नहीं-और जिन लोगों से इन कामों में मदद मिले या उनके वसीले से यह काम दुरुस्त बन जावें, उन की ख़िदमत और ख़ुशामद में अपना फ़ाज़िल वक़्त लगाता रहता है ॥

५-खुलासा यह है कि सब कामों में दुनिया के यह आदमी तन मन और धन और अपना वक़्त लगाने को तैयार रहता है, जो उस में इन चारों पदार्थ की जिनका जिकर दफ़ा ३ मे हुआ है प्राप्त

या तरक़्क़ी मुमकिन होवे-यानी दुनिया और उस के भोगों को ही एक बड़ी न्यामत (दुर्लभपदार्थ) समझ कर उन्हीं की क़दर करता है और उन्हीं में दिल लगाता है-पर सच्चे मालिक की भजन और बन्दगी या अपने जीव के सच्चे कल्यान के वास्ते यह शख़्स किसी क़िस्म की तलाश या मिहनत या ख़र्च करने में हमेशा उज़र कम फ़ुरसती का पेश करके दिल चुराता है-और जो कोई इस काम के लिये इस पर दबाव डाले तो फ़ौरन अपनी बे परतीती मालिक की तरफ़ ज़ाहिर करता है, या यह कि वह मालिक किसी की बंदगी और भजन का मुहताज और ख़्वास्तगार (चाहनेवाला) नहीं है, या यह कि इन कामों की कोई ज़रूरत ख़ास मालूम नहीं होती है, या जीव के सच्चे मालिक की अंस और अमर होने की निस्बत अपना शक और शुबहा जाहिर करने को तैयार होता है, या ऐसे सवाल पेश करता है जिनके जवाब हरएक आदमी न देसके और जिस से परमार्थ के काम करने की ज़रूरत ग़लत साबित हो जावे-जैसे कि यह दुख सुख की रचना किसने और क्यों करी और उसका क्या फ़ायदा है-और जो संसार में भोग पैदा किये है तो वे ज़रूर भोगने के

वास्ते पैदा हुए हैं-फिर उन भोगों के हासिल करने और भोगने की इल्लत में जीवों को क्यों सज़ा या दंड दिया जाता है, या नीची ऊंची जोनों में क्यों भरमाया जाता है-और ऐसी रचना कि इस में कोई दुखी और कोई सुखी और कोई अमीर और कोई ग़रीब और मुफ़लिस (कंगाल) है किस वास्ते और किस क़ायदे से की गई-और सब एक से क्यों नहीं पैदा किये-और मालिक जो वह रहीम और दयाल है, तो ऐसी सख़्ती और तकलीफ़ जैसे अकाल और मरी वग़ैरह जीवों पर क्यों रवा रखता है और जो वह सर्व समरत्थ है तो आप ही हमारे मन को फेर कर हम से परमार्थ की करनी करा लेवे-और फिर इन सवालों के साफ और सही जवाब हासिल करने के वास्ते भी कोशिश और तलाश पूरे गुरू की नहीं करता है क्योंकि ऐसे सवालों का जवाब सिर्फ़ संत या उनके प्रेमी अभ्यासी दे सकते हैं, और भेष और पंडित की ताक़त नहीं कि वे जवाब माक़ूल देकर सवाल करनेवाले की तसल्ली कर देवें, ॥

६-यह हालत मन की इस सबब से हो गई, कि यह मन और सुरत बहुत अ़रसे बल्कि अनगिनत काल से अपने निज अस्थान से जुदा होकर अनेक

जन्मों में संसार और उसके भोग बिलास में भरम रहे हैं–और अपने निज घर की ख़बर और भेद बिल्कुल भूल गये--और भरम कर संसार को अपना देश और इस देह को अपना रूप और दुनिया के भोगों को अपना अहार और सुखदाई और कुटुम्बियों को अपना सच्चा सुख चिन्तक और मददगार समझा है--और उन्हीं के वास्ते अपना वक़्त और अपनी चैतन्यता ख़र्च कर रहे है–यह बड़ी भूल और ग़फ़लत और नादानी है ॥

७–और अब जो कोई घर का पता बतावे और सच्चे माता पिता कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का भेद सुनावे, तो उसको पूरी प्रतीत या बिल्कुल प्रतीत नहीं आती है, और सबब उसका यह है कि कालपुर्ष ने अपनी कलायें इस दुनिया में भेजकर यानी पैदा करके अनेक मत और अनेक चालें जारी करीं, और अनेक इष्ट लोगों को बंधवाये, और इन सब बातों और कामों में मन को किसी न किसी तरह का भोग और रस दिया, चाहे वह इन्द्रियों का रस है या मान बड़ाई और पूजा प्रतिष्ठा का भोग है–इतने पर भी लोग कालपुर्ष के हुक्म के मुवाफ़िक़ जो उसने वेद पुराण कुरान और इंजील (बाइबिल)

और अनेक मत की किताबों में जारी किया नहीं मानते है, और न ग़ौर और फ़िकर से उन किताबों के मतलब को समझते हैं–पर बाहरी रस्म और रीत और चाल ढाल में जो अक्सर करके रोज़-गारियों ने चलाईं, और जिन में मन और इन्द्रियों को सैर और तमाशा और भोगों का रस बराबर मिलता है, और अहंकार बढ़ता है बहुत ख़ुशी से शामिल होते हैं–और अंतर का अभ्यास जिस में तन मन और इन्द्रियों को थोडा बहुत रोकना पड़ता है पसंद नहीं आता–और जो कोई अपने मत के मुवाफ़िक़ उसको करते भी हैं, तो उस में मन नहीं लगाते--और ऊपरी तौर पर काम करते है--इस सबब से काल मत की हद्द तक भी कोई बिरले पहुंचे या पहुंचते है ॥

८--सिवाय इसके जो कालपुर्ष ने अपने मतों में रास्ता या तरकीब अभ्यास की जारी करी, वह ऐसी कठिन बतलाई कि न गृहस्त से बने और न विरक्त से और इस में उसका असली मतलब यही था कि कोई भी उसके अस्थान तक न पहुंचे--और सच्चे मालिक सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल के भेद से तो वह आपही वाक़िफ़ नहीं, फिर औरों को क्या

समझाता--और जो थोड़ा सा हाल सत्तलोक तक का उसको मालूम है उसको उसने पोशीदा (गुप्त) रक्खा और सिर्फ़ अपनी और अपने अंश और कलाओं यानी औतार और देवताओं वग़ैरः की पूजा का उपदेश आम तौर पर जारी किया--या अपनी कलायें पैग़म्बर रूप को भेजकर अपनी और उन की पूजा और मानता समझाई ॥

९--यह मन भोगों का लालची है, और इन्द्रियों के वसीले से बारम्बार भोगों की तरफ़ दौड़ता है--और जिन ख़्यालों का ऊपर ज़िकर हुआ है उन्हीं के चक्करों में अंतर और बाहर भरमता रहता है--और सुरत चेतन्य की धार को अपनी तरफ़ खींच कर इन्द्रियों के द्वारे संसार में बहाता है--और अपने और सुरत के कल्यान और परमानंद की प्राप्ती के लिये कोई सच्चा जतन करना नहीं चाहता है--और निहायत दरजे की बेपरवाही मौत और दुक्खों की तरफ़ से जो इसके सिर पर खड़े हुए हैं ज़ाहिर करता है--और जो परमार्थी काम भी करे तो झूठे और ओछे परमार्थ की बातें सुन कर उनको जल्दी क़बूल कर लेता है--और फिर उनमें भी सच्चा होकर नहीं लगता--और जो संत इसको सच्चे परमार्थ का भेद

सुनावें, उसमें यह मन अपने और सुरत के बदलने की तरकीब सुन कर और दुनिया और उसके भोगों की तरफ़ से किसी क़दर हटना मंज़ूर न करके प्रतीत नहीं लाता और मानना नहीं चाहता है ॥

१०–ऐसी ग़फ़लत और बेपरवाही और नादानी का नतीजा जीवों के हक़ में निहायत नुक़सान और सब दुक्खों का मूल समझ कर संत सतगुरु दया करके बारम्बार उनको समझाते हैं, कि अपने मालिक के चरनों में जो तुम्हारे घट में हर दम मौजूद और तुम्हारे अंग संग है थोड़ी बहुत प्रीत लाओ, और उसके मिलने का जतन सुरत शब्द के अभ्यास से जिस क़दर बन सके इस जिन्दगी में थोड़े बहुत शौक़ या प्रेम के साथ करके जिस रास्ते पर मरने के वक़्त जाना होगा उसको जीते जी थोड़ा बहुत साफ़ करलो और अपनी अंतर की आंख से देख लो–और संतों के बचन के मुवाफ़िक़ जरूरत के मुवाफ़िक़ संसार में बरताव करो–और ज्यादा बिस्तार उसका और बहुत फँसाव अपना उस में न करो–तो आहिस्ता २ एक दिन अपने निज घर मे पहुंच कर परम और अमर आनंद को प्राप्त होगे--और जनम मरन और देहियों के दुख सुख से बचाव हो जावेगा ॥

११--इस वास्ते कुल्ल जीवों को चाहे मर्द होवें या औरत मुनासिब और लाज़िम है कि अपनी इस ज़िन्दगी में संत मत का भेद और उसके अभ्यास की जुगत समझ कर जिस क़दर बने काररवाई शुरू करें--और अपने मन का घाट यानी मुक़ाम बदलवावें--तब यह भूल और भरम और ग़फ़लत जिस क़दर अभ्यास और सतसंग बनता जावेगा दूर होती जावेगी--और जिन ख़्यालों मे कि मन भरमता रहता है उनकी आहिस्ता २ कमी और अभाव होता जावेगा--और भोगों की तरफ़ से चित्त हटता जावेगा और होशियारी बढ़ती जावेगी--और अंतर में रस और आनंद सुरत और शब्द की धार का ध्यान और भजन के अभ्यास में मिलता जावेगा--और मन और सुरत उसके आसरे चढ़ते जावेंगे, और भूल और भरम और दुख सुख और करम के अस्थान से हटते जावेंगे, और रफ़ा २ त्रिकुटी में पहुंच कर मन अपने निज घर में रह जावेगा--और वहां से सुरत न्यारी होकर अकेली अपने निज देश में जो कि सत्तलोक और राधास्वामी धाम है पहुंच कर अमर और परम आनंद को प्राप्त होगी--और तब जनम मरन और देहियों के बंधन से सच्चा छुटकारा और बचाव हो जावेगा ॥

बचन ३९

मन और इन्द्रियों की चाल और उनकी सम्हाल।

१-मन और इन्द्री अपने स्वभाव के मुवाफ़िक़ (जो जनम २ के संसारी बरताव से बहुत मज़बूत और पक्का हो गया है) बारम्बार भोगों की तरफ़ दौड़ते हैं-यानी मन में से पहिले धार उठकर इन्द्रियों के अस्थान पर और फिर वहां से भोगों और पदारथों की तरफ़ रात और दिन बहती रहती है-सो जब तक धार का रुख़ अन्दर में नीच और बाहर की तरफ़ है, और उसी तरफ़ को धार रवाँ रहेगी, तब तक ऊंचे की तरफ़ उसका रुख़ यानी मुख नहीं बदल सकता, और न उस तरफ़ को चल सकती है-इस वास्ते राधास्वामी मत के अभ्यासियों को मुनासिब है, कि इस धार की सम्हाल रक्खें यानी चाह भोगों और पदारथों की किसी क़दर कम उठावें-और जब अभ्यास में बैठें उस वक़्त दुनिया और उसके पदार्थों का ख़्याल ज़रूर बन्द करें, और चरनों की तरफ़ मुख रक्खें, तो कुछ ध्यान और भजन का रस आवेगा-और नहीं तो गुनावन यानी

ख़्यालों में वक़्त ख़र्च हो जावेगा, और अभ्यास का फ़ायदा प्राप्त न होगा ॥

२--जब भजन के वक़्त कोई तरंग संसारी या भोगों की उठे, तो अभ्यासी को चाहिये कि उसी वक़्त उसको रोके, और जो न रोकी जावे तो उसी वक़्त गुरु स्वरूप या अस्थानी स्वरूप का ध्यान शुरू कर देवे-- इसका असर थोड़ा बहुत ज़रूर मन और इन्द्रियों पर पहुंचेगा, और उनका मुख स्वरूप या शब्द की तरफ़ आसानी से हो जावेगा--और जब गुनावन यानी ख़्याल हट जावे, तब थोड़ी देर बाद फिर भजन यानी आवाज़ के सुनने में लग जावे ॥

३--जो ध्यान के वक़्त भी गुनावन दूर न होवे, यानी फिर २ वही ख़्याल पैदा होवे, तब मुनासिब है कि नाम का सुमिरन भी ध्यान के साथ करे--और जो फिर भी ख़्याल न हटे, तो जिस शब्द की कोई ख़ास कड़ी या कड़ियां प्रेम की मन को बहुत प्यारी लगती होवें, उनका अंतर में मनहीं मन में गाकर पाठ करे और अपनी तवज्जह स्वरूप के ख़्याल पर पहले अस्थान सहसदलकँवल पर जमाये रक्खे-- जब मन इस काम में लग जावेगा, तब गुनावन और ख़्याल को छोड़ देगा, और मन में थोड़ा

बहुत प्रेम ज़ाहिर होगा और शब्द की भी आवाज उस वक्त़ साफ़ सुनाई देगी, और अभ्यास का थोड़ा बहुत रस आवेगा ॥

४–मन से एक वक्त़ में एक ही काम हो सकता है–इस वास्ते अभ्यासी को मुनासिब है, कि जब भजन में न लगे, तब उसको ध्यान में लगावे, और जो ध्यान में भी अच्छी तरह न लगे, और प्रेम की कड़ियाँ गाकर भी ख्याल को न छोड़े, तो सिर्फ़ सुमिरन करे--इस तरकीब से कि मुक़ाम नाफ या हिरदे से नाम की धुन अंदरही अंदर या थोड़ी आवाज के साथ उठावे, और हिरदे और कंठ चक्कर के अस्थान पर, एक २ हिस्सा नाम का उच्चारण करता हुआ, सहसदलकँवल के अस्थान या त्रिकुटी में ठहरावे यानी धुन को ख़तम करे--और फिर इसी तरह दूसरी दफ़ा नाम का उच्चारण नाफ़ से लेकर सहसदल-कँवल तक करे, यानी चार हिस्से करके एक एक हिस्सा नाम का उच्चारण एक २ चक्र के मुक़ाम पर करके आख़ीर हिस्सा सहसदलकँवल में ख़तम करे--जैसा कि नीचे लिखा है–नाफ़–हिरदय–कंठ–सहसदल-

रा धा स्वा मी

कँवल और जो हिरदे चक्र से उठावे, तो त्रिकुटी में ख़तम

करे–इस तरह–हिरदे–कंठ- सहसदलकँवल--त्रिकुटी ॥

रा धा स्वा मी

५--सिवाय ध्यान और भजन के वक़्त के, और किसी वक़्त जो मन में हिलोर संसारी तरङ्ग की उठे, या तरङ्ग पैदा होवे, और वह तरङ्ग मुनासिब नहीं है, या ग़ैर वाजिब और बेफ़ायदा है, तो मुनासिब है कि उस वक़्त फ़ौरन गुरु स्वरूप या अस्थानी का ख़्याल करे, और अन्तर में तवज्जह अपनी ऊपर की तरफ़ यानी सहसदलकँवल या त्रिकुटी की तरफ़ फेरे, तो उस वक़्त फ़ौरन वह हिलोर या तरङ्ग बंद हो जावेगी,–पर शर्त यह है कि अभ्यासी का प्रेम थोड़ा बहुत गुरु स्वरूप में होवे, या शब्द में होवे, या अंतर में ऊंचे की तरफ़ तवज्जह फेरने में (कोई दिन के अभ्यास की आदत से) रस आता होवे ॥

६--जिस किसी का गुरु स्वरूप में प्यार और भाव कम है या नहीं है, और न शब्द में अभी कुछ रस आया है, तो उसको चाहिये कि जब कोई तरङ्ग नाक़िस मन में उठे, तो उसको अपने भजन और ध्यान की हान और नरकों और चौरासी के दुक्खों का डर दिखला कर रोके -जो इस बात की संतों के बचन के मुवाफ़िक़ थोड़ी बहुत प्रतीत है, तो भी

मन और इन्द्री डर के सबब से रुक जावेंगी, और तरङ्ग भी हट जावेगी ॥

७--अभ्यासी को मुनासिब है कि अपने मन और उसकी चाल की हर वक़्त निगरानी और चौकीदारी रक्खे, कि फ़ज़ूल और नामुनासिब जगह न जावे, और न ऐसे कामों का ख्याल उठावे, तब जो अभ्यास दफ़ा ६ मे लिखा है उससे बन पड़ेगा--और नहीं तो उसको खबर भी न होगी कि उसके मन और इन्द्री किन बातों और किन कामों में भरम रहे है—बल्कि वह उन बातों और कामों का ख्याल के साथ अपने मन में रस लेवेगा, और उस ख्याल को जब तक वह अन्दर में जारी रहेगा, और उसका पूरा रस नहीं लेवेगा, नहीं छोड़ेगा—यह हालत कुल्ल संसारी जीवों की है—और जो ऐसी ही परमार्थी जीव की भी हुई, तो उस में अभी संसारी स्वभाव विशेष हैं, उसकी काररवाई परमार्थी दुरुस्त नहीं कही जा सकती है ॥

८—परमार्थ की तरक़्क़ी के वास्ते और अभ्यास में रस मिलने के लिये ज़रूर है, कि अभ्यासी अपने मन और इन्द्रियों की चाल पर नज़र रखे, और जहां तक मुमकिन होवे उनको बाहर की तरफ़

फ़ज़ूल और नामुनासिब धार बहाने से रोकता रहे, और जिस क़दर बने अंतर में ऊंचे की तरफ़ चलने और चढ़ने की आदत डाले, तो कोई दिन के अभ्यास से यह आदत पक्की और मज़बूत होती जावेगी— क्योंकि इन्द्रियों की तरफ़ और संसार में भी सुरत और मन—आदत और अभ्यास करके लगे हैं—और जब दूसरी आदत डाली जावेगी, और उसका अभ्यास किया जावेगा, तब इन का मुख ऊपर की तरफ़ आहिस्ता २ बदल जावेगा, और परमार्थ की तरक़्क़ी मालूम होने लगेगी ॥

९—मन आप भोगों का रसिया है, और इसी सबब से इन्द्रियों की तरफ़ धार को बहाता है—और जब समझ और बिचार के साथ अपने परमार्थ के नफ़े और फ़ायदे की क़दर जानेगा, तब होशियार हो जावेगा, और पुरानी आदत को आहिस्ता २ छोड़ता जावेगा, और चंचलता—और मलीनता को कम करता हुआ, स्वरूप के ध्यान में और शब्द की आवाज़ में उमंग और प्रेम के साथ लगाता जावेगा—इसी तरह एक दिन पूरा काम बन जावेगा ॥

वचन ४०

स्वारथ और परमारथ यानी दुनिया और दीन के कामों का बयान।

१–स्वार्थ से लोगों ने यह मतलब रक्खा है कि दुनिया के कामों का करना, या दुनिया के सुख और सामान की चाह उठाना और उसकी प्राप्ती के निमित्त संसारी या परमार्थी जतन करना॥

२–और परमार्थ से यह ग़रज़ रक्खी है, कि मरने के बाद और लोकों में भारी सुख हासिल करने के वास्ते जतन या काम करना, या अपनी मुक्ती के लिये जो जुगत और अभ्यास साध और महात्मा जन बतावें उसको दुरुस्ती से अंजाम देना, और तन मन धन उनकी या मालिक की सेवा में लगाना॥

३–संत मत में स्वार्थ और परमार्थ के अर्थ बहुत खोल कर और साफ़ तौर पर किये गये हैं, कि जिस में किसी तरह का शक नहीं रहे—और मुक्ती की निस्बत भी कहा है कि यह नाम हर एक ने अपने २ मत में बग़ैर मुक़र्रर करने ठेके और ठिकाने के रख लिया है—और उसका पूरा २ हाल नहीं वर्णन किया है जिस से साफ़ मालूम पड़े कि सच्ची

मुक्ती किसका नाम है—अब इन लफ़्ज़ों के अर्थ जुदा २ कहे जाते हैं ॥

४—स्वार्थ नाम उन कामों का है कि जिनके करने से देही के संग चाहे किसी क़िस्म की होवे सूक्ष्म या अस्थूल और इस लोक में या दूसरे लोकों में आराम मिले, और रस और सुख का भोग करे—और इसी आराम और सुख और मज़े की प्राप्ती के लिये चाह उठाना और उस चाह के पूरे होने के वास्ते जतन दरियाफ़्त करना, या उसमें अभ्यास और कोशिश करना और तन मन धन ख़र्च करना, स्वार्थी काम कहलाता है ॥

५—ऊपर की लिखी हुई दफ़ा में सब काम और सब क़िस्म की चाह शामिल हैं—यानी स्वर्ग और बैकुंठ और अनेक लोकों में देवताओं और औतारों के बासा चाहना, और वहां के या इस लोक के सुखों की आसा धरके जतन करना, और जो मुक्ती कि सच्ची नहीं है यानी जिस में बहुत काल के पीछे जनम लेना पड़ेगा उसके लिये जतन करना या उसकी चाह उठाना वह भी स्वार्थी कामों और चाहों में दाख़िल है ॥

६—इस लोक में कुल्ल बाहरमुखी पूजा जिसका

घट के अंतर के भेद से सिलसिला नहीं लगा हुआ है, और जिसका फल सच्चा और पूरन आनन्द और सच्ची मुक्ती किसी सूरत में नहीं हो सक्ती है स्वार्थी कामों में दाखिल है, क्योंकि पहले तो अक्सर करके यह पूजा दुनिया की चाह पूरी होने के लिये या उसके पूरन होने पर करी जाती है, और जो मुक्ती की चाह लेकर यह काम कोई करता है तो वह भरम में दाख़िल है—क्योंकि सब मत जो जारी हैं उनके आचारजों ने साफ़ लिख दिया है, कि जब तक कोई योग अभ्यास नहीं करेगा, या अपने मन और इन्द्रियों का मरदन नहीं करेगा, या जीते जी मुरदा न हो जावेगा तब तक तत्त वस्तु को यानी जिसको उन्होंने मालिक क़रार दिया है उसका दर्शन नहीं पावेगा, और पाप पुन्य और जनम मरन के चक्कर से बचाव और छुटकारा नहीं होगा ॥

७—परमार्थ उसको कहते हैं, कि जिसमें किसी क़िस्म के माया के मसाले की बनी हुई देही का रस और भोग मंज़ूर नहीं है—सिर्फ़ निर्मल चेतन्य देश में पहुंच कर अपने सच्चे और परम पिता राधास्वामी दयाल के दर्शन का आनन्द लेने की अभिलाषा ज़बर और मज़बूत और अडिग्ग है—यानी माया देश के

जिसको तिरलोकी कहते हैं, कोई पदार्थ या भोग या आनन्द अभ्यासी को लुभाकर रोक नहीं सक्के, और किसी अस्थान पर आतमा और परमातमा या ब्रह्म और पारब्रह्म के अभ्यासी ठहरना नहीं चाहता— उसका सच्चा और पूरा प्रेम राधास्वामी दयाल के चरनों में ऐसे शौक़ के साथ लगा है, कि किसी जगह और किसी संग में और कैसे ही सामान के साथ उसके मन में पूरी शान्ती और निचिंताई नहीं आती और, बेकली और तड़प दर्शन की कोई उपाय और जतन करके नहीं दूर होती जब तक कि राधास्वामी दयाल के देश में पहुंच कर चरनों में बिश्राम न पावे ॥

८—ऐसी टेक और भक्ती जिस किसी की सच्ची और मज़बूत है, उसी को परम भक्त और प्रेमी कहना चाहिये, और उसीको सच्ची मुक्ति काल और महाकाल के जाल से और सच्चा निरवार माया और महामाया के बंधनों से हासिल होगा, और वही निज देश में जो कि प्रेम का महाभंडार है पहुंच कर अमर और अजर हो जावेगा, और महा आनन्द को जो कि सदा एक रस रहता है प्राप्त होकर अपने सच्चे माता पिता राधास्वामी दयाल के दर्शनों का परम बिलास करेगा ॥

९—सच्चे परमार्थी और भक्तजन को मुनासिब है, कि संतों के मत के मुवाफ़िक़ भेद स्वार्थ और परमार्थ का समझकर, राधास्वामी दयाल के चरनों का इष्ट धारन करके, सच्चा और पक्का और मज़बूत इरादा उनके धाम में पहुंचने का करके अभ्यास शुरू करें, और संत सतगुरु और उनके सतसंग की सरन लेकर जिस क़दर बने कमाई करते जावें, और अपने मन को माया के पदार्थों से बचाये और हटाये हुए रास्ता तै करते जावें, तो एक दिन राधास्वामी दयाल की दया से निज घर में पहुंच कर अपना कारज बना लेवेंगे, ऐसे भक्तों की करनी और अभ्यास शुरू से अख़ीर तक सब परमार्थी काम में दाख़िल है॥

१०—जितने मत कि संसार में जारी हैं उनका सिद्धान्त माया के घेर में है, और इस सबब से उनके बचन और उनकी युक्तियां अभ्यास की उसी हद्द में ख़तम हो जाती हैं—इस वास्ते राधास्वामी दयाल के इष्टवालों को चाहिये, कि उन बचनों और युक्तियों को सुन कर धोखा न खावें, और उन मतवालों की बातें सुन कर या उनकी किताबें पढ़कर भरम न जावें; और अपना इरादा राधास्वामी देश में पहुंचने का ढीला न करें, नहीं तो किसी न किसी अस्थान पर

रास्ते में अटक जावेंगे, और जनम मरन से उनका सच्चा छुटकारा नहीं होगा ॥

११–राधास्वामी दयाल अपने सच्चे भक्तों को आप प्यार करते हैं, और हर तरह से उनकी सम्हाल और रक्षा करते रहते हैं, और जो वे अपना इरादा मज़बूत रक्खेंगे, और राधास्वामी दयाल की दया का भरोसा और यक़ीन करेंगे, तो वे हर हालत में उनको आप माया और काल के चक्करों से बचा कर सीधे रास्ते से अपने देश में ले जावेंगे, और अपने दर्शनों का परम आनंद बख़्शेंगे, और रास्ते में कहीं धोखा नहीं खाने देंगे–पर अभ्यासी भक्त को चाहिये कि प्रीत और प्रतीत उन के चरनों में बढ़ाता जावे, और संशय और भरम अपने चित्त में न लावे, और जब कभी कोई संशय और भरम उठे उसको सतसग में फ़ौरन ज़ाहिर करके दूर करावे–और अपने तईं बलहीन और असमर्थ जान कर, जब तब चरनों में वास्ते प्राप्ती मेहर और दया और अपनी सम्हाल के प्रार्थना करता रहे ॥

बचन ४१

मन और सुरत का खिलना और खुश होना और कभी भिचना और दुखी होना अभ्यास की हालत में

१–जो लोग कि राधास्वामी मत में शामिल हो

कर सुमिरन और ध्यान और सुरत शब्द का अभ्यास हर रोज़ नेम से करते है, उनको कभी ध्यान में स्वरूप का रस और भजन में शब्द का आनन्द बराबर अरसे तक आता है, और तबोअत मगन और खुश रहती है, और कभी ऐसा होता है कि शब्द साफ़ मालूम नहीं होता है, और न उस में मन लगता है, या ध्यान में कुछ रस नहीं आता या कम आता है तो ऐसी हालत में लोग घबरा कर शिकायत करने लगते हैं, और अपने चित्त में दुखी या निरास हो जाते हैं, और फिर अभ्यास में भी बहुत ढीले और सुस्त हो जाते हैं ॥

२–अब मालूम होना चाहिये कि यह दोनों हालतें सच्चे अभ्यासी को मौज और दया से प्राप्त होती हैं, पहली हालत में यानी जब कि ध्यान और भजन में रस और आनन्द मिलता है, ऐन दया और मेहर राधास्वामी दयाल की प्रगट नज़र आती है, पर दूसरी हालत में जब कि ध्यान और भजन में रस और आनन्द कम मिलता है, या एक दो रोज़ नहीं मिलता है, तब राधास्वामी दयाल की दया प्रगट नहीं मालूम होती और इस सबब से मन घबरा जाता है और ख्याल करता है कि दया खिंच गई या किसी

सबब से नाराज़गी हो गई, कि जो आनन्द मिलता था वह जाता रहा या बंद हो गया ॥

३-अब समझना चाहिये कि दूसरी हालत में भी जिसका ज़िकर ऊपर हुआ दया संग है, यानी ध्यान और भजन के रस न मिलने या कम होने के तीन सबब हो सक्ते हैं, और वह यह हैं, और उनका उपाय और जतन भी संग २ लिखा जाता है ॥

सबब का बयान

१-पहला यह कि इत्तफ़ाक़ से किसी निपट संसारी या निंदकों का संग होना, और उनके बचन तान और हंसी और परमार्थ के विरोधी या राधास्वामी मत की निंद्या को सुनकर मन में भरम या रूखा और फीकापन आ गया और अभ्यास के वक्त़ वेही बचन याद आये, और उनका असर ऐसा हुआ कि उस वक्त़ बिरह और प्रेम सूख गया, और जब ऐसा हुआ उसी वक्त़ मन और सुरत गिर पड़े और रस जाता रहा ॥

जतन या इलाज अभ्यासी के हाथ से

सबब इसका यह है कि अभी भक्ती ज़रा कच्ची है और सतसंग के बचनों की याद और उनकी

समझ भी कम है, नहीं तो चाहिये था कि संसारी और निन्दकों के बचन का फ़ौरन काटनेवाला जवाब देकर उनको चुप्प कर देता, और जो उन लोगों के सामने बोलने का मौक़ा नहीं था या उनको जवाब देना मुनासिब न समझा गया, तो चाहिये था कि सतसंग के बचन और परमार्थ में भक्ती की रीति विचार कर उन बातों के असर को अपने दिल से दूर कर देता और कहनेवालों को नादान और विरोधी और अभागी समझता, और अपने भागों को सराह कर ज्यादा तवज्जह से अभ्यास में लगता ॥

इलाज दूसरे के हाथ से या पोथी के पाठ से

जो इस क़द्र अपने में ताक़त नहीं पाई गई, तो अभ्यासी को मुनासिब है कि इसी क़िस्म के बचन पोथी सारबचन नसर और नज़म और प्रेमबानी और प्रेमपत्र में से निकाल कर ग़ौर के साथ पढ़े, या अपना हाल किसी अपने बड़े या बराबर के सतसंगी के सामने ज़ाहिर करके उससे अपनी तबी-अत का इलाज करावे, यानी भरम और अनसमझता को दूर करावे-पोथियों और सतसंगी के बचनों से ज़रूर मदद मिलेगी, और राधास्वामी दयाल की दया से वह भरम और नादानी जल्दी दूर हो जावेगी ॥

प्रार्थना करे राधास्वामी दयाल के चरनों में

और जो यह न बने तो भजन या ध्यान में ज़ोर लगावे और वास्ते प्राप्ती दया के प्रार्थना करे, राधास्वामी दयाल अंतर में समझ और सहारा देवेंगे ॥

दया का वर्णन

अब समझो कि ऐसे चक्कर के आने में भी दया है, कि जो मन में कचाई और कसर गुप्त धरी हुई थी वह इस तौर पर प्रगट होकर उसका इलाज किया जाता है, और फिर आइन्दा को वह कचाई और कसर या तो बिलकुल दूर हो जायगी या बहुत कम हो जावेगी और उसका इलाज भी मालूम हो जावेगा, कि जब २ वह कसर प्रगट होवे तब २ बदस्तूर सतसंगी और पोथियों से मदद लेकर उसको काटे और दूर करे ॥

२–दूसरा यह कि सैर और तमाशा या धनवालों और हाकिमों के संग से कोई २ तरंग मन में संसार के भोगों या पदार्थों या बड़े उहदों या नामवरी के कामों की पैदा होवे, और उन पदार्थों या भोगों के न मिलने या मुशकिल से मिलने के ख़्याल से मन

सुस्त और उदास हो जावे और ख़्याल करे कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल छिन में जो चाहें सो बख़्श देवें, पर उसको क्यों नहीं देते, या यह कि किसी रोज भोगों में मामूल और हद्द मुक़र्रह से ज्यादा या नामुनासिब और बेजा बर्ताव होजावे, या ज्यादा अभिलाषा और ख़्वाहिश किसी क़िस्म के भोगों को मन में औरों का हाल सुन कर या पढ़ कर पैदा होवे तो उस वक्त भी मन सुस्त और दुखी हो जाता है, और ख़ियाल करता है कि राधास्वामी दयाल उसके मन और इन्द्रियों की पूरी सम्हाल क्यों नहीं करते, और क्यों उसमे तरंगें उठने देते हैं, या भोगों में क्यों उसको बर्तने देते हैं—और इस हालत में भजन और ध्यान का रस और आनंद बिल्कुल नहीं आता है और तबीअ़त परेशान हो जाती है ॥

जतन और इलाज अभ्यासी के हाथ से

ऐसी हालत में अभ्यासी को चाहिये कि संतों के बचन निस्बत मन और माया और संसार के भोग बिलास के यानी चितावनी, और मन के स्वभाव और चाल के शब्द या बचन को समझ २ कर पाठ करे, और सतसंग के बचन याद करके अपने मन को समझावे, कि क्या फ़ज़ूल और नामुनासिब चाहें

उठा कर और उनके पूरे होने की ख़्वाहिश राधा-स्वामी दयाल से करके, नाहक़ उनकी तरफ़ से रूखा और फीका और दुखी और उदास होता है और अपनी भक्ती और ध्यान और भजन के अभ्यास में बिघन डालता है–क्योंकि संतों और महात्माओं ने पहले ही यह बात समझाई है कि सच्चे परमार्थी को मालिक से मालिक ही को मांगना चाहिये यानी वह कुल्ल दातार है और सर्व भोग और पदार्थ और हकूमत और नामवरी उसकी दात हैं, सो दाता से दाता ही को मांगना चाहिये और दात नहीं मांगनी चाहिये, क्योंकि जब दाता दयाल प्रसन्न होगा तब जो दात अपने सच्चे प्रेमी के वास्ते मुनासिब होगी आप देगा और जिसमें उसके दुनिया या परमार्थ का नुक़सान नज़र आवेगा वह दात अपने प्यारे बच्चों को नहीं देगा इस वास्ते ऐसी दात के न मिलने में कभी उदास या दुखी नहीं होना चाहिये ॥

जतन या इलाज दूसरे के हाथ से

जो बानी और बचन पढ़कर और इस तरह सोच और बिचार करके मन न माने और बार २ वही चाह उठावे, या भोगों में या उनके ख़्याल में भरमता रहे, तो मुनासिब है कि सतगुरु या साध गुरू से

और जो उनसे मेला न हो सके तो प्रेमी सतसंगी से जो अपने से अभ्यास और भक्ती में ज़बर होवे, अपना हाल खोल कर या इशारा में अर्ज़ करे, और फिर जो बचन वे कहें चित्त देकर सुने, और बिचारे कि तुच्छ और नाशमान भोग और पदार्थ के वास्ते अपने भजन और ध्यान के रस और आनंद को कुरबान करना, और अपनी सच्ची भक्ती में विघ्न डालना, और अपने प्यारे परम पिता राधास्वामी दयाल से बिमुख होना, कैसे भारी नुक़सान की बात है, और सच्चे प्रेमियों और सतसंगियों की सभा में किस क़दर शरम से सिर झुकाना पड़ेगा, और अपनी सुरत के कल्यान और फ़ायदे में आप ही बिघन डालना किस क़दर पाप कमाना और अपने उद्धार में देरी करना है ॥

प्रार्थना चरनों में राधास्वामी दयाल के

ऐसी समझ लेकर उन नाक़िस और ओछे भोगों की बासना को जल्द दूर करके और अपनी ग़लती और चूक पर शरमाकर माफ़ी के वास्ते चरनों में प्रार्थना करे, और सर्ब अंग करके यानी पूरी तवज्जह के साथ अभ्यास में लगे, तो राधास्वामी दयाल की दया से जल्द हालत बदल जावेगी, और अंतर

में मामूली रस और आनंद बल्कि मामूल से ज़्यादा मिलेगा ॥

प्राप्ती दया की

और इस तरह राधास्वामी दयाल के दया की परख होगी, कि अपने प्यारे बच्चों की किस तरह सम्हाल करते हैं, और उनको उनके मन की कसर और मलीनता दिखाकर उस बिकार को आहिस्ता आहिस्ता निकालते जाते हैं, और समझ बढ़ाकर और सफ़ाई और भक्ती की रीति सिखा कर अन्तर में रस और आनन्द बख़्शते हैं ॥

३–तीसरा यह कि पिछले या इसी जनम के करमों के सबब से कोई बीमारी या और किसी क़िस्म की तकलीफ़ या उपाधी अभ्यासी को पैदा होवे, या जो उसके कुटुम्ब और परिवार या ख़ास रिश्तेदारों में हैं, उनकी तबीअ़त अपने करमों के फल करके बीमार होवे, या और कोई तकलीफ़ या उपाधी उनको आयद (प्रगट) होवे, और बसबब उनकी प्रीत और संग रहने के अभ्यासी के मन पर भी उसका असर पहुंचे यानी उसको चिन्ता या फ़िकर पैदा होवे, और उस बीमारी या तकलीफ़ अपनी या अपने कुटुम्बियों का चिन्ता के सबब से मन और सुरत ध्यान और भजन

में अच्छी तरह नहीं लगें, तब मन घबराकर जल्दी पुकार चरनों में करता है—और जो वह मंजूर हो गई और बीमारी और तकलीफ़ या उपाधी हट गई तो खुश होकर शुकराना करता है, और नहीं तो चित्त दुखी और उदास होकर राधास्वामी दयाल की तरफ़ से रूखा और फीका हो जाता है, और कहता है कि क्यों नहीं जल्दी करम काट देवें, और इस क़दर सहायता क्यों नहीं करते कि जिसमें तबीअ़त ज़्यादा न घबरावे और अभ्यास दुरुस्ती से बने जावे और जो अभी दया नहीं करते तो आइन्दा करम कैसे काटे जावेंगे और दुक्खों से कैसे बचाव करेंगे।

जतन और इलाज अभ्यासी के हाथ से

ऐसी हालत में अभ्यासी को चाहिये कि धीरज के साथ जो तकलीफ़ होवे उसकी बरदाश्त करे, और जो हो सके तो सतसंग की हाज़री देवे और चित्त से बचन सुने, और जो सतसंग प्राप्त न होवे तो जिस क़दर बन सके तवज्जह अपनी लेटे हुए भजन या ध्यान या सुमिरन में लगावे, और जो इन कामों में मन न लगे यानी तकलीफ़ के सबब से यह अभ्यास न बन सके, तो चित्त के साथ नाम की धुन आहिस्ता २ या थोड़ी आवाज़ के साथ बतौर कड़ी के उच्चारन करे, इस तरह पर ॥

राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी।
राधास्वामी राधास्वामी राधास्वामी ॥

या इस तौर पर, राधास्वामी सतगुरु दयाल है, राधास्वामी सतगुरु दयाल—और जो धुन के साथ नाम का उच्चारन भी न कर सके तो पोथी का पाठ करे, या दूसरे से पाठ कराकर तवज्जह के साथ अर्थों पर नज़र रख कर सुने—इन में से जो अभ्यास थोड़ा बहुत बन आवेगा तो ज़रूर तकलीफ़ किसी क़दर कम हो जावेगी, क्योंकि वह तकलीफ़ पिछले नाक़िस करमों के सबब से पैदा हुई है, और अब जो परमार्थी करतूत संतों के बचन के मुवाफ़िक़ की जावेगी तो उसका असर पिछले करम के फल को काट देगा ॥

दया और दुआ लेना और दवा करना

१—सिवाय इसके अभ्यासी को मुनासिब है कि संत सतगुरु राधास्वामी दयाल की दया लेवे, और यह अभ्यास या सतसंग और प्रार्थना करके हासिल होगी ॥

२—और ग़रीब और मुहताज यानी भूखों की दुआ लेवे, इस तौर पर कि अपनी ताक़त के मुवाफ़िक़ एक या दो या ज़्यादा सच्चे भूखे मर्द या औरत या लड़कों को तलाश करके उनको अपने सामने अच्छा खाना

खिलवावे, जैसा वे खाते जावेंगे उसी क़दर खुश हो कर दुआ देते जावेंगे—उनकी दुआ के असर से भी तकलीफ़ किसी क़दर दूर होवेगी, और खुशी और ताक़त प्राप्त होगी ॥

३—और डाक्टर या हकीम या वैद की दवा भी राधास्वामी दयाल की मेहर और दया के आसरे करे, इससे भी बीमारी की तकलीफ़ दूर होगी, या कम होती जावेगी ॥

राधास्वामी दयाल की दया का बयान

जो जीव सच्चे मन से परम पुरुष राधास्वामी दयाल की सरन में आये हैं, उनको जब कभी ऐसी तकलीफ़ या सोच और फ़िक्र पैदा होता है, उसमें भी राधास्वामी दयाल की दया संग होती है, यानी जो तकलीफ़ पिछले करमों के सबब से आती है, उसको वे अपनी दया से सूली का कांटा और मन भर को सेर भर कर देते हैं—और फिर उस हालत में भी रक्षा और सम्हाल अपने जीवों की करते हैं—और उनके परमार्थ की तरक़्क़ी मंज़ूर है, यानी मेहर से ऐसे वक़्त पर भजन और ध्यान में ज़्यादा रस देते हैं कि जिसकी मदद से वह तकलीफ़ बहुत कम मालूम होती है या बिल्कुल नहीं मालूम होती है—बल्कि बाज़े

वक्त ऐसी हालत तकलीफ़ या बीमारी में इस क़दर रस और आनंद अभ्यास में बख़्शते हैं कि बीमार अपनी बीमारी का जल्दी दूर होना पसंद नहीं करता है-इस वास्ते इस बात का ख्याल राधास्वामी दयाल की सरन वाले जीवों को हमेशा रखना चाहिये कि उनके करम तो राधास्वामी दयाल सहज में काटते जाते हैं, और जो उनके रिश्तेदारों के करमभोग से उनको फ़िकर और सोच पैदा होता है, उसमें भी मदद फ़रमाते हैं-और जो किसी परमार्थी के रिश्तेदारों को उससे या उसको उनसे सच्ची प्रीत है, तो उनके भी करमों के कटने में दया के साथ मदद होती है यानी उनको भी दुख कम होता है, और उस दुख में भी अपने परमार्थी रिश्तेदार के दर्शन और बचन से किसी क़दर तकलीफ़ का घटाव और बचाव होता है, और अन्तर में ताक़त और सीतलता प्राप्त होती है॥

४-सिवाय उन तीन सबब के जिनका हाल ऊपर लिखा गया, एक और सबब ख़ास है कि जिसमें अभ्यासी को थोड़ी बहुत बीमारी या रंज या ख़ौफ़ या फ़िकर की वजह से तकलीफ़ होती है॥

और वह यह है, कि राधास्वामी दयाल वास्ते घटाने या दूर करने किसी ख़ास बिकार मन और

इन्द्रियों के, या ढीले करने कोई बंधन अन्तरी या बाहरी के, या निरमल करने और चढ़ाने मन और सुरत के, या कम करने या ख़ारिज करने किसी माद्दा या मवाद नाक़िस के, कोई ख़ास बीमारी या तकलीफ़ देह में, या रज या अपने मन पर गुस्सा, या सोच और फ़िकर या ख़ौफ़ दिल में, अपनी मौज से पैदा करके अपने निज सेवक और सच्चे प्रेमी अभ्यासी की गढ़त फ़रमाते हैं—ऐसी हालत कोई बड़भागी प्रेमियों को नसीब होती है, और उसमें उनको ऐसी घबराहट या तकलीफ़ नहीं होती कि निरास्ता पैदा होवे, या अपने भजन और ध्यान की बैठे २ या लेटे लेटे कार-रवाई न कर सके, और उसमें थोड़ा या बहुत रस न पावें—और जो कभी इस क़दर तकलीफ़ होवे कि ध्यान और भजन न बन सके, तो राधास्वामी दयाल अपनी मेहर से ऐसे निज प्रेमियों के मन और सुरत को अन्तर में आप ताने हुए और खींचे हुए रखते हैं कि वह हालत भजन और ध्यान से ज़ियादा है, क्योंकि उसमें मन सिमटा हुआ रहता है, और सुरत ऊपर की तरफ़ को खिंची हुई और तनी हुई रहती है, कि जिसके सबब से देह की तकलीफ़ बहुत कम मालूम होती है, और अन्तर में एक तरह का आराम और आनंद बराबर मिलता रहता है ॥

५-ऐसी मौज की पहिचान हरएक प्रेमी को वक़्त पैदा होने बीमारी या तकलीफ़ के नहीं हो सकती, लेकिन जो वह अपने हाल और राधास्वामी दयाल की दया की निरख और परख करता रहता है, तो उसको बाद गुजर जाने ऐसी हालत के किसी क़दर पहिचान और समझ इस बात की कि वह हालत मौज और दया से पैदा हुई आ सकती है, और फिर वह इस दया और उसके फ़ायदे को देख कर राधास्वा ी दयाल के चरनों में शुकर करेगा, और उनकी महिमा को कि किस २ जुगत से अपने निज प्रेमियों की गढ़त और सम्हाल फ़रमाते हैं, थोड़ा बहुत जानकर अपनी बड़ भागता पर खुश होगा, कि राधास्वामी दयाल ने उसको अपना दयापात्र बनाया या बनाते जाते हैं ॥

६-बानी का पाठ वास्ते मज़बूती सरन और हासिल होने अन्तरी दया और मदद के हर हालत में ज़रूर है, और जो जरूरत होवे तो अपने से ज्यादा दरजे के सतसंगी से जो क़रीब होवे, और उससे आसानी के साथ मेला हो सके, ऐसी हालत का ज़िकर करके मदद लेना भी मुनासिब है ॥

७-जिस किसी को सतगुरु का संग प्राप्त है, उसको किसी दूसरे से अपने हाल का कहना ज़रूर न होगा-

वह खुद सतगुरु से अपना हाल अर्ज़ करे, उनकी मेहर और दया के भरे हुए बचन और नज़र से उसको जल्दी फ़ायदा होवेगा ॥

८-यहाँ तक उन जीवों की हालत का जिकर हुआ जो सच्चे होकर परमार्थ में लगे हैं, और राधास्वामी दयाल की जैसे तैसे सरन में आकर थोड़ी बहुत तवज्जह और होशियारी के साथ हर रोज़ नेम से अभ्यास करते हैं, और दुनिया के दुक्ख और चौरासी का डर उनके दिल में थोड़ा बहुत क़ायम हो गया है-पर जो जीव कि नेम से रोजमर्रा अभ्यास नहीं करते, यानी जब चाहे जब अभ्यास किया और जब चाहा जब कुछ अरसे के लिये छोड़ दिया, या जिनकी प्रीत और प्रतीत सतगुरु राधास्वामी दयाल के चरनों में अभी साधारन है, और दुनिया के भोग और बिलास और ऐश मौज की चाह मन में ज़बर बसी हुई है, उनको अपने अभ्यास की हालत और दरजे की ख़बर भी नहीं होती, और भजन और ध्यान के वक्त अकसर गुनावन यानी ख़्याल में बहते रहते हैं, और फिर उसको ख़बर भी नहीं होती या मालूम होने पर इस क़दर ताक़त नहीं रखते या कोशिश नहीं करते कि गुनावन को दूर करें या थोड़ा बहुत

हटावें–तो ऐसे जीव अभी अपने संसारी करमों के चक्कर में पड़े हुए हैं, और अपने वास्ते आप बिघन और बखेड़े पैदा कर लेते हैं, कि जिससे अभ्यास का रस उनको जैसा कि चाहिये नहीं मिलता–यह निपट करम और काल और मन और माया के बस में हैं, और इनकी तरफ़ सतगुरु राधास्वामी दयाल की तवज्जह भी अभी कम है–जो वे कुछ अरसे में समझ बूझ कर होशियार हो कर अभ्यास और सतसंग करने लगे तो बेहतर, नहीं तो जब मौक़ा होगा और जिस क़दर मुनासिब समझा जावेगा, उनकी भी सम्हाल फ़रमावेंगे–पर उनको थोड़ी बहुत तकलीफ़ होगी, क्योंकि ऐसे जीव बिना थोड़ा बहुत दुख पाये और दुनिया के पदार्थों का अपनी नादानी और बे परवाही के सबब से थोडा बहुत नुक़सान कराये बग़ैर होशियार नहीं होते, सतगुरु राधास्वामी दयाल के हुक्म को चित्त से चेत कर नहीं सुनते और मानते हैं–इस वास्ते जब उनके सम्हाल की मौज होती है तब उनके साथ इसी क़िस्म का बर्ताव किया जाता है, और तब ही उनको सच्चा होश आता है और आइन्दा को दुरुस्ती के साथ बर्ताव करते हैं, यानी दुनिया के कारोबार के साथ सच्चे परमार्थ की कार-

रवाई भी थोड़ी बहुत सचौटी और दुरुस्ती के साथ करने लगते हैं—और फिर उनकी भी हालत बदलती जावेगी और आहिस्ता २ कोई दिन में वे भी दया-पात्र हो जावेंगे, यानी उन पर राधास्वामी दयाल की मेहर होती जावेगी, और फिर सच्चे प्रेमियों के मुवाफ़िक़ उनकी भी रक्षा और सम्हाल शुरू हो जावेगी ॥

९—अब समझना चाहिये कि यह हालत मन के खिलने और भिचने की सब अभ्यासियों पर दौरा के तौर पर आती रहती है, और यह भी दया का निशान है कि जब २ भजन और ध्यान में बराबर रस मिलता जाता है तब मन मगन रहता है, और जब रस में कुछ कमी हो जाती है या दुरुस्ती के साथ अभ्यास नहीं बन पड़ता है, या किसी क़िस्म की तरंगें मन में पैदा होती हैं, जो ज़ाहिरा विघनकारक हैं, तब मन में एक क़िस्म की बेकली और तड़प पैदा होती है, और वास्ते प्राप्ती दया के वह अभ्यासी विन्ती और प्रार्थना करता है, तब फिर थोड़ा बहुत रस मिलना शुरू हो जाता है—इसमें यह फ़ायदा है कि अभ्यासी के चित्त में हमेशा दीनता बनी रहती है, और अपने हाल और मन की चाल

को देख कर अपने अन्तर में शरमाता और झुरता रहता है, और अहंकार अपनी बड़ाई और अभ्यास की तरक्क़ी का मन में नहीं आता, और बिरह वास्ते प्राप्ती ज़्यादा रस और आनंद के जागती रहती है–इसी से तरक़्क़ी अभ्यास की होती रहती है, और जो एकसी हालत रही आवे तो मन अंतर में मगन हो कर जिस दरजे तक कि पहुंचा है वहीं रहा आवेगा, और आगे को चाल नहीं चलेगी यानी तरक़्क़ी नहीं होगी ॥

१०--बेकली और तड़प जिस क़दर कि रस मिला है उसको हज़म करानेवाली और आइन्दा को ज़्यादा दया हासिल करानेवाली और आगे को रास्ता चलाने वाली है–जो यह हालत न होवे तो उतने ही रस और आनन्द में मन को शान्ती आजावे, और आगे को तरक़्क़ी बन्द हो जावे–इस वास्ते ऐसी हालत में अभ्यासी को ज़्यादा घबराना या निरास होना नहीं चाहिये, बल्कि ज़्यादा दया का उम्मेदवार हो कर ऐसे वक़्त में जिस क़दर बने कोशिश और मिहनत वास्ते दुरुस्ती से करने भजन और ध्यान के करना चाहिये, और मन की बेफ़ायदा और नामुनासिब तरंगों को रोकना और हटाना मुनासिब है ॥

११–यह तरंगें भी थोड़ी बहुत ज़रूर उठेंगी, क्योंकि

अभ्यासी जिस क़दर रास्ता तै करता है, उसी क़दर काल और माया से उसको लड़ाई होती जाती है— और यह दोनों नई २ तरंगें काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार की जिनकी जड़ असल में त्रिकुटी के मुक़ाम पर है, उठा कर अभ्यासी का गिराना और उसका रास्ता रोकना चाहते है—इस वास्ते अभ्यासी को मुनासिब है, कि सतगुरु राधास्वामी दयाल की दया का बल लेकर उन तरंगों को काटता और हटाता जावे—और जो भूल चूक हो जावे, या उन तरंगों के साथ लिपट कर गिर जावे या फिसल जावे, तो उसका कुछ अन्देशा नहीं है, चाहिये कि फिर होशियार होकर अपना काम मज़बूती और दुरुस्ती से करे जावे, तो राधास्वामी दयाल की दया से आहिस्ता २ इन दोनों के बल को तोडता जावेगा, और एक दिन उन पर फ़तह पावेगा ॥

१२—ऐसी हालत के पैदा करने और काल अंग की ताक़त दिखाने में यह मौज है, कि अभ्यासी को मालूम हो जावे कि काल और उसके दूत किस क़दर बली हैं, और राधास्वामी दयाल अपनी दया से किस २ जुगत से उनके बल और ताक़त को तुड़वा कर या ढीला करके अपने सच्चे प्रेमियों की चाल

बढ़ाते जाते हैं, और सफ़ाई मन और सुरत की करा कर ऊंचे देस के बास के लायक़ उनकी गढ़त करा कर बनाते जाते हैं ॥

१३–जो कोई सतगुरु स्वरूप को अगुवा करके चलेगा उसको इस क़िस्म के विघन बहुत कम पेश आवेंगे, फिर भी काल और माया थोड़ा बहुत अपना बल और ज़ोर दिखावेंगे और उस अभ्यासी से आप भी डरते रहेंगे, फिर राधास्वामी दयाल की दया से सब बिघन आसानी से कटते और दूर होते जावेंगे, और एक दिन रफ़्ता २ वह अभ्यासी इनको जीत कर अपने निज देश में पहुंच जावेगा ॥

१४–कुल अभ्यासी सतसंगियों को चाहिये कि नीचे के लिखे हुए शब्द के मतलब को समझ कर जहां तक बन सके उसके साथ मन से मुवाफ़िक़त करें, और सतगुरु राधास्वामी दयाल की मौज के अनुसार जिस क़दर हो सके बरताव करें ॥

शब्द

गुरू की मौज रहो तुम धार ।
गुरू की रज़ा सम्हालो यार ॥ १ ॥
गुरू जो करें सो हित कर जान ।
गुरू जो कहें सो चित धर मान ॥ २ ॥

शुकर की करना समझ बिचार ।
सुक्ख दुक्ख देंगे हिकमत धार ॥ ३ ॥

ताड़ और मार करें सोइ प्यार ।
भोग सब इन्द्रा रोग निहार ॥ ४ ॥

कहूं क्या दम दम शुकर गुजार ।
बिना उन और न करने हार ॥ ५ ॥

दुखी चित से न हो दुख लार ।
सुखी होना नहीं सुख जार ॥ ६ ॥

बिसारो मत उन्हें हर बार ।
दुक्ख और सुक्ख रहो उन धार ॥ ७ ॥

गुरू और शब्द यह दोउ मीत ।
नहीं कोइ और इन घर चीत ॥ ८ ॥

यही सत पुर्ष यही करतार ।
लगावें तोहि इक दिन पार ॥ ९ ॥

बिना उन कोई नहीं संसार ।
देव मन सूरत उन पर वार ॥ १० ॥

करें वह नित्त तेरी सार ।
तेरे तन मन के हैं रखवार ॥ ११ ॥

शुकर कर राख हिरदे धार ।
मिटावें दुक्ख सब ही झार ॥ १२ ॥

करें क्या मन तेरा नाकार ।
नहीं तू छोड़ता विषधार ॥ १३ ॥
भोग में गिरे बारम्बार ।
न माने कहन उनकी सार ॥ १४ ॥
इसी से मिले तुझ को दंड ।
नहीं तू मानता मतिमंद ॥ १५ ॥
सहो अब पड़े जैसी आय ।
करो फ़रयाद गुरु से जाय ॥ १६ ॥
पकड़ फिर उनही को तू धाय ।
करेंगे वोही तेरी सहाय ॥ १७ ॥
बिना उन और नहीं दरबार ।
रहो उन चरन में होशियार ॥ १८ ॥
गुनह तुम कीये दिन और रात ।
गुरू को कुछ न मानी बात ॥ १९ ॥
इसी से भोगते दुख घात ।
बचावेंगे वही फिर तात ॥ २० ॥
रहो राधास्वामी के तुम साथ ।
लगे फिर शब्द अगम तुम हाथ ॥ २१ ॥

बचन ४२

करनी और सरन का बयान

१–जो जीव कि सतसंग में आये हैं, यानी जिन्हों

ने कि राधास्वामी मत को क़बूल किया है, उनकी दो क़िस्में हैं ॥

१-एक करनी वाले, यानी वे कि जिनके मन में शौक़ दर्शन राधास्वामी दयाल के चरन का तेज है, और जीते जी अतर में शब्द और स्वरूप का रस और आनंद लेना चाहते हैं-ऐसे जीव जो कुछ अभ्यास यानी सुमिरन ध्यान और भजन उनको बताया जावे, उसको नेम से होशियारी और दुरुस्ती के साथ रोज़-मर्रा दो तीन या चार बार करते है-और अपने मन और इन्द्रियों की रोक और सम्हाल कि किसी तरङ्गों और भोगों के खियाल में वक्त़ अभ्यास के न भरमें करते रहते हैं-और दुनिया और उसके कारोबार और भोग बिलास में जरूरत के मुवाफ़िक़ और जहां तक बन सके मुनासिब तौर पर बरताव रखते हैं-और फ़ज़ूल चाहें धन और पुत्र और नामवरी और तन और मन को सुख और आराम देने की कम उठाते हैं-और जहां तक मुमकिन होवे सतगुरु राधास्वामी दयाल के बचनों के मुवाफ़िक अंतर और बाहर कार-रवाई करते हैं ॥

२-दूसरे सरन वाले, यानी वे जीव जो कि सतगुरु राधास्वामी दयाल के चरन और उनके सतसंग में

प्रीत और प्रतीत रखते हैं—और राधास्वामी मत के क़ायदे और उसके अभ्यास को अपनी समझ के मुवाफ़िक़ निरनय करके जिस क़दर मामूली तौर पर बन सकता है अभ्यास भी करते हैं—और रामास्वामी दयाल को सर्बसमरथ और दयाल और दाता जान कर उनके चरनों की सरन अपनी प्रीत और प्रतीत के दरजे के मुवाफ़िक़ लेकर, उनकी दया से अपना उद्धार और काल और करम और माया के घेर से निरवार दरजे बदरजे जैसे उनकी मौज होवे चाहते हैं—और उनकी दया के भरे हुए बचनों का सहारा और भरोसा रख कर अपने मन में निचिंत रहते हैं—और इस बात का यक़ीन रखते हैं, कि जो राधास्वामी दयाल और उनके सतसंग की सरन आया, उसका उद्धार वे अपनी दया से आहिस्ता २ जरूर फ़रमावेंगे—इन जीवों के मन में ज्यादा घबराहट और तड़प वास्ते अन्तरी दर्शन या विशेष रस और आनन्द भजन और ध्यान के नहीं है, और इस सबब से ज्यादा कोशिश और मिहनत अभ्यास में नहीं करते हैं ॥

२—पहली क़िस्म के जीवों यानी करनी वालों की हालत हमेशा बदलती रहती है, यानी वे दिन २ अभ्यास की तरक़्क़ी करते रहते हैं, और इसमें कभी उनका

मन अन्तर में रस और आनंद पाकर खिलता है यानी मगन होता है, और कभी जब कुछ रस कम मिलता है तो भिच जाता है यानी उदास रहता है, और जो कि वे निरख परख अपने मन और इन्द्रियों की चाल और राधास्वामी दयाल के दया की हमेशा करते रहते हैं, इस सबब से भी कभी उनका मन थोड़ा बहुत सुखी और कभी दुखी होता रहता है. और चिंता और फिकर यानी खटक अपने जीव के कल्यान की हमेशा थोड़ी बहुत उनको लगी रहती है ॥

३-पर दूसरी क़िस्म के जीव यानी सरन वाले अपने उद्धार का फ़िकर और बोझ राधास्वामी दयाल के चरनों में डाल कर, और उनकी दया का आसरा और भरोसा लेकर, थोड़े बहुत सदा निचिंत रहते हैं, उनके मन मे इस तौर के चक्कर और हालतें जैसा कि करनी वालों को पेश आती हैं नहीं पैदा होती हैं, और जो कभी ऐसी कैफ़ियत उनके दिल पर गुज़रती है, तो उसका वे बहुत ख़ियाल और सोच भी नहीं करते, और दया की मुख्यता करके ऐसी हालत में बहुत घबराहट या चिंता उनको नहीं सताती है ॥

इस किस्म के जीव कसरत से हैं, और करनी वाले बनिस्बत इनके थोड़े है ॥

४–सरन वाले जीव अपने मन और इन्द्रियों की रोक टोक भी बहुत नहीं करते, और दुनिया और उसके कारोबार और भोग बिलास के बरताव में सिर्फ़ मामूली तौर पर एहतियात करते हैं, पर अपनी प्रीत और प्रतीत को राधास्वामी दयाल के चरनों में और भी उनके सतसंग में जिस क़दर बने बढ़ाते रहते हैं, और राधास्वामी दयाल की दया का हाल सुन कर और थोड़ी बहुत अपने अंतर और बाहर की कार-रवाई में उसकी परख करके सरन को मजबूत और पक्का करते रहते हैं।

५–हज़ूर राधास्वामी दयाल को सब जीवों की सम्हाल हर तरह से मंज़ूर है, जो करनी वाले जीव हैं वे उनके होशियार बालक हैं, और सरनवाले उनके छोटे बच्चे हैं, वे इन दोनों की मदद करते हैं, बल्कि छोटे बच्चों की जो अपनी करनी का बल छोड़ कर निरानिरी उनकी दया के आसरे है, ज्यादा सम्हाल फ़रमाते हैं॥

६–करनी वाले जीवों की प्रीत और प्रतीत राधा-स्वामी दयाल के चरनों में बहुत गहरी और मजबूत होती है, कि किसी झकोले की हालत में वे नहीं डिगते हैं, यानी झोका नहीं खाते, और उनकी सरन भी

गहरी और ऊंचे दरजे की है, कि कैसा ही चक्कर आवे वह बदस्तूर क़ायम और मजबूत रहती है, और वे सिर्फ़ अपने ही जीव का कारज नहीं बनाते, बल्कि बहुत से जीवों को और ख़ास कर सरन वालों को उनके जीव के उद्धार में बहुत मदद देते है ॥

७–जब कोई भारी चक्कर या झकोला आवे, तो सरन वाले जीव अपनी कमज़ोरी के सबब से झोका खा जाते है, पर राधास्वामी दयाल अपनी मेहर से ऐसी हालत में उनको चाहे सीधे और चाहे करनी वालों की मारफ़त मदद देकर उनकी रक्षा और सम्हाल करते है, और दुनिया के भोग बिलास के फन्दों से भी उनको आहिस्ता २ बचा कर निरमल करते जाते हैं, और हर झकोले के पीछे उनकी प्रीत और प्रतीत और सरन को ज्यादा मज़बूती देते जाते हैं ॥

८–जीवों को चाहिये कि जैसे बने तैसे राधास्वामी दयाल के सतसंग में शामिल हो कर उनके चरनों की सरन लेवें, तो चाहे वह करनी के लायक होवें या सरन के अधिकारी होवें, राधास्वामी दयाल सब की हर तरह से रक्षा और सम्हाल करके, और दिन २ प्रीत और प्रतीत अपने चरनों में बढाकर, अबेर (देर) सवेर (जल्द) एक दिन निज घर में पहुंचा कर परमानंद

को प्राप्त करेंगे, और जनम मरन और देहों के दुख सुख से बचा कर अमर अजर कर देंगे, और अपने निज धाम में अपने दर्शन का परम बिलास बख़्शेंगे ॥

९-करनी वाले जीवों को इस क़दर ख़ियाल रखना चाहिये, कि अभ्यास करके उनकी सुरत अन्तर में दिन २ ऊंचे की तरफ़ चढ़ती जावे, और सरनवालों को इतनी होशियारी रखनी चाहिये, कि उनके इस बात के यक़ीन मे कि राधास्वामी दयाल अपनी दया से ज़रूर उनका बेड़ा पार लगावेंगे ख़लल न पड़ने पावे, और दोनों क़िस्म के जीवों को बराबर कोशिश और एहतियात करना चाहिये कि उनकी प्रीत और प्रतीत राधास्वामी दयाल के चरनों में दिन दिन बढ़ती और मजबूत होती जावे, और दुनिया और उसके भोग और पदार्थों से मन और चित्त जिस क़दर बन सके दिन २ उपराम होते जावें ॥

१०-जो इस क़दर होशियारी दोनों क़िस्म के जीवों से बन आवेगी, तो कोई शक नहीं है कि राधास्वामी दयाल अपनी मेहर और दया से उन जीवों का कारज सहज में उनके अधिकार के मुवाफ़िक़ बना कर दरजे बदरजे एक दिन परम पद में पहुंचावेंगे ॥

बचन ४३

अभ्यास के ख़ास विघनों का बर्णन और उनके दूर करने और अभ्यास की तरक़्क़ी की जुगत

१-जो लोग कि राधास्वामी मत में शामिल होकर अभ्यास कर रहे हैं, उनके लिये यह बचन कहा जाता है, कि जब २ भजन और ध्यान में रस कम मिले या मन बिल्कुल न लगे, तब उनको क्या जतन करना चाहिये ॥

२-जब भजन में शब्द की आवाज़ साफ़ न मालूम होवे या बिल्कुल न सुनाई देवे, तब मुनासिब है कि उस वक़्त उसी आसन से बैठे हुए ध्यान करे, और जो थोड़े अरसे में इस तौर से शब्द न सुनाई देवे या आवाज़ साफ़ न आवे, तो ध्यान करके उठ खड़ा होवे, और फिर दूसरे वक़्त भजन करे, और जो फिर भी शब्द न मालूम होवे, तो बदस्तूर ध्यान करे, और इसी तौर से हर रोज अभ्यास करे जावे जब तक कि शब्द सुनाई न देवे-दो चार रोज़ या एक हफ़्ता या दो हफ़्ता में राधास्वामी दयाल की दया से ज़रूर थोड़ी या बहुत आवाज़ मालूम पड़ेगी ॥

३–जब भजन में बैठे और गुनावन यानी ख़ियालात दुनिया के पैदा होवें, तो चाहिये कि उनको हटावे और दूर करे, और जो ऐसा न कर सके तो मुनासिब है कि उस वक़्त सुमिरन और ध्यान उसी आसन से बैठे हुए करे–जो ध्यान में मन लग जावेगा तो ख़ियालात दूर हो जावेंगे, और जो फिर भी मन ख़ियालात उठाता रहे, तो भजन और ध्यान छोड़कर नाम का सुमिरन धुन के साथ या उस क़ायदे से जैसे कि प्रेमपत्र बचन ३९ में लिखा है, मनही मन में या थोड़ी आवाज़ के साथ एक या पौन घंटे सुरत और मन और दृष्टि को सहसदलकंवल के मुक़ाम पर जमाकर और आंखें बन्द करके करे–इस तौर से ज़रूर सुमिरन का रस आवेगा और मन निश्चल हो जावेगा–फिर इख़्तियार है कि चाहे ध्यान करे या भजन करे–और जो शान्ती आ गई होवे, और तबियत ज़ियादा अभ्यास को न चाहे या फ़ुरसत न होवे तो उठ खड़ा होवे ॥

४–जब ध्यान और सुमिरन में बैठे और उस वक़्त मन न लगे या बेफ़ायदा दुनिया के ख़्याल उठावे, या काम क्रोध लोभ और मोह की तरंगें उठावे, तो भी मुनासिब है कि नाम का सुमिरन धुन के साथ या

उस क़ायदे से जैसा कि प्रेमपत्र बचन ३९ में लिखा है, बाहर या अंतर आवाज़ के साथ करे—पौन घंटे या एक घंटे तक इस में ज़रूर थोड़ा बहुत रस आवेगा और मन निश्चल हो जावेगा, और कुछ प्रेम की हालत भी मालूम होवेगी--उस वक़्त फिर चाहे ध्यान न करे या इस क़द्र काम करके उठ खड़ा होवे॥

५--जो मन अक्सर भजन और ध्यान में नहीं लगता है और गुनावन ज़्यादा उठाया करता है, तो भी यही इलाज करना चाहिये, यानी हफ़्ता दो हफ़्ता एक २ घंटे नाम की धुन का उच्चारण करे, इस में सफ़ाई हासिल होगी और थोड़ा बहुत रस आवेगा, और फिर ध्यान और भजन थोड़ो बहुत दुरुस्ती के साथ बन पड़ेगा--और जब इन दोनों में रस आने लगे, या मन थोड़ा बहुत ठहरने लगे, तब नाम का सुमिरन धुन के साथ मौक़ूफ़ कर दे, या हफ़्ता में एक या दो बार घंटे २ भर करता रहे॥

६--नाम की महिमा बहुत बडी है, पर बिना भेद और जुगत के यह अभ्यास कुछ फ़ायदा नहीं दे सकता है, या यह कि जो फ़ायदा हासिल होगा वह ऊपरी होगा और क़ायम नहीं रहेगा॥

७--जैसा कि नाम के सुमिरन में मन लग जावे,

और उस वक़्त जो शब्द सुनाई देवे या रोशनी नजर आवे या आनंद प्राप्त होवे, उसको सच्चा संग शब्द या सतगुरु का समझना चाहिये, क्योंकि यह सब रूप यानी आनन्द रूप और शब्द स्वरूप और प्रकाश रूप सतगुरु के हैं—और जानना चाहिये कि जब इन में से कोई भी हासिल हुआ तो ज़रूर सतगुरु और शब्द के साथ मेला हो गया, और अभ्यास दुरुस्त बना॥

८—जब भजन के वक़्त आवाज़ बाईं तरफ़ से आवे तो चाहिये कि तवज्जह अपनी ऊपर की तरफ़ को लगावे, और बायें कान का दबाव हलका करे या बिल्कुल न दबावे, या अंगूठा कान में से निकाल लेवे, तो आहिस्ता २ आवाज़ दोनों आंखों के मध्य में ऊपर की तरफ़ से आती मालूम होगी, और फिर उसी में चित्त लगावे ॥

९—जो फिर भी आवाज़ बाईं तरफ़ से बदस्तूर जारी रहे, तो मुनासिब है कि उसी आसन से बैठे हुए सुमिरन और ध्यान करे, और ऊपर की तरफ़ दूसरे या तीसरे अस्थान पर मन और सुरत को जमावे, तो उम्मीद होती है कि थोड़े अरसे में, जो कोई ख़्याल दुनिया के नहीं उठेंगे, तो आवाज़ का घाट बदल जावेगा, यानी ऊपर की तरफ़ से दायें कान की तरफ़

से सुनाई देने लगेगी—और चाहिये कि बायें कान की तरफ़ से तवज्जह बिल्कुल हटा लेवे ॥

१०—और जो इस तौर से अभ्यास करने पर भी आवाज़ का घाट या मुक़ाम न बदले, तो बदस्तूर सुमिरन और ध्यान करके उठ खड़ा होवे, और जब तक बाईं तरफ़ से आवाज आती रहे तब तक हर रोज़ यही अभ्यास सुमिरन और ध्यान का भजन के आसन से बैठकर जारी रक्खे—यक़ीन है कि राधा-स्वामी दयाल की दया से चन्द रोज़ में हालत बदल जावेगी, यानी ऊपर की तरफ़ या दाईं तरफ़ से आवाज़ जारी हो जावेगी ॥

११—जब कभी भजन के वक़्त पिंडलियों में और पैरों में पटकन यानी दर्द इस क़दर पैदा होवे कि अभ्यासी बैठ न सके, तो चाहिये कि दोनों कुहनियां अपनी बैरागिन लकड़ी पर या चारपाई पर जमाकर दोज़ानूं यानी ऊंट की तरह पिंडलियों को दबाकर बैठे, तो यक़ीन है कि पटकन यानी दर्द का असर कम हो जावेगा और भजन और ध्यान में थोड़ा बहुत मन लग कर रस पावेगा—और जो इस तरह बैठने से भी आराम न मिले, तो चाहिये कि उठकर पांच सात

मिनट टहले यानी चिहल क़दमो करे, और जब दर्द दूर हो जावे तो फिर बदस्तूर अभ्यास करे ॥

और जो इस पर भी आराम से न बैठा जावे, तो उस वक्त भजन और ध्यान मौकूफ़ करके सिर्फ़ नाम का सुमिरन धुन के साथ थोड़ी देर करके उठ खड़ा होवे और दूसरे वक्त भजन और ध्यान करे ॥

१२–मालूम होवे कि यह दर्द पिंडलियों में इस सबब से पैदा होता है, कि सुरत की धार का सिमटाव और खिंचाव ऊपर की तरफ़ होता है–और जब इस तरह सुरत पिंडलियों में से खिंचती है, तब रगें उसके वास्ते तड़पती हैं, सो आहिस्ता २ उनको सुरत की धार के थोडी बहुत खिंचाव की बरदाश्त होती जावेगी और तब दर्द भी कम होता जावेगा, और कोई तकलीफ़ अभ्यास में नहीं मालूम होगी ॥

१३– कभी २ ऐसा होता है कि भजन का अभ्यास करते २ हाथ और बाहें और पिंडलियां और पैर सुन्न हो जाते हैं, यानी किसी क़दर बेकार हो जाते हैं, और कभी उंगलियां सुन्न होकर छूट जाती हैं, तो इस बात का कुछ अंदेशा नहीं है, उंगलियां छोड़कर जो भजन बने जाय तो जिस क़दर हो सके भजन करता रहे, या जो आवाज़ न सुनाई देवे तो उस

वक़्त ध्यान करता रहें, और जब भजन कर चुके तब थोड़ी देर हाथ और पैर फैला के ख़ाली बैठे, और फिर उठकर थोड़ी देर टहले, तो सब अंग बदस्तूर हो जावेंगे ॥

१४–हाथ पैर सुन्न हो जाने का सबब भी वही सुरत का खिंचाव है, और यह निशान है कि भजन दुरुस्ती के साथ बन रहा है, क्योंकि सच्चे भजन की महिमा यही है कि मन और सुरत का सिमटाव और खिंचाव नीचे की तरफ़ से ऊपर को हो जावे ॥

१५–कभी भजन या ध्यान की हालत में नींद का सा ग़लबा (ज़ोर) मालूम होकर अभ्यासी बेख़बर हो जाता है, इस बिघन का नाम लै है–यह हालत नींद की जो पैदा होती है इसका नाम तुन्द्रा है जो कि जाग्रत और सोने के बीच की हालत है, शुरू अभ्यास में ऐसी हालत कभी किसी की होती है, सो उसको मुनासिब है कि जब नींद यानी बेहोशी आती हुई मालूम होवे, तो उसी वक़्त उठकर दस बीस क़दम टहले, और जब सुस्ती दूर हो जावे तब फिर अभ्यास में बैठ जावे, और जब कभी ज्यादा सुस्ती मालूम होवे तब उठकर मुंह धोवे और फिर अभ्यास शुरू करे, और जो ज़रूरत होवे तो भजन के वक़्त नाम

का अंतरी सुमिरन भी करता जावे, इस तरह थोड़े अरसे में यह बिघन दूर हो जावेगा ॥

१६—सिवाय लै के तीन बिघन और भी हैं जो अभ्यासी को दरजे बदरजे सताते हैं, और उनके नाम यह हैं—विक्षेप-कषाय-रसास्वाद—इनके अर्थ और दूर करने की तरकीब नीचे लिखी जाती है ॥

१—विक्षेप भजन या ध्यान में एक दम चित्त के हट जाने या झटका लगने का नाम है, जैसे किसी ने आकर आवाज़ देकर जगा दिया या बदन को हिला दिया, या कोई मन की जबर तरंग ने एकाएक उठ कर भजन या ध्यान से अलहिदा कर दिया, या किसी क़िस्म का असर जैसा कीड़ा रेंगता है या कोई जानवर जैसे चींटी वग़ैरह काटती है बदन पर मालूम होवे और अभ्यासी उसके दूर करने को भजन और ध्यान एक दम छोड़ देवे—इसका जतन यह है कि अपने लोगों को समझा देवे कि वक़्त भजन और ध्यान के कोई उसको ज़ोर से न पुकारे, और जो ख़ास ज़रूरत होवे तो आहिस्ता आवाज़ देवे, या नरमी के साथ उसके पैरों को छू देवे तो अभ्यासी जाग पड़ेगा ॥

और मन की तरंग के साथ जहां तक मुमकिन होवे शामिल होकर भजन से जुदा न होवे, यानी ग़ाफ़िल

न हो जावे–इस क़िस्म के विघ्न कोई दिन अभ्यासी को पेश आते हैं, फिर जिस क़दर उसका अभ्यास पकता और बढ़ता जावेगा उसी क़दर यह विघन दूर होते जावेंगे यानी उसका असर अभ्यासी पर बहुत कम होवेगा ॥

२–कषाय, इस से यह मतलब है कि पिछले जनमों के ख़ियाल भजन के वक़्त उठें, कि जिनको अभ्यासी ने इस जनम में न देखा है न सुना है ॥

यह ख़ियाल गुनावन के तौर पर पैदा होते हैं, और बग़ैर थोड़ी देर अपना भोग दिये दूर नहीं होते, पर जो अभ्यासी बिरह और प्रेम अंग लेकर भजन करता है, या गुरुस्वरूप को अगुवा करके अभ्यास करता है उसको यह विघन कम सतावेंगे इसवास्ते मुनासिब है कि जब ऐसे ख्याल सन्मुख आवें उस वक़्त भजन के साथ ध्यान शामिल करें, तब कुछ अरसे में वे ख़ियाल दूर हो जावेंगे ॥

३–रसास्वाद, इससे यह मतलब है कि अभ्यासी भजन के वक़्त थोड़ा रस पाकर मगन और तृप्त हो जावे, और फिर ज्यादा अभ्यास में उस से न बैठा जावे या किसी क़दर ग़फ़लत आजावे ॥

इसके दूर करने का जतन यह है कि जब ऐसी

हालत होवे तो पांच चार मिनट के वास्ते भजन छोड़ कर और हाथ पैर फैला कर बैठ जावे या उठ कर दस बीस क़दम टहले, तो आहिस्ता २ यह बिघन दूर हो जावेगा ॥

१७–कभी ऐसा होता है कि भजन के वक़्त अभ्यासी की आंखों में या माथे में दर्द होने लगता है, तो ऐसे वक़्त चाहिये कि भजन और ध्यान छोड़ देवे, फिर दूसरे वक़्त तीन चार घंटे बाद करे, और जो मौक़ा होवे तो घंटे दो घंटे आराम कर लेवे, इस से वह दर्द दूर हो जावेगा ॥

यह दर्द इस सबब से पैदा होता है, कि अभ्यासी जोर देकर अपने मन और सुरत को ऊपर की तरफ़ खींचे, या अपनी आंखों की पुतलियों को ज़ोर से ऊपर की तरफ़ को ताने और चढ़ावे, सो यह बात मुनासिब नहीं है–अभ्यासी को चाहिये कि यह काम आहिस्तगी के साथ जिस क़दर कि बरदाश्त होती जावे करे, और ज्यादा जोर न लगावे, क्योंकि ज्यादा ज़ोर लगाने में ख़ून ऊपर की तरफ़ चढ़ता है, और रगों में मामूल से ज्यादा भर कर दर्द पैदा करता है ॥

१८–जिस अभ्यासी को कि भजन और ध्यान में रस और आनन्द उसकी चाह के मुवाफ़िक़ मिलता है

और दिन २ बढ़ता जाता है, उसको चाहिये कि जब अभ्यास में बैठे तब पहिले इरादा करले कि मैं इस वक्त एक घंटे या दो घंटे या तीन घंटे अभ्यास करूंगा, और उसके पीछे उठ कर फ़लाना काम करूंगा, इस तरह उसके मन और सुरत मुक़र्रर किये हुए वक़्त पर उतर आवेंगे, और उस वक़्त अभ्यास पूरा हो जावेगा ॥

१९--जिस अभ्यासी की ऐसी हालत होती है कि कभी शब्द प्रगट होता है और कोई दिन पीछे गुप्त हो जाता है, और फिर थोड़े दिन पीछे सुनाई देने लगता है तो यह कसर उसके पिछले या हाल के करमों और ख़ियालों की है, या यह कि अभ्यासी दस्तूर के मुवाफ़िक़ रोज़मर्रा अभ्यास नहीं करता है यानी कभी २ छोड़ देता है ॥

इसका इलाज यह है कि अभ्यासी अपने (१) ब्यौहार, और (२) खान पान, और (३) अपने मन और इन्द्रियों की चाल ढाल, और (४) अपनी समझ और ख़ियाल, और (५) अपनी प्रीत और प्रतीत को ग़ौर करके देखे और जांच करे कि उसमें किस क़दर कसर है, और (६) अपने संग कुसंग की भी एहतियात करे, क्योंकि संसारी और निंदकों के संग से अभ्यास में बिघन पड़ता है, और जो इन बातों में कसर और

नुक़्स नज़र आवे तो उसको प्रेमी अभ्यासियों का सतसंग या बानी का ग़ौर से पाठ करके दूर करे, और आइन्दा को अपने ब्यौहार और बर्ताव और खान पान और चाल ढाल और ख़्यालों को सम्हाले, और राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत और प्रतीत को बढ़ावे, और संशय और भरम को जिस क़दर जल्दी बने अपने मन से निकाल देवे, और कुछ वक़्त अभ्यास का भी बढ़ावे, और जो भजन में रस न आवे तो ध्यान ज़्यादा करे, और ध्यान में भी रस न आवे तो नाम का सुमिरन धुन के साथ करे—तब आहिस्ता २ यह विघन हट जावेगा और फिर बराबर भजन में शब्द सुनाई देने लगेगा और ध्यान में भी थोड़ा बहुत रस आवेगा॥

२०—मालूम होवे कि हर एक अभ्यासी की हालत चाहे मर्द होवे या औरत मुवाफ़िक़ उसके १ पिछले और हाल के करमों के, और भी मुवाफ़िक़ उसके २ शौक़ यानी बिरह और प्रेम के, और भी मुवाफ़िक़ उसकी ३ प्रीत और प्रतीत के दरजे के जुदा २ है, और उसी मुवाफ़िक़ उसको अभ्यास में रस मिलता है, और मन भजन ध्यान और सुमिरन में लगता है—इस वास्ते हर एक को चाहिये कि अपनी हालत की

निरख परख करता रहे, और जिस बात में कसर देखे उसके दूर करने के लिये सचौटी के साथ जतन करता रहे, और दया और मेहर के प्राप्ती के वास्ते और क़सूरों की माफ़ी के लिये जब तब प्रार्थना भी करता रहे, और आइन्दा को जिस क़दर बने एह-तियात और होशियारी भी करता रहे, तो राधा-स्वामी दयाल की दया से वह कसरें आहिस्ता २ दूर होती जावेंगी, और क़सूर भी कम बन पड़ेंगे, और उसी क़दर अभ्यास में ठहराव और रस बढता जावेगा, और एक दिन सफ़ाई होकर निरमल आनन्द प्राप्त होगा, और अपनी तरक़्क़ी दिन २ आप मालम होती जावेगी ॥

२१–जो किसी को ध्यान में स्वरूप का दर्शन न होवे या कभी २ होवे, तो इस से अपने मन में निरास न होवे, या यह ख़ियाल न करे कि मेरे अभ्यास में भारी कसर है–उसको चाहिये कि अस्थान पर सुरत और मन को जमा कर स्वरूप का ख़ियाल करता रहे, तो आहिस्ता २ मन और सुरत उस अस्थान पर ठहरने लगेंगे और रस भी आवेगा–जो ठहराव नहीं होता या थोड़ा बहुत रस नहीं मिलता तो जानना चाहिये कि शौक़ और प्रेम की कसर है,

क्योंकि जो स्वरूप में प्यार होगा तो ज़रूर मन और सुरत की धार उसका ख़याल करते ही अस्थान की तरफ़ चढ़ेगी, और ऊंचे चढ़ने में ज़रूर किसी क़दर आनंद मिलेगा--इस वास्ते अभ्यासी को मुनासिब है कि प्रेम और शौक़ के साथ ध्यान करे, और जो प्रेम की कसर है तो सतगुरु राधास्वामी दयाल की महिमा और उनकी दया को दिल में याद करके थोड़ा बहुत प्रेम पैदा करे--इसी तरह करते २ ध्यान में रस मिलने लगेगा, और स्वरूप का दर्शन भी कभी २ अभ्यास के समय होता रहेगा, और नहीं तो कभी २ सुपने में ज़रूर दर्शन मिलेगा, और उस दर्शन को सच्चा और असली और दया और मेहर का निशान समझना चाहिये--ऐसे दर्शन के मिलने से अभ्यासी की प्रीत और प्रतीत बढ़नी चाहिये ॥

२२--अभ्यासी को चाहिये कि इसी तरह जैसा ऊपर लिखा है, आहिस्ता २ अपना ध्यान बढ़ाता जावे, यानी एक अस्थान पर वर्ष दो वर्ष या कम और ज़्यादा अभ्यास करके इसी तरह पर दूसरे अस्थान पर ध्यान लगावे, और फिर इसी तरह अस्थान २ पर ध्यान का अभ्यास करता हुआ दसवें द्वार या सत्तलोक तक अपनी सुरत को पहुंचा कर

ठहरावे--तो इस तरह इतने मुक़ाम तक जीते जी उसका रास्ता साफ़ हो जावेगा, और सुरत सूक्ष्म अंग से वहां पहुंच कर ऊंचे देश का रस और आनंद पावेगी ॥

२३–प्रेमी अभ्यासी जो चाहे तो शुरू ही से एक २ अस्थान पर थोड़ी २ देर अपने मन और सुरत को ठहरा कर सत्तलोक तक बराबर हर रोज़ ध्यान कर सकता है, और जब पोथी में से भेद और प्रेम के शब्दों का पाठ करे या सुने, तो उस वक़्त जैसे २ उन शब्दों में अस्थानों का ज़िकर आता जावे, उसी मुवाफ़िक़ अस्थान २ पर अपने मन और सुरत से स्वरूप का ध्यान करे–तो उसको पाठ का रस भी बहुत आवेगा, और उसके ध्यान का अभ्यास भी हर एक अस्थान पर जल्दी पकता और बढ़ता जावेगा यानी एक दम सत्तलोक तक के ध्यान का रास्ता जारी हो जावेगा, और जो ध्यान के साथ (अभ्यास के समय) नाम का सुमिरन भी करता जावेगा तो और कोई ख़ियाल नहीं उठेंगे और अभ्यास में विघन नहीं डालेंगे, पर इस तरह का अभ्यास बग़ैर गहरे शौक़ और प्रेम के दुरुस्ती और आसानी से नहीं बन पड़ेगा ॥

बचन ४४

राधास्वामी मत की सहज जुगत का सहज अभ्यास

१-राधास्वामी मत में जो जुगत (जैसे सुमिरन ध्यान और भजन) बताई गई है वह जुगत भी सहज और उसका अभ्यास भी सहज है, यानी सिर्फ़ तवज्जह का शौक़ के साथ बदलना यही अभ्यास है ॥

जैसे सब जीवों की तवज्जह संसार और उसके पदार्थों की तरफ़ इन्द्रियों द्वारे बाहर की तरफ़ को हो रही है, इसी तरह निज घर यानी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के धाम का भेद लेकर अपने घट में ऊपर की तरफ़ शौक़ के साथ तवज्जह करना यही अभ्यास है ॥

२-पहले प्रेमपत्रों में बयान हो चुका है कि कुल्ल रचना धारों की है, और यह धारें बहुत सी तो निहायत सूक्ष्म हैं कि देखने और छूने में नहीं आती हैं, जैसे दृष्टी की धार आवाज़ की धार और खुशबू की धार वग़ैरह—और निहायत अस्थूल रचना में धारें अर्क़ रूप और ख़ून रूप और तार २ और रग २ हो गई हैं—और यह हाल देह में अंग २ और उनके मास, और दरख़्तों में डाल २ और उसकी चमड़ी यानी

छाल में साफ़ दिखलाई देता है–हर एक डाली और उसके तार और बदन में हर एक रग और नली बतौर नल के है, यानी अन्दर में पोले है कि जिनमें हो कर सूक्ष्म धारें जारी रहती है ॥

३–जब मन में कोई तरंग उठती है यानी चाह पैदा होती है तो पहिले हिलोर अन्तर में होती है, और फिर वह तरंग रूप खड़ी हो कर जिस इन्द्री द्वारे उस चाह की काररवाई होनी चाहिये उसी इन्द्री की तरफ़ धार रूप हो कर चलती है, और इन्द्री के अस्थान से जिस काम या पदार्थ की चाह है वह धार बाहर निकल कर उसी काम या पदार्थ में लग जाती है–इसी तरह से कुल्ल काररवाई देह और दुनिया के कामों क धारों के वसीले से जारी है–देह के अन्तरी कामों के वास्ते वह काम करने वाली धारें देह के अंग २ मे फैलती है, और बाहर के कामों में वे धारें इन्द्री द्वारों से बाहर फैलती है--यह सब धारें खर्च में लिखी जाती हैं, क्योंकि कोई भी इन में से उलट कर अपने भंडार में नहीं आती हैं ॥

४--जो कोई कहे कि जो धारें इन्द्रियों के द्वारे खर्च होती हैं वह तो वापस नहीं आती है, पर अनेक धारें बाहर से इन्द्रियों के द्वारे अन्दर में दाखिल होती

हैं, तो यह बात सच्च है–पर मालूम होवे कि जिस क़दर धारें बाहर से अन्दर में आती हैं, वह बनिस्बत उन धारों के जो बाहर निकलती रहती हैं, बहुत ओछी और अस्थूल और चैतन्यता में बहुत कम ताक़त होती है–और जो कुछ कि ख़र्च हो रहा है वह उस का पूरा २ एवज़ नहीं दे सक्ती हैं, क्योंकि वे सब धारें बहुत करके जड़ पदार्थों या कम दरजे के चेतन्य से आती हैं–और जो धारें कि बाहर के तत्तों से आती हैं वह अलबत्ता अस्थूल देह के मसाले को किसी क़दर मददगार हैं, पर सुरत चेतन्य को इन में से किसी धार का भी फ़ायदा नहीं पहुंचता है ॥

और तन मन और इन्द्रियों को भी इन धारों से बहुत कम मदद मिलती है--अलबत्ता प्राण को बाहर की ताज़ा हवा बहुत मदद देती है, यानी उसकी कसाफ़त को दूर करके ताज़गी देती है, और उसका असर किसी क़दर मन तक भी पहुंचता है। यहां खान पान का कुछ ज़िकर नहीं है ॥

५--इस क़दर यहां पर बयान करना ज़रूर है कि बहुत से बारीक और सोच विचार और अक़ल के कामों में सुरत की धार को ज्यादा मदद इन्द्री द्वारों पर आती है--क्योंकि बग़ैर सुरत की धार के कोई आदमी

कोई काम और ख़ास करके अक़्ल और सोच बिचार के काम नहीं कर सकता है और बाहर से जो धारें अंदर आती हैं उन में सुरत की धार कोई २ और बाक़ी सब सामान्य चेतन्य की धारें है॥

सुरत की कोई २ धार से मतलब यह है कि जब यह आदमी अपने से विशेष चेतन्य यानी ज़्यादा समझवार से मदद लेवे॥

और परमार्थ में सन्त सतगुरु और साध महा-चेतन्य पुरुष हैं, उनसे जो मन और सुरत को ताकत मिलती है उसका तो कुछ बयान नहीं हो सकता--उसका हाल परमार्थ के सच्चे शौक़वाले जिनको प्रेमी और भक्त जन कहते हैं, ख़ूब जानते हैं कि सतसंग में बैठ कर दर्शन और बचन में किस क़दर रस और आनन्द प्राप्त होता है॥

६--अब समझना चाहिये कि जिस तरफ ज़िस आदमी की तवज्जह होती है उसी तरफ़ को उसके मन से धार प्रगट हो कर रवां होती है, और ज़िस क़दर उसका शौक़ तेज़ होता है उसी क़दर ताक़त-वर और मजबूत धार जारी हो कर उसकी चाह के पूरा करने के लिये जो जतन कि मुनासिब और ज़रूर है करती है।

७–इसी तरह जब किसी के मन में परमार्थ की चाह शौक़ के साथ पैदा होगी, तो जो उसको राधास्वामी मत के मुवाफ़िक़ भेद अपने निज घर का और महिमा सच्चे और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की, और हाल रास्ते और मंज़िलों का और जुगत चलने की सन्त सतगुरु या साधगुरू या उनके सच्चे प्रेमी सतसंगी से मालूम हुई है, तो उसकी चाह के साथ बदस्तूर धार प्रगट हो कर निज घट में ऊपर की तरफ़ ज़रूर रवां होगी–और जिस मंज़िल का शुरू में उसने ठेका मुक़र्रर किया है वहां तक थोड़ी बहुत ज़रूर पहुंचेगी, और ऊंचे देश की चढ़ाई का थोड़ा बहुत ज़रूर रस आवेगा, यानी हलकापन और सीतलता थोड़ी बहुत मालूम पड़ेगी–पर शर्त यह है कि उस वक़्त दूसरी धार न उठे यानी देह या दुनिया की तरफ़ का कोई ख़याल मन में न आवे, नहीं तो जो धार ऊपर की तरफ़ को जारी हुई है वह गिर पड़ेगी और नई धार उस ख़याल के मुवाफ़िक़ नीचे या बाहर की तरफ़ को जारी हो जावेगी, और वह परमार्थी रस और आनन्द फ़ौरन जाता रहेगा ॥

८–अब मालूम होना चाहिये कि राधास्वामी मत का अभ्यास किस क़दर सहज है, यानी सिर्फ़ तवज्जह और उसकी तरफ़ का बदलना ॥

सब आदमी अपनी २ चाह के मुवाफ़िक़ जो काम करना चाहते है उसको तवज्जह के साथ करते हैं, पर दुनिया के कामों में उनके मन और सुरत की धार बाहर की तरफ़ बहती है और ख़र्च में दाख़िल होती है–जो वहां आदमी परमार्थ की महिमा और ज़रूरत उसके हासिल करने की समझ कर और उसका थोड़ा बहुत यक़ीन लाकर शौक़ के साथ उसकी चाह उठावे तो तवज्जह उनकी राधास्वामी मत के भेद के मुवाफ़िक़ घर में ऊपर की तरफ़ बदलेगी, और बदस्तूर मन और सुरत की धार उस तरफ़ उठकर रवां होगी–उस धार के उठने और चढने में जरूर सीतलता और आराम मिलेगा और दिन २ जिस कदर ऊंचे चढ़ाई होती जावेगी रस और आनन्द बढता जावेगा, और एक दिन ऐसा अभ्यासी अपने निज घर में पहुंच कर परम आनन्द को प्राप्त होकर अमर अजर हो जावेगा, और अपने जीते जी अपना सच्चा उद्धार आहिस्ता २ होता हुआ आप देखता जावेगा ॥

९–फिर दुनिया के कामों और उनकी चाहों और ख़्यालों में तवज्जह करना स्वार्थ कहलाता है, और इसका फल देह के संग दुख सुख भोगना और बार-म्बार जनम मरन की तकलीफ़ उठाना है--और पर-

मार्थ की चाह पैदा करके घट में अपने घर की तरफ़ तवज्जह के साथ धार का जारी करना परमार्थ कहलाता है, और इसका फल देह और दुनिया के दुख सुख से दिन २ बचाव होता जाना और जनम मरन के चक्कर से बिल्कुल छूट जाना, और दिन २ ऊंचे देश का रस और आनन्द ज्यादा से ज्यादा पाते हुए अपने सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुंच कर अमर आनन्द को प्राप्त होना है ।

१०—परमार्थ का काम कोई नई बात नहीं है, जैसे दुनिया के कामों में बाहर की तरफ़ तवज्जह की जाती है ऐसे ही अपने जीव कल्यान के वास्ते अन्तर में तवज्जह करना है ॥

तवज्जह के साथ काम करना हर कोई जानता है, कुछ सिखलाने की जरूरत नहीं है--सिर्फ़ भेद लेकर शौक़ के साथ अन्तर में तवज्जह करना इसी क़दर काम है कि जिस से हमेशा का आनन्द मिलना और हमेशा को दुक्खों से बचना मुमकिन है ॥

११—जो कठिनता और मुशकिल इस काम में यानी परमार्थी अभ्यास में मालूम होती है, वह कमी यक़ीन और कमी शौक़ और कमज़ोरी चाह और कमी तवज्जह के सबब से पेश आती है, या यह कि पुरानी

आदत के मुवाफ़िक़ परमार्थी काम के वक्त दुनिया के ख्याल ले बैठे तो अलबत्ता पूरा २ रस नहीं मिलेगा, और शौक़ और चाह भी और उसके साथ तवज्जह भी हलकी रहेगी–जैसे कि दुनिया के जिन कामों में लाग नहीं होती या कम होती है तो वह जैसा चाहिये दुरुस्त नहीं बनते. ऐसेही जो परमार्थ में भी चाह और तवज्जह कम होगी तो धार कमज़ोर और दुबली उठेगी और बीच में दुनिया के ख्यालों के सबब से गिर २ पड़ेगी–तो परमार्थी काम भी जैसा चाहिये दुरुस्त नहीं बन पड़ेगा, यानी पूरा २ रस नहीं आवेगा और शौक़ नहीं बढ़ेगा।

१२–इस वास्ते परमार्थी जीवों को चाहिये कि अपनी तवज्जह के बदलने में होशियारी और एहतियात जिस क़दर बने वक्त अभ्यास के करते रहे, यानी परमार्थी काम के साथ जहां तक बने संसारी काम न मिलावें--और संत सतगुरु के सतसंग और बानी बचन से मदद लेकर अपना अभ्यास जिस क़दर हो सके दुरुस्ती के साथ करते रहें, और सच्चे माता पिता कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल की सरन दृढ़ करें तो उनकी मेहर और दया और उनकी मिहनत और कोशिश से दिन २ काम बनता जावेगा, और प्रीत

और प्रतीत चरनों में बढ़ती जावेगी, और फिर काम भी बहुत आसान हो जावेगा—क्योंकि जब तक प्रीत और प्रतीत मामूली दरजे की है जब ही तक दिक़्क़त और कठिनता अभ्यास में मालूम होती है, और जब यह दोनों बढ़ने लगीं तब दिन २ अभ्यास में आसानी होती जावेगी, और रस और आनन्द भी बढ़ता जावेगा, और एक दिन काम पूरा हो जावेगा॥

बचन ४५

सवालात एक सतसंगी की तरफ़ से और उनके जवाबात

१—सवाल। बालक गर्भ के अन्दर स्वांस लेता है या नहीं—जो लेता है तो कैसे उसकी गुज़रान होती है—और जो नहीं लेता है तो कहां और किस हालत में रहता है॥

जवाब। बालक गर्भ में स्वांस नहीं लेता है, और सहसदलकंवल के अस्थान पर उसका जीव चेतन्य समाधी में रहता है, यानी जोत का दर्शन करता है और उस मुक़ाम का शब्द सुनता है॥

२—सवाल। बाज़े कहते हैं कि आठवें महीने में बालक को गर्भ में भूख और प्यास लगती है, और

ग़ल्ला का अर्क़ उसे खाने को मिलता है, जो ऐसा होता है तो मल भी पैदा होता होगा, यह बात सहीह है या क्या ॥

जवाब-जब बालक का शरीर गर्भ में बनता जाता है तो उसका मसाला माता का ख़ून है, और जब उसकी देह पूरी बन जाती है तब उसको माता की ग़िज़ा या अहार का खुलासा जो अर्क़ रूप होता है, उसकी देह के बढ़ाव और पुष्ट करने के वास्ते उस नल के रास्ते जो नाफ़ से लगा होता है, मेदे में पहुंचता है, इस अर्क़ के हज़म करने में मल बहुत ख़फ़ीफ़ पैदा होता है। और वह उस नाल में जो मेदे से गुदा चक्र तक आई है जमा होता जाता है, बल्कि वक़्त पैदा होने बालक के दाई थोड़ा मल उङ्गली से निकाल देती है ॥

३-सवाल-कोई २ कहते हैं कि बालक को गर्भ में पिछले जन्मों की याद रहती है, लेकिन पैदा होने के वक़्त वह याद भूल जाती है, यह बात किस क़दर सहीह है और भूल क्योंकर होती है ॥

जवाब-जो कि बालक के जीव की बैठक गर्भ में सहसदलकंवल के मुक़ाम पर होती है, वहां उसको सब जनमों का हाल आईना के मुवाफ़िक़ रोशन

नज़र आता है, उस वक़्त वह पक्का इरादा करता है, कि सिवाय मालिक के चरनों की भक्ती के दूसरा काम नहीं करूंगा–पर जब जीव यानी सुरत उसकी वक़्त पैदाइश के देह में नीचे के मुक़ाम पर उतर आती है वहां तमोगुण के सबब से अन्धकार छाया रहता है, और वह सब याद बालक को भूल जाती है, और दुनिया में आकर जैसा उसके पिछले करमों के मुवाफ़िक़ सङ्ग मिलता है और जैसा मन का मसाला वह संग लाता है, उसी मुवाफ़िक़ उसका स्वभाव और आदत होती जाती है, और वैसी ही काररवाई करता है ॥

बचन ४६

जो सवाल कि सफ़ा ३६२ प्रेमपत्र में लिखे हैं उनके जवाब .खुलासा तौर पर वास्ते समझाने सतसंगियों के लिखे जाते हैं

१–सवाल–यह दुःख सुख की रचना किसने करी और क्यों करी और उसका क्या फ़ायदा है ॥

जवाब–यह रचना काल पुरुष ने क़री, उसके ऐसी चाह थी कि मैं भी सत्तलोक के मुवाफ़िक़ दूसरी रचना करूँ और उसका राज भोगूं–सो सत्त पुरुष से आज्ञा मांग कर नीचे के देश में जहां कि चेतन्य

निर्मल और मलीन माया के साथ मिला हुआ था आन कर तीन लोक की रचना करी, और यहां माया यानी तमोगुण को मिलौनी के सबब से (जिसके मसाले से जीवों की देह तैयार हुई है) दुःख सुख अवश्य भोगना पड़ता है, और सुकर्म और कुकर्म जीवों से बनते है और उसी के मुवाफ़िक़ फल मिलता है— क्योंकि पिंड में बैठ कर जीव करम करने से बाज़ नहीं रह सकता और अपनी २ चाह और ज़रूरत के मुवा-फ़िक़ रजोगुण और तमोगुण के चक्र में करमों के करने में संग और सोहबत के असर से भलाई और बुराई का फ़र्क़ कम करता है॥

जो कोई कहे कि तीन गुण कैसे पैदा हुए तो जवाब यह है कि ऊपर से जो चेतन्य की धार आई और वह त्रिकुटी के स्थान पर माया से मिली तब तीन धारें हो गईं यानी चेतन्य की धार सतोगुण, चेतन्य और माया की मिलौनी की धार रजोगुण, और माया की धार तमोगुण—और मालूम होवे कि तीनों धारों में इस मुक़ाम पर और उसके नीचे थोड़ी बहुत माया की मिलौनी है, लेकिन सतोगुण में चेतन्य प्रधान और रजोगुण में दोनों का बल बराबर है और तमोगुण में माया प्रधान है—जो जीव सतोगुणी

चक्र में पैदा हुए वह सन्तोषी और शीलवान और परमार्थी थे, और जो रजोगुणी चक्र में पैदा हुए वे भोग बिलास और ज़ाहिरी नुमाइश और मान बड़ाई के चाहनेवाले और समझ बूझ और सफ़ाई के साथ काररवाई करने वाले और ताक़त वाले थोड़ा परमार्थी अंग लिये हुए थे, और जो तमोगुणी चक्र में पैदा हुए वे किसी क़दर कम समझ और सुस्त और आलसी और हिरसी और परमार्थ की तरफ़ से बेख़बर थे, और इन में यह भी स्वभाव ज़बर रहा कि आप तो मेहनत और तवज्जह और काररवाई कम करें और दूसरे की मेहनत और कोशिश से जो फ़ायदा हासिल होवे उसमें शरीक होने को तैयार, इस सबब से इन की तरफ़ से ज़्यादती के काम ज़ाहिर हुए—और इन की ऐसी हालत देख कर दूसरी तरफ़ से भी बदले की काररवाई होने लगी—इसी तरह रफ़ा २ दुनिया में सुकर्म और कुकर्म दोनों प्रगट हुए, और उन ही के मुवाफ़िक़ जीवों को फल मिलने लगा, और फिर ऐसे करमों का सिलसिला आइन्दा के जनमों में भी जारी हो गया ॥

इस रचना के होने में यह फ़ायदा हुआ कि जो चेतन्य इस देश में माया से ढका हुआ अचेत पड़ा था,

उसको सत्तलोक से जो धारें आईं, उन्होंने तहाँ से जुदा करके और उसी तह यानी माया के मसाले का गिलाफ़ जिसको देह कहना चाहिये तैयार करके उसमें बिठाया, और उसकी चेतन्य शक्ती को जो सोई पड़ी थी जगाकर उससे काम लेना शुरू किया—इस तरह जीवों को अपने निज भंडार यानी कुल्ल मालिक की कुदरत का तमाशा देखने और जो २ सामान उसने पैदा किया उसके भोगने और रस लेने और फिर अपने मालिक को पहिचान करने और उसका दर्शन हासिल करने का मौक़ा मिला, यानी सतगुरु के वसीले से नीचे देश से ऊंचे में जाकर वहां के महाआनन्द को प्राप्त होने का मौक़ा और सामान हासिल हुआ—जो काल पुरुष और माया परघट न होते तो सत्तलोक के नीचे २ त्रिलोकी की रचना भी कभी नहीं होती, और यहां का चेतन्य सदा अचेत रहता ॥

८—सवाल—जो संसार में भोग पैदा किये है तो वह ज़रूर भोगने के वास्ते पैदा हुए हैं, फिर उन भोगों के हासिल करने और भोगने की इल्लत में जीवों को क्यो सजा या दंड दिया जाता है, यानी नीची ऊंची जोनों में क्यो भरमाया जाता है ॥

जवाब—जो भोग इस रचना में पैदा हुए हैं वह

सच्चे मालिक ने प्रसन्न होकर अपने प्यारे भक्त और प्रेमी जन के लिये काल पुर्ष और माया के हाथ से पैदा कराये—वे उन भोगों को प्रथम अपने सच्चे मालिक के सन्मुख (जब संत सतगुरु रूप धार कर जगत में प्रगट होवें) पेश करते हैं या उसके प्रेमी और भक्त जन के निमित्त तैयार करते हैं और फिर आप भी उन्हीं भोगों को प्रसादी कराकर भोगते हैं और उनका रस लेंते हैं, और उनको इस भक्ती और भाव के एवज़ में दया मिलती है और प्रेम दिन २ बढ़ता है और सच्चे मालिक के दिन २ ज्यादा प्यारे होते जाते हैं ॥

ऐसे प्रेमियों की बदौलत संसारी जीव भी उन भोगों का भोग करते हैं, पर वे उनको अपने और अपने कुटुम्बियो के निमित्त तैयार करके निहायत आशक्ती के साथ उनका रस लेते हैं, और दूसरों को उस में शरीक करना नहीं चाहते, और एक दूसरे की आपस में उन्हीं भोगों के सबब से ईर्षा करते हैं, और बिरोध पैदा करके कभी २ आपस में एक दूसरे पर ज्यादती करते हैं, और ऐसी ज़बर पकड़ उनको इन भोगों में हो जाती है कि उन्हीं को अपना सुखदाई मानते हैं, और जो कोई उनको उन भोगों से छुड़ावे

उसको वैरी के समान देखते हैं, और उन भोगों की प्राप्ती के सबब से निहायत दरजे का अहंकार और ग़फ़लत और बेपरवाही और सख़्ती उनके मन में बढ़ती जाती है, कि जिसके सबब से वे अपने सच्चे मालिक और निज घर को भूलकर दिन २ उससे दूर होते जाते हैं, और नीची ऊंची जोनों में अपनी करनी का फल भोगते हैं ॥

जो वे भी होशियारी और एहतियात के साथ प्रेमी जन के मुवाफ़िक़ उन भोगों को सच्चे मालिक और उसके भक्तों को अर्पण करके और प्रसादी करा के और आपस में बांटकर भोगते, तो बजाय दूरी और दुख के मालिक की नज़दीकी और विशेष दया हासिल करके महासुख को प्राप्त होते ॥

ज़ाहिर है कि कुल्ल भोग मन और इन्द्रियों के जड़ हैं, और जिस किसी की उनमें आशक्ती और बासना रही वह दिन २ उनके संग से मनुष्य की निस्बत कम चेतन्य और ज्यादा कम चेतन्य और बहुत ही ज्यादा कम चेतन्य जोनों में उतर जावेगा—इस सबब से भोगी और रागी जीव अपनी नादानी और मन हठ करके आपही अपना नुक़सान करते हैं ॥

३-सवाल-ऐसी रचना कि इसमें कोई दुखी और कोई सुखी और कोई अमीर और कोई ग़रीब और कोई मुफ़लिस है, किस वास्ते और किस क़ायदे से की गई, और सब एक से क्यों नहीं पैदा किये ॥

जवाब-दयाल देश यानी निरमल चेतन्य देश में जिसकी हद्द सत्तलोक तक है, और जहां काल और माया का दख़ल और गुज़र नहीं है, हर एक लोक में सब रचना एकसी और सब हंस एक से रूपवाले और बराबर आनन्द लेनेवाले हैं, और माया की हद्द में जिसमें ब्रह्मांड और पिंड की रचना शामिल है, दरजे बदरजे जैसे कुछ माया निरमल और सूक्ष्म और अस्थूल और मलीन होती गई वैसेही रचना में कमी बेशी और फ़र्क़ होता गया, यानी निरमल और सूक्ष्म माया के देश में सुख विशेष और दुख बहुत कम और अस्थूल और मलीन माया के देश में सुख कम और दुख ज्यादा होता गया, और सतोगुणी जीव विशेष सुखी और रजोगुणी उनसे कम और तमो-गुणी इन से भी कम सुखी यानी ज्यादा दुखी होते गये, और करमों के सबब करके यह सुख दुख की हालत बढ़ती गई, और आपस में दरजा यानी फ़र्क़ होता गया ॥

यहां के माया के मसाले का यही स्वभाव है, और इस में भी यहां की रचना पर दया है, कि जो जीव ज्यादा तमोगुणी हैं यानी अंधकार में पड़े हैं, उनको ग़फ़लत और नादानी और सुस्ती किसी क़दर दुख पाकर दूर होती है, और आइन्दा को या तो ज्यादा सुख पाने के अधिकारी बनाये जाते हैं या अपनी करनी के मुवाफ़िक़ बिशेष दुखी होने से उनका किसी क़दर बचाव हो जाता है ॥

और मालूम होवे कि तमोगुण की ज्यादती के सबब से बहुत से जीव इस रचना में हरचंद दुखी भी हैं, पर जो उनको उस दुख की हालत के दूर करने और विशेष सुख प्राप्त होने का जतन बताया जावे, तो इस क़दर ग़फ़लत और नादानी उन पर छाई हुई है कि वह उसको नहीं मानते, और उसके मुवाफ़िक़ काररवाई करना नहीं चाहते, और अपनी मौजूदा हालत में ही रहना पसंद करते हैं ॥

४-सवाल-मालिक जो रहीम और दयाल है तो ऐसी सख़्ती और तकलीफ़ जैसे अकाल और मरी वग़ैरह जीवों पर क्यों रवा रखता है ॥

जवाब--सच्चा मालिक सदा दयाल है, और तीन लोक की रचना की काररवाई सुपुर्द कालपुर्ष यानी

ब्रह्म के है, वह जैसी जिसकी करनी होती है उसी मुवाफ़िक़ उसके साथ बरताव करता है ॥

जब जीव कसरत से निपट संसारी भाव में बरताव करके और मालिक को भूलकर अपनी तमाम तवज्जह भोग बिलास और देह के पालन पोषन में ख़र्च करते है, और इस सबब से नीचे की जोनों में कसरत से जीव उतरते जाते हैं, तब वह मालिक दया करके अकाल डालता है--उस वक़्त सब जीवों की हालत मय जानवरों के भूखे प्यासे और चिन्ता और दुख में परेशान और व्याकुल होकर बदलती है, यानी जिस रीति से कि तन मन और इन्द्रियां सिथिल और निश्चल होकर ऊपर की तरफ़ को तवज्जह करें या उनका ऊपर की तरफ़ को खिंचाव होवे और थोड़ी बहुत सुरत की ताक़त जागे, उस रीति में यह सब जीव लाचार होकर आप ही बर्तते हैं--और इस तरह सब की सुरत यानी रूहों का घाट बदलता है यानी नीचे से ऊंचे को चढ़ाई होती है, और सिल-सिलेवार सब जीवों को इस तरह दरजे बदरजे फ़ायदा पहुंचता है, यानी ज़्यादा सुख का अस्थान पाते हैं ॥

इसमें ऐन दया ही दया है--सिर्फ़ इस क़दर फ़र्क़ है कि जो जीव सोच और समझ कर और बचन मान

कर दुरुस्ती से बरतावा संसार में करते हैं, उनका दरजा सहज में चढ़ता जाता है, और जो भूल और ग़फ़लत और नादानी और वेपरवाही और वेख़ौफ़ी से भोगों में लिपट कर और उन में निहायत आशक्त होकर कारवाई करते हैं, वह उसी क़दर दुख और तकलीफ़ पाकर सम्हलते है ॥

इसी तरह बीमारी और मरी का भी हाल समझना चाहिये । जब ओछी करनी वाले जीव संयोग से बहुत जमा हो जाते हैं, तब वे किसी आम और सख़्त बीमारी में मुब्तला हो (लिपट) कर एक ही समय में क़रीब २ देह छोड़ते हैं, और ऐसी एकाएक और जल्दी २ मौत होने से बाक़ी जीव घबराकर और अपनी २ मौत का ख़ौफ़ खाकर थोड़ा बहुत मालिक को याद करते हैं, और अपना चाल और चलन किसी क़दर दुरुस्त करते हैं, और बाज़े मालिक की हस्ती का भी यक़ीन मन में लाकर पहले की निस्बत उनके व्यौहार और बरताव की किसी कदर सम्हाल होती जाती है, और घाट यानी दरजा किसी क़दर बदल जाता है ॥

और मालूम होवे कि अकाल और बीमारी और मरी के समय में बहुत से जीवों से परउपकार के

थोड़े बहुत अच्छे काम बन आते हैं, कि जिसके सबब से वे बिशेष सुख पाने के अधिकारी हो जाते हैं–और बहुतेरे जीव ख़ौफ़ खाकर और दुनिया की बेसबाती (नाशमानता) का हाल देखकर कोई २ परमार्थ के खोज में और कोई २ उसकी कमाई में लगकर अपनी नरदेही सुफल करते हैं और ऊंचा दरजा पाते हैं ॥

५–सवाल–जो मालिक सर्व समरत्थ है तो आपही हमारे मन को फेरकर हम से परमार्थ की करनी क्यों नहीं करा लेवे ॥

जवाब–मालूम होवे कि असल में बिना मालिक के हुक्म या मौज या मर्ज़ी के कोई काम नहीं होता है–जो दयापात्र और अधिकारी जीव हैं वह अपनी रोज़मर्रा की हालत और दुनिया के हाल को देख कर, आपही अपने मन में सोच बिचार करके अच्छे काम और परमार्थ के खोज और कमाई में लग जाते हैं, और उनको मेहर और दया से मालिक बराबर तरक़्क़ी के वास्ते मदद देता जाता है। ऐसे लोग कुदरती किताब से बहुत करके हिदायत लेते हैं, और फिर उनको मौज और दया से निज भेद और सच्चे मालिक और उससे मिलने की जुगत के बतानेवाले सतगुरु भी मिल जाते हैं, और उनका कारज दिन २ बनता जाता है ॥

और जो जीव कि आप से नहीं चेतते, उनको मालिक अपनी मौज से चेते हुए जीवों की मारफ़त समझौती देकर होशियार करता है, और उनका भी कारज आहिस्ता २ बनना शुरू हो जाता है ॥

पर जो जीव कि आप से न चेतें यानी आंख खोल कर अपने और जगत के हाल को न देखें, और उस से अपनी बेहतरी के वास्ते नतीजा और तदबीर न निकालें, और जो उनको दूसरे लोग समझावें और चितावें तो भी समझ बूझ नहीं लाते और होशियार नहीं होते यानी संसार के कारोबार और भोग बिलास में हैवानों की तरह से लिपटे रहना पसंद करते हैं, तो ऐसे जीवों के सम्हाल और तरक़्क़ी के वास्ते वह मालिक समरत्थ दयाल आप तदबीर करता है, यानी जब ऐसे जीवों की कसरत हो जाती है तब जैसा कि चौथे सवाल के जवाब में लिखा है, अकाल और मरी और बीमारी भेज कर उन अचेत और ग़ाफ़िल जीवों को सम्हालता है, और जो काम कि परमार्थी जीव अपनी ख़ुशी और उमंग के साथ करके मालिक की दया और बख़्शिश हासिल करते हैं, वही काम थोड़े और बहुत इन ग़ाफ़िल जीवों से करा लेता है, जैसे कम खाना और जागरन करना, और, दुनिया

और कुटुम्ब परिवार का मोह कम करना और भोगों में कम बर्तना, और मान और अहंकार को तोड़ना, और दीनता और ग़रीबी की चाल में बर्तना, और मालिक और मौत को याद करना, और दुनिया और अपनी देह और कुटुम्ब और सामान से किसी क़दर चित्त में बैराग रखना या उदासीन रहना वग़ैरह ॥

अब जीवों को इख़्तियार है कि अपने २ भाग और अधिकार या समझ और विचार के मुवाफ़िक़ अपने असली और हमेशा का सुख हासिल करने के लिये संत सतगुरु के बचन के मुवाफ़िक़ काररवाई करें या न करें, क्योंकि जो वे अब और आप से चेत कर अपने जीव के कल्यान के निमित्त कुछ थोड़ी बहुत तवज्जह और मेहनत करेंगे तो उनके हक़्क़ में हर तरह से बेहतर होगा, यानी सुख और आनंद के साथ परमार्थ की दौलत आहिस्ता २ हासिल करेंगे, और जो अपने मान और अहंकार और नादानी के ग़लबा से आप से आप नहीं चेतेंगे और होश नहीं करेंगे, तो वक़्त और मौक़ा मुनासिब पर वह मालिक दयाल आप उनके चेतने और परमार्थ की काररवाई करने का बन्दोबस्त जिस तरह मुनासिब और उनके हक़्क़ में बेहतर होगा आप करेगा ॥

मालूम होवे कि सिवाय ऊपर के लिखे हुए सवालों के दो सवाल और भी हैं कि जिनका बयान खोल कर पिछले प्रेमपत्रों में हो चुका है, और इस वास्ते उनका जवाब यहां पर दुबारा लिखना फ़ज़ूल समझा गया-और वह दो सवाल निस्बत हस्ती सच्चे और कुल्ल मालिक के और जीव या सुरत उसकी अंश होने की बाबत हैं, सो बयान हो चुका है कि राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक और सर्व समरत्थ हैं, और जीव उनकी अंश हैं, जैसे सूरज और सूरज की किरन और यह दोनों अमर हैं ॥

बचन ४७

सवाल जवाब

१-सवाल-जिन जीवों ने सच्चे दिल से ऐसी सरन ली है कि जो कुछ होता है मालिक की मौज से होता है, और सच्ची ख़्वाहिश इस बात की रखते हैं कि वह करमों के बंधन में न पड़ें, जो कुछ अच्छा और बुरा हो सब मालिक की मौज पर छोड़ दें, तो फिर भी जो नाक़िस करम उनसे बनेगा उसका जवाबदेह कौन है, या जो ख़ियालात नापसंदीदा कि एकाएक उन के दिल में पैदा हो जाते हैं, और वह सच्चे दिल से

यह बात चाहते हैं कि ऐसे ख़ियालात या ऐसी हरकात उनसे मन्सा बाचा और कर्मना सरज़द (बनना) न हों, तो इसकी निसबत क्या ख़्याल हो सकता है। अगर उनके ज़िम्मे डाला जावेगा, तो वह नाहक़ मारे पड़े, क्योंकि वह तो बारम्बार तोबह (पछतावा) कर रहे हैं, कि हे मालिक हमारे हाथ से खोटी करनी न बने--अगर मालिक के ज़िम्मे रक्खा जावे, तो वह ऐसी काररवाइयां क्यों करावेगा--तो बावजूदे कि (अगर्चि) दिल से ऐसी सरन इख़्तियार की है या करना चाहते हैं और फिर हरकात ना पसंदीदा सरज़द हों, या एकाएक दिल में उनका ख़्याल बिला सोचे पैदा हो, इसका क्या जतन है और यह क्यों पैदा होते हैं॥

दूसरे वह जीव जो सरन दृढ़ करना चाहते हैं, यह समझ लेकर कि जो सब करम भले और बुरे मालिक की मौज पर छोड़ दिये जावें तो निस्बत बुरे करमों के मालिक के ज़िम्मे दोष आता है, और जो ऐसा अमल करें कि जो कोई नेक करनी भूल चूक से (गोकि नेक कर्म इस जीव से सरज़द होना एक अमर मुहाल बल्कि नामुम्किन है, मगर फ़र्ज़न् अगर मालिक की दया से बन जावे) उनसे बन पड़े तो

उसके वास्ते सच्चे दिल से यह एतकाद कि यह मालिक ने किया—और जो नाक़िस करम उनसे (जो रोज़ाना बनते हैं) सरज़द हों, वह सच्चे दिल से अपने ऊपर ले लें कि यह हमसे हुआ, और बफ़ौर सरज़द होने के अपने मालिक से माफ़ी चाहें, तो उनके वास्ते सूरत माफ़ी है या नहीं—मतलब यह है कि :-

१—वह जीव जो करमों का बन्धन नहीं चाहते और चरन सरन दृढ़ करना चाहते हैं, और वह सब करम भले और बुरे मालिक के ज़िम्मे रख दें।

२—वह जीव जो करमों का बन्धन नहीं चाहते और चरन सरन दृढ़ करना चाहते है—अगर कोई शुभ कर्म वर्ष छः महीने में मालिक की दया से बन पड़े, तो वह मालिक के अर्पण, और जो ख़राब कार-रवाई नित्य और हर घड़ी होती है वह अपने ज़िम्मे ले लें, तो इन दोनों क़िस्म में से वह जुगत बतला दीजिये जिससे कि जीव का सहज गुज़ारा हो जावे, कि किस हालत में मालिक की तरफ़ से ज़्यादा रक्षा होगी, और जीवों का जल्दी काम बनेगा॥

जवाब—यह हालत सिर्फ़ ऐसे प्रेमी की हो सकती है कि जिसके मन में कोई ख़्वाहिश या चाह भोग बिलास की या संसार के सामान और मान बड़ाई

के प्राप्ती की नहीं रही है–और चाहे वह ग्रहस्त में रहता है पर उसके कुटुम्बी और संबन्धियों की चाह और ख़्वाहिश का भी असर उसके मन में नहीं होता है–यानी उनके पालन पोषन के निमित्त चाहे थोड़ा बहुत करम भी करे, पर सब करतूत उसकी राधास्वामी दयाल की मौज के आसरे होती है, और नफ़ा और नुक़सान की हालत में कभी और किसी तरह पर उसका मन रूखा फीका या राधास्वामी दयाल की तरफ़ से उदास या दुखी नहीं होता है–ऐसे प्रेमी की सुरत की पहुंच और बैठक ऊंचे अस्थान पर होगी कि जहां संसार की हवा बहुत कम पहुंचती है और जो कि उसके मन में कोई क़िस्म की चाह नहीं रही है, इसवास्ते उससे कोई काररवाई ऐसी नहीं बनेगी कि जिस में किसी का असली नुक़सान होवे, या वह काररवाई बिल्कुल उलटी और ख़िलाफ़ मौज और मरज़ी कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के होवे–इसवास्ते उस प्रेमी की यह समझ कि जो कुछ होता है कुल्ल मालिक की मौज से होता है, सहीह और दुरुस्त समझनी चाहिये–उसके मन में किसी हालत में हर्ष या शोक नहीं आता है, और न किसी को नुक़सान या तकलीफ़ पहुंचाने का जान

कर या अनजाने इरादा या ख़्वाहिश होती है, फिर ऐसे प्रेमी से नाक़िस या पाप कर्म कभी नहीं बनेंगे--और जो कभी कोई ऐसा काम कि जिसमें किसी तरह से कुछ पाप का ख़्याल या शुबहा किया जावे जाहिर भी होगा तो वह मौज से होगा, और उसमें ज़रूर किसी न किसी का फ़ायदा निकलेगा, चाहे वह फ़ायदा उसी वक्त़ मालूम होवे या थोड़े अरसे के पीछे—खुलासा यह है कि ऐसे प्रेमी और पूरी सरनवाले सतसंगी से कभी और किसी हालत में कोई काम पाप का या किसी के नुक़सान या तकलीफ़ का नहीं बन आवेगा, और जो अभी ऐसी हालत उस प्रेमी सतसंगी की नहीं है, यानी उसके मन मे अनेक तरंगें इन्द्री भोग और चाहें संसार के फ़ायदे और मान बड़ाई की अकसर उठती रहती है, और उसको उनकी खबर भी नहीं होती या वह उनको रोक नहीं सकता है, तो समझना चाहिये कि अभी उसके पिछले अगले कर्मों का चक्कर किसी क़दर बाक़ी है, और उसके मन और चित्त निर्मल और निश्चल नहीं हुए यानी मलीनता संसार और इन्द्रियों के भोग बिलास की उनमें भरी हुई है, तो वह प्रेमी ऐसो समझ कि कुल अपनी करतूत को मालिक की मौज के साथ निस्बत देवे ठीक २

धारन नहीं कर सकता है। उसके अंतर में जो पाप या नाक़िस कर्म की वासना पैदा होती है या उससे ऐसे करम अनजाने ज़ाहिर हो जाते हैं, तो अभी उसकी पुरानी आदत दूर नहीं हुई और न उसके मन में पूरी सफ़ाई आई है, और न मन और सुरत उसके इस क़दर जागे हैं कि ऐसी तरंगों को उठने न देवे या फ़ौरन रोक लेवे, तो ऐसे प्रेमी को चाहिये कि नेक कामों को मौज और दया के आसरे और हवाले कर के और जो करतूत नाक़िस बने तो उसका ज़हूर अपने पिछले नाक़िस कर्मों के सबब से या अपने मन की मलीनता की वजह से समझकर उस पर शरमावे और पछतावे, और चरणों में राधास्वामी दयाल के प्रार्थना करता रहे, और अपना अभ्यास ध्यान और भजन का दुरुस्ती के साथ करता रहे, तो अलबत्ता उसकी हालत आहिस्ता २ बदलती जावेगी और जो क़सूर उससे ऐसी सूरत में बनेंगे वह भी राधास्वामी दयाल अपनी मेहर और दया से माफ़ फ़रमावेंगे—पर शर्त्त यह है कि यह अभ्यासी सच्चे मन से पछतावा करके माफ़ी चाहे, और आइन्दा को थोड़ी बहुत एहतियात करता जावे, और अपने मन और इन्द्रियों की चाल की अंतर और बाहर निरख और परख यानी चौकीदारी

करता रहे, और उनको नाकिस खयाल और तरंग उठाने या ऐसे कामों में बर्तने से जहां तक मुमकिन होवे रोकता रहे, और जब २ चूक जावे तब २ प्रार्थना करे, और अपने मन में शरमाकर माफ़ी और आइन्दा के वास्ते दया मांगे। हर एक प्रेमी सतसंगी को चाहिये, कि राधास्वामी दयाल की सरन जिस क़दर बन सके दृढ़ करे, और सरन लेने से मतलब यह है कि सब कामों में उनकी दया और रक्षा का आसरा और भरोसा रक्खे, और जब २ और जैसे २ वे मेहर और दया करें उसका शुकराना अदा करता रहे, और जहां तक बन सके अपनी चाह पेश न करे, और जो करे तो सिर्फ़ इत्तला और अर्ज करने के तौर पर, फिर जैसे राधास्वामी दयाल अपनी मौज से उस काम को करें उस में जहां तक बन सके उनकी मौज के साथ राज़ी रहे, और जो मन किसी क़दर चक्कर लावे तो फिर अपना हाल अर्ज़ कर देवे, वे अपनी मेहर से जिस तरह मुनासिब होगा मन की सम्हाल करेंगे॥

मौज के ऊपर क़ायम होना हर एक का काम नहीं है, यह बात पूरी २ जब ही बन आवेगी जब कोई बंधन या चाह नहीं रहेगी—पर मौज की निरख परख करते हुए चलना और जहां तक बन सके उसके साथ

मुवाफ़िक़त करना यही अभ्यास है-भूल चूक और क़सूर जब २ बने उस पर पछताना और शरमाना और आइन्दा के बचाव के वास्ते प्रार्थना करना यही इलाज है-इससे मनका नाक़िस अंग आहिस्ता २ दूर होवेगा और उधर अभ्यास करके मन और सुरत का घाट भी बदलता जावेगा, यानी ऊंचे और निर्मल देश में चढ़ाई होती जावेगी और मलीन देश छूटता जावेगा, तब इसी तौर से एक दिन काम पूरा बन जावेगा जल्दी करना और घबराना नहीं चाहिये और सच्चे प्रेमी और सरन लेनेवालों के वास्ते माफ़ी की दया हमेशा तैयार है ॥

बचन ४८

सत्त पुर्ष राधास्वामी दयाल से जान पहिचान और मुहब्बत करना

१-हर एक आदमी जिस २ शख़्स से उसका कोई न कोई काम निकलता है जान पहिचान और मुहब्बत करता है, जैसे ग्रहस्थी आदमी अपनी ज़रूरत के मुवाफ़िक़ किसी डाक्टर या हकीम और साहूकार और क़िस्म २ के दूकानदार और हाकिम वक़्त वग़ैरह से जान पहिचान यानी मुलाक़ात और मुहब्बत पैदा

करते हैं, इस मतलब से कि जब उनको किसी चीज़ की ज़रूरत होवे, या किसी मुआमले में इन लोगों से मदद दरकार होवे, तो वह वक़्त पर आसानी से मिल जावे, और किसी तरह का हरज और तकलीफ़ न होवे ॥

२–जैसे दुनिया के कामों के अंजाम देने के वास्ते दुनिया के कारबारी लोगों की ज़रूरत होती है, और इसलिये दुनियादार लोग उन कारबारी शख़्सों से मेल और मुलाक़ात रखते हैं, ऐसे ही परमार्थ के मुआमले में कुल्ल मालिक और उसके प्यारे संत और साध और भक्त जन की दया और मदद और सहायता वक़्त तकलीफ़ और रंज और मौत के दरकार होती है, और इस वास्ते उन से भी मुहब्बत और मेल रखना निहायत ज़रूर है ।

३–जान पहिचान के अर्थ यह हैं कि किसी शख़्स का नाम और उसकी ताक़त और सामान और जौहर का हाल सुन कर मालूम किया कि फ़लां शख़्स ऐसा है, इसको जानना कहते हैं, और जब उसकी ताक़त या सामान या जौहर से अपने तईं मदद लेने की ज़रूरत हुई, तो उस शख़्स का पता और भेद दरियाफ़्त करके उससे चल कर मिलना और मुहब्बत पैदा करना, इसको पहिचानना कहते हैं ॥

४–आम तौर पर सब लोग जानते हैं और कहते हैं कि कोई सच्चा मालिक इस रचना का है, और कुल्ल रचना उसी की ताक़त से पैदा हुई, और वही सब की सम्हाल कर रहा है, पर उसकी पहिचान सिर्फ़ ख़ासों को यानी प्रेमी और भक्त जन और साधों को थोड़ी बहुत आई, जिन्होंने अपने अंतर में कुछ रास्ता तै करके उसकी कुद्रत और ताक़त और उस के नूर और जलवे को थोड़ा बहुत देखा, और उसके चरनों से मेल और मुहब्बत पैदा की, और ज़रूरत के वक्त दया और मदद हासिल करके कृतार्थ हुए, यानी तकलीफ़ के वक्त उनकी सहायता हुई और भारी दुक्खों से बचाव होगया ॥

५–ऐसे ख़ास लोग जिनको अपने अंतर में सच्चे मालिक की थोड़ी बहुत पहिचान आई बहुत कम हैं, और बाक़ी जीव या तो नक़ल से मेल करते हैं जैसे मूरत और निशानों के पूजनेवाले, या उस मालिक की कुदरत और ताक़त का थोड़ा बहुत हाल सुनकर इस क़द्र जानते हैं कि कोई मालिक है, पर उसकी पहिचान कुछ भी नहीं आई, और इस सबब से उस के चरनों की प्रीत और मुहब्बत उनके मन में नहीं

पैदा होती, और उनका मालिक को इस क़दर जानना कि वह मौजूद है क़ाबिल एतबार के बहुत कम होता है, क्योंकि जरा सी बहस और हुज्जत में या वाक़ा होने कोई सख़्त या नागहानी तकलीफ़ वग़ैरह में उन की प्रतीत जल्द डिगमिग हो जाती है, और कोई २ विद्यावान मालिक के मौजूद होने से इनकार करते हैं, वह सख़्त भूल और गलती में पड़े हैं, और इस कसर का नुक़सान आइन्दा भोगेंगे ॥

६–जो जीव अपना इस जिन्दगी में और आइन्दा भला चाहते है, उनको मुनासिब है कि जैसे दुनिया के कामों के वास्ते दुनिया के लोगों से जान पहिचान और मेल और मोहब्बत करते है, ऐसे ही अपने जीव के कल्यान के वास्ते सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल की जो घट २ में मौजूद है जान पहिचान और उन के चरनों मे प्रीत और प्रतीत करें, तो इस लोक में भी उनके सब कारज जिस कदर कि राधास्वामी दयाल मुनासिब समझें दुरुस्त हो जावें, और आइन्दा को जनम मरन और देहों के दुख सुख से नजात पाकर अपने निज देश में जो कि अमर अजर है पूरन और अमर आनन्द को प्राप्त होवें ॥

७–यह जान पहिचान वग़ैर ख़ासों यानी पहि-

चान वालों से मिलने और उनके बचन सुनने और समझने और रास्ता चलने की जुगत उनसे दरियाफ़्त करके उसकी नित्य कमाई करने के नहीं आवेगी, और इन खासों का नाम संत सतगुरु और साध गुरू है, और जब तक यह न मिलें तो इनके ख़ास प्रेमी सत-संगी से मिलकर भी थोड़ी बहुत पहिचान सच्चे मालिक की जुक्ती की कमाई करके आ सकती है ॥

८—इस वास्ते कुल्ल जीवों को जो अपना सच्चा भला चाहते हैं लाज़िम है, कि पहिले संत सतगुरु या साध गुरू का खोज करके कोई दिन उनका सतसंग करें, और सच्चे मालिक का पता और भेद अपने घट में दरियाफ़्त करके उसकी पहिचान और प्रतीत हासिल करने में कोशिश करें, यानी चलने की जुगत सुरत शब्द के अभ्यास की लेकर हर रोज़ जिस क़दर बन सके शौक़ और मेहनत के साथ उसकी कमाई करें, तो कोई दिन में थोड़ा बहुत जलवा अंतर में नज़र आवेगा, और उस सच्चे मालिक की दया और रक्षा के परचे अंतर और बाहर देखकर उसकी प्रतीत और मेहर की परख और पहिचान आवेगी, और फिर दिन २ प्रीत चरनों में बढ़ती जावेगी, और इस तौर से एक दिन सब कारज दुरुस्त हो जावेगा ॥

९-नक़ल या निशान की कुछ पहिचान नहीं हो सकती, और न उसकी पहिचान और प्रतीत से कुछ मदद मिल सकती है, लेकिन जो सच्चा मालिक चेतन्य और जागता देव घट २ में मौजूद है उसकी पहिचान और प्रतीत और प्रीत से आदमी जीते जी घट में रस और आनन्द पा सकता है, और कुल वैरियों के ख़ौफ़ से नजात पाकर अपने प्यारे मालिक के बल और भरोसे से निर्भय हो सकता है, और आइन्दा को काल और करम और माया के घेर से निकल कर अपने निज देश में जा सकता है ॥

१०-ऐसे जीवों का संग हरगिज़ नहीं करना चाहिये जोकि मालिक के मौजूद होने से इनकार करते हैं, या दिल में शक लाते हैं या उसके चरनों में प्रीत और प्रतीत करना जरूर नहीं समझते हैं, और जो संसार के पदार्थ और इन्द्रियों के भोग बिलास को बड़ी न्यामत समझ कर उनको भोगते हैं, और उन्हीं के हासिल करने के लिये उमर भर जतन करके मुफ्त जान देते हैं। ऐसे जीवों का जनम मरन कभी नहीं छूटेगा, और अपनी करनी का फल ऊंची नीची जोनों में भोगते रहेंगे, और जो कोई उनका संग करेगा और बचन मानेगा वह भी इसी तरह उनके मुवाफ़िक़ दुख सुख भोगता रहेगा ॥

बचन ४९

सच्ची और पक्की प्रतीत और पहिचान सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल की

१–प्रतीत और यक़ीन यानी एतबार और एतक़ाद पर कुल कामों का मदार है, चाहे परमार्थी होवे चाहे स्वार्थी, यानी प्रतीत और एतबार मुवाफ़िक़ मकान की नींव के है, और बाक़ी काररवाई ऊपर की इमारत है; जो नींव दुरुस्त और मज़बूत नहीं है, तो ऊपर की इमारत भी पायदार और मज़बूत नहीं हो सकती, इस वास्ते हर एक परमार्थी को चाहिये, कि पहिले प्रतीत की सम्हाल और मज़बूती करे, तब परमार्थ का काम दुरुस्त चलेगा ॥

२–जैसे कि कोई शख़्स किसी से कहे कि तुम्हारे घर में फ़लानी जगह ख़ज़ाना गडा हुआ है और वह उसका यक़ीन लाकर उसी वक़्त से उस मकान की बहुत होशियारी के साथ हिफ़ाज़त रखता है, और उस जगह को खोदना शुरू करता है, कि जो ख़ज़ाना वहां रखा है, उसको निकाल कर उससे फ़ायदा उठावे।

३–जैसे कि कोई शख़्स किसी से कहे कि तुम्हारे घर के फ़लाने हिस्से या मकान में सांप है, और वह शख़्स उसकी प्रतीत करके जब तक कि सर्प को निकाल न लेवे तब तक आप भी ख़ौफ़ करके उस मकान में नहीं जाता है, और अपने कुटुम्बियों को भी उस मकान में नहीं जाने देता है, और वह जतन और तदबीर करता है, कि जिससे जिस क़दर जल्दी मुमकिन होवे, सर्प निकाला जावे और उसका ख़ौफ़ जाता रहे ॥

४–जैसे कि कोई शख़्स किसी को ख़बर देवे कि फ़लाने दिन या रात को उसके घर में चोर आने वाले हैं, और वह शख़्स उस बात की प्रतीत करके उसी दिन से बन्दोबस्त अपने मकान की हिफ़ाजत का करता है, और रात को बराबर होशियार और जागता रहता है, और जिस क़दर आदमी जमा कर सकता है उनको अपने मकान पर मौजूद रखता है, और हर वक़्त ख़्याल चोरों का रखकर अपने मकान और असबाब की हिफ़ाज़त से नहीं चूकता है ।

५–इसी तरह जब कोई जीव संत सतगुरु राधास्वामी दयाल के सतसंग में आया, और उसने राधास्वामी मत का निरनय और राधास्वामी नाम और

धाम का भेद और सिफ़्ल चित्त से सुनकर, उसकी समझौती और प्रतीत हासिल की, यानी इन सात बातों का यक़ीन उसके मन में अच्छी तरह से आया कि:-

१-राधास्वामी दयाल कुल्ल मालिक और सर्व समरत्थ और परम चेतन्य और पूरन आनन्द और दयाल स्वरूप है।

२-राधास्वामी दयाल के चरनों से जो आदि धार निकली वही आदि शब्द की धार है, और वही कुल्ल रचना की करता है, यानी वही धार जगह २ ठहरती हुई और मंडल बांधकर रचना करती चली आई॥

३-उसी चेतन्य धुन और धार का नाम सुरत है, और वही धार पिंड यानी देह में उतर कर जीव कहलाई।

४-उसी धुन और धार को पकड़ के जीव ऊपर को चढ़कर, और एक दिन अपने निज अस्थान यानी राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुंचकर, परम आनंद को प्राप्त हो सकता है, और इसी चढ़ाई का नाम सुरत शब्द योग है।

५-माया और ब्रह्म (जिसको काल पुर्ष भी कहते है) सत्तलोक के नीचे से प्रघट हुए, और ब्रह्मांड में निर्मल

माया और पिंड मे मलीन माया की रचना है, और जब तक जीव इन दोनों के घेर में रहेगा, तब तक देहियों के साथ दुख सुख और जनम मरन भोगता रहेगा, यानी जब तक कि सत्तलोक में जो निरमाया देश है, नहीं पहुंचेगा, तब तक काल कलेश से छुट-कारा नही होगा, और पूरन और अमर आनंद को प्राप्त नही होगा।

६-यह दुनिया परदेश है, और जिस क़दर सामान और भोग बिलास यहां पर काल और माया ने रचे है, और भी जितने कि जीव के इस दुनिया में देह के संगी है, वे सब इसकी तवज्जह और ख़्वाहिश को अपनी तरफ़ खैंचकर दिन २ उसको अपने निज घर की तरफ़ से यानी राधास्वामी दयाल के चरनों से दूर डालते है, इस वास्ते इन में जरूरत के मुवाफ़िक़ बरताव करना और जरूरत के मुवाफ़िक़ हर एक से प्रीति भाव रखना मुनासिब है, और मुख्य तवज्जह अपनी राधास्वामी दयाल के चरनों में लगाना जरूर और फ़ायदेमंद है॥

७-सत्त पुर्ष राधास्वामी दयाल को अपना सच्चा माता पिता और रक्षक समझकर, उनके चरनों की ओट और सरन लेकर काररवाई परमार्थ की शुरू

करना, और जिस क़दर तवज्जह और मेहनत हो सके उनकी दया के बल और भरोसे के आसरे करना ॥

तो अब उसको मुनासिब और लाजिम हुआ, कि काल और माया के घेर से जिस क़दर जल्दी बन सके निकलकर अपने निज देश में यानी अपने सच्चे माता और पिता राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुंचकर अमर आनंद को प्राप्त होवे, और देहों के दुख सुख और जनम मरन से अपना बचाव करे ॥

६—मालूम होवे कि राधास्वामी मत में ऊपर की लिखी हुई सात बात का निरनय इस तौर से किया जाता है, कि जीव उस कैफ़ियत और हाल को अपने अंतर में, और भी हर एक देह में निरख और परख कर उसकी प्रतीत कर सकता है—किसी किताब या ग्रन्थ या किसी पिछले महात्मा के बचन की गवाही नहीं दी जाती है, बल्कि कुल्ल कुदरत और रचना जिस क़दर कि नज़र में आती है, उन बातों की गवाही और सबूत देती है, और जो कोई चाहे थोड़े दिन अभ्यास संतों की जुगती का करके अपने अंतर में उसका फल और नतीजा देखकर सबूत इस बात का कि सिवाय सुरत शब्द मारग के और तरह सच्चा और पूरा उद्धार नहीं होगा हासिल कर सकता है ॥

७—फिर जब कि बुद्धी की समझ से और अन्तर में थोड़ा अभ्यास करके जिस जीव को थोड़ा बहुत यक़ीन राधास्वामी मत का हासिल हुआ, तब उस पर फ़र्ज हुआ कि अब होशियार होकर और इस दुनिया को परदेश और धोखे की जगह समझ कर अपने वतन की तरफ़ चलने की जुगत की कमाई तवज्जह और कोशिश के साथ रोजमर्रह करता रहे ॥

८—जिस किसी को सतसंग करके ऐसा यक़ीन हासिल हुआ जैसा कि दफ़ा २ और ३ और ४ में लिखा है, वह तो फ़ौरन भेद रास्ते का और जुगत चलने की लेकर निहायत शौक़ के साथ अभ्यास करना शुरू कर देगा, और जो परहेज और संजम दरकार हैं उन को दुरुस्ती और सचौटी के साथ अमल में लावेगा, और दुनिया और उसके कारोबार में मुनासिब और जरूरी तौर पर बरताव करेगा, और एहतियात रखेगा कि किसी चीज या मुआमले मे उसका फसाव और गिरिफ़्तारी न हो जावे ॥

९—यहां पर इस बात का बयान करना ज़रूर है कि राधास्वामी मत में घरबार या उद्यम यानी रोज-गार और पेशे का छोड़ना जरूर नहीं है, यानी जो जीव अपना परमार्थ सच्चे तौर पर बनाना चाहे

वह बग़ैर छोड़ने घरबार और कुटुम्ब परिवार और अपने पेशा और रोजगार के यह काररवाई कर सकता है, लेकिन शर्त यह है कि उसके मन में शौक़ और प्रेम राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुंचने और इस दुनिया और देह की तकलीफ़ों से छूटने का सच्चा और तेज़ होवे, तो किसी क़दर तवज्जह और वक्त़ इस तरफ़ लगाने से उसका काम आहिस्ता २ आसानी और दुरुस्ती के साथ बन सकता है ॥

१०–हर एक शख़्स को जो शौक़ के साथ सतसंग में शामिल होकर दो तीन रोज़ बराबर बचन सुने, और ग़ौर से उनको बिचारे, और अपने में और कुल्ल रचना में उनकी कैफ़ियत और हालत मुलाहिज़ा करे, तो उसको ज़रूर औसत दर्जे की प्रतीत उन सात बातों की जिनका ज़िक्र ऊपर किया आ सकती है। पर जो कि मन सब जीवों का जुगानजुग और जनमान जनम से काररवाई दुनिया की करता हुआ और इन्द्री द्वारे भोगों का रस लेता चला आया है, और अनेक तरह के कारोबार ज़रूरी और फ़ज़ूल अपने ज़िम्मे ले लिये हैं, इस सबब से उसको इस क़दर फ़ुरसत और मौक़ा नहीं मिलता कि जो बचन परमार्थी सुने हैं उनको बिचार कर अपना इरादा

अभ्यास करने का मज़बूत करके कारखाई शुरू कर दे, या यह कि निन्दकों की झूठी सच्ची बातें उसके मन को भरमा कर उस प्रतीत को जो बचनों के सुनने से थोड़ी बहुत आई है डिगमिग कर देती हैं, या यह कि घरवाले और कुटुम्बी और यार आशना और बिरादरी के लोग तान और तंज और धमकी और सड़की के बचन सुना कर इसके मन को भरमा देते है, और उस प्रतीत को जो थोडी बहुत आई है ठहरने नहीं देते, और तरह २ के ख़ौफ़ दिला कर परमार्थी काररवाई करने से उसको बाज़ रखते हैं ॥

११—पर जानना चाहिये कि इन सब हालतों में इस शख़्स की समझ और बिचार और शौक़ और ख़ौफ़ की कसर है। जो इसको सच्चा शौक़ होवे या सच्चा ख़ौफ़ मौत और दुखों का इसके दिल में पैदा होवे तो यह उन सब बातों का जो निन्दक और निपट संसारी लोग अपनी अनजानता से बनाते हैं सतसंग में बैठ कर निरनय कर सकता है, और तब उन बातों का ग़लत और झूठा होना उसको साफ़ साबित हो सकता है, और यह भी उसको रोशन हो जावेगा कि यह सब लोग असल में उसके जीव के कल्यान के बिरोधी हैं, और उसको परमार्थी काररवाई से बाज़

रखते है—ऐन अदावत उसके साथ कर रहे हैं यानी वे सब अपने जान के दुश्मन हैं, और ऐसे ही दुश्मनी उसकी जान के साथ करते हैं, फिर ऐसे आदमियों की बात चीत और हरकत बेजा पर अपने जीव के कल्यान की काररवाई को मुलतवी करना या छोड़ देना इस शख़्स की भी भारी नादानी और ग़फ़लत का सबब है, और उसकी समझ बूझ और विचार और निरनय का भी एतबार नहीं हो सकता, क्योंकि जो इन क़ूवतों को वह काम में लाता तो हरगिज़ नादान और ज़ाहिरबीं यानी ऊपरी दिखावे के लोगों की बात पर अमल नहीं करता। ऐसे लोगों की प्रतीत जो थोड़ी बहुत वक़्त सतसंग के मालूम होती है वह दबाव और दिखाने की है, सतसंग से अलहिदा होते ही जाती रहती है, और इस सबब से वे कुछ काररवाई परमार्थी नहीं कर सकते ॥

प्रतीत उन्हीं शख़्सों की सही और दुरुस्त है कि जो उसके मुवाफ़िक़ काररवाई शुरू कर दें ॥

१२—जब कि परमार्थी काररवाई यानी अभ्यास अन्तर और बाहर शुरू किया जावेगा, तो अभ्यासी को अंतर में थोड़े बहुत परचे ज़रूर मिलेंगे, और कुछ रस और आनन्द भी आवेगा, जिससे उसका यक़ीन

इस बात का कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल सर्व समरत्थ हाज़िर और नाज़िर हैं, और सिवाय मन और सुरत के अंतर में ऊंचे देश की तरफ़ चढ़ाने के और कोई जुगत सच्चे उद्धार की नहीं है, दिन २ बढ़ता जावेगा, और इस तरह सच्चे मालिक की पहिचान और सुरत शब्द मारग की बड़ाई साबित होती जावेगी, और फिर उसी क़दर उसकी प्रीत राधास्वामी दयाल के चरनों में और सुरत शब्द की कमाई में बढ़ती जावेगी और रफ़्ता २ एक दिन काम पूरा हो जावेगा ॥

विना पहिचान की प्रीत और प्रतीत का पूरा भरोसा और एतबार नहीं हो सकता और यह पहिचान बाहर के सतसग और अंतर के सभ्यास से आवेगी और दरजे बदरजे बढ़ती जावेगी ॥

१३–सच्ची और पूरी प्रतीत की महिमा बहुत भारी है। जिस वक़्त जिस किसी को भाग से ऐसी प्रतीत आगई उसका उसी वक़्त से काम बनना शुरू हो गया, बल्कि जो सच कहा जावे, तो उसी वक़्त काम बन गया, यानी जिस वक़्त कि उसको सच्चे और कुल्ल मालिक का हाज़िर और नाज़िर होने का दिल में यक़ीन हुआ उसी वक़्त से उसके मन और इन्द्रियों

की हालत बदल गई, कि वे फिर नामुनासिब चाहें और नामुनासिब कामों में रुजू नहीं करेंगे, और अपने मालिक को हर दम अपने संग मौजूद समझ कर उसके चरनों में गहरी प्रीत लावेंगे ॥

देखो जब बाप बैठा है या उस्ताद या हाकिम मौजूद है, उस वक्त लड़के या नौकर कोई काम खिलाफ़ उनकी मर्ज़ी और हुक्म के नहीं कर सकते, और न खेल कूद और नामुनासिब कामों की तरफ़ तवज्जह करते हैं, और जब यह तीनों नज़र से हट गये, तो उसी वक्त लड़कों और नौकरों का मन बेख़ौफ़ होकर चाहे जिस काम में लग जाता है। इसी तरह परमार्थी जीव का मन जब वह अपने सच्चे माता पिता और मालिक और सतगुरु राधास्वामी दयाल को हर दम हाज़िर और नाज़िर देखता है, तब किस तरह और कामों में सिवाय उनके जो राधास्वामी दयाल के पसंद हैं जा सकता है, और सिवाय उनके और कौन ऐसा ज़बर है, कि जिस में विशेष और गहरी प्रीत करेगा, जब ऐसी हालत मन की हो गई, तब और क्या करना बाक़ी रह गया। ऐसे परमार्थी जीव बहुत जल्द अभ्यास की मदद से रास्ता तै करते हुए अपने निज घर में यानी कुल्ल मालिक राधा-

स्वामी दयाल के सन्मुख पहुंचकर अपना काम पूरा कर सकते हैं ॥

१४-जिस क़दर काररवाई परमार्थ की की जाती है, उस सब का मतलब यही है, कि अभ्यासी को गहरी प्रतीत और प्रीत सच्चे मालिक के चरनों में हासिल होवे, तब उसका अभ्यास सुरत के चढ़ाने का सहज और सुखाला बनता जावेगा, और जब तक कि प्रतीत और प्रीत में कसर है, उसी क़दर मन और इन्द्री भी डामाडोल रहती है, और अभ्यास भी जैसा चाहिये वैसा दुरुस्ती के साथ नहीं बनता, इस वास्ते कुल्ल परमार्थियों को मुनासिब है, कि अंतर और बाहर सतसंग करके अपनी प्रतीत और प्रीत को मज़बूत करें, और दिन २ बढ़ाते जावें, तो उनको अभ्यास का भी रस आता जावेगा और मन और इन्द्रियां भी सहज में भोगों की तरफ से किसी कदर हट कर अंतर में शब्द और स्वरूप के आसरे उलटती जावेंगी, और राधास्वामी दयाल की दया और रक्षा और कुदरत के परचे मिलते जावेंगे कि जिनसे प्रीत और प्रतीत दिन २ बढ़ती जावेगी, और एक दिन काम पूरा हो जावेगा ॥

१५–अभ्यासी को चाहिये कि मन और माया और काल और करम के चरित्रों और झकोलों से होशियार रहे। यह सब अभ्यासी को अपने पदार्थ और तमाशे पेश करके रास्ते में रोकना और अटकाना चाहते हैं– सो जो कोई सतगुरु राधास्वामी दयाल को अगुआ करके और उनकी दया का बल लेकर चलेगा, उस पर किसी का ज़ोर या छल पेश नहीं जावेगा, और आखिर सब थक कर रास्ते में रह जावेंगे, और वह मैदान जीत कर उनके घेर से सतगुरु राधास्वामी दयाल की दया से निकल कर बेख़ौफ़ अपने निज देश में पहुंच जावेगा॥

१६--मालूम होना चाहिये कि प्रतीत के दो दर्जे हैं--पहिले दर्जे की प्रतीत तवज्जह के साथ बचन सुन कर, और बुद्धि से ग़ौर के साथ बिचार और निरनय करके हासिल होती है–यह प्रतीत सतसंग के बचनों का रस देनेवाली और अन्तर में अभ्यास शुरू कराने वाली है--और दूसरे दर्जे की प्रतीत वह है कि जो अंतर में अभ्यास करके रस और आनन्द और दया और मेहर के परचे पाकर मज़बूत होती जावे॥

यह दूसरे दर्जे की प्रतीत अडिग्ग है और इसको किसी क़िस्म के झकोले मन और इन्द्रियों के या निंदक

और बिरोधी जीवों के घटा नहीं सकते, बल्कि ज़्यादा मज़बूत और पक्का करते हैं, क्योंकि अभ्यासी को अपने अंतर की काररवाई का नतीजा और राधास्वामी दयाल की दया और रक्षा मुलाहज़ा करके इस क़दर ताक़त हासिल हो जाती है, कि वह मन और इन्द्रियों की चाल कुचाल, और निंदक और बिरोधी जीवों की बात चीत और हाल को समझ कर, फ़ौरन होशियार हो जाता है, और इनको काल का बिघन जान कर, अपने सतसंग की समझ के बल से, इनका मुंह तोड़ देता है, और फिर आइन्दा वे ऐसी हरकत उसके साथ रोज़ बरोज़ कम करते हैं, बल्कि शरमा कर और थक कर चुप्प हो जाते हैं, और फिर यह प्रतीत अभ्यास की दिन २ बढ़ती और गहरी होती जाती है और एक दिन सच्चे और कुल्ल मालिक के दरबार में पहुंचा देती है ॥

सफ़ा नम्बर ६३४ सारबचन नज़्म शब्द नम्बर १६ के अर्थ लिखे जाते हैं ॥

कड़ी

१-गुरु अचरज खेल दिखाया। श्रुति नाम रतन घट पाया॥

अर्थ-गुरू ने दया करके अचरज रूपी खेल घट में दिखाया, सुरत को नाम रूपी रतन यानी दसवें द्वार का शब्द प्राप्त हुआ ॥

कड़ी

२-बकरी ने हाथी मारा । गऊ कीन्हा सिंह अहारा ॥

अर्थ-यानी सुरत ने मन को जीता और फिर सुरत ने काल को मारा ॥

कड़ी

३--चींटी चढ़ गगन समाई । पिंगला चढ़ परबत आई ॥

अर्थ-सुरत चढ़ करके गगन में पहुंची, जो मन की दौड़ना यानी चंचलता छोड़ कर निश्चल हो गया वही पर्बत पर चढ़ गया यानी त्रिकुटी में पहुंचा ॥

कड़ी

४-गूंगा सब राग सुनावे । अन्धा सब रूप निहारे ॥

अर्थ--जो शख़्स कि दुनिया की तरफ़ और अंतर में बोलने से चुप्प हुआ वही शब्द की धुनें सुनने लगा--और जिस किसी ने बाहर से अपनी दृष्टि बन्द की वही अंतर में रूप देखने लगा ॥

कड़ी

५--मक्खी ने मकड़ी खाई । भुनगे ने धरन तुलाई ॥

अर्थ--मक्खी नाम सुरत का है जो मकड़ी यानी माया के घेर में जब तक थी उसका खाजा हो रही थी, और जब कि दसवें द्वार की तरफ़ उलट कर

पहुंची तब माया को निगल गई–भुनगे यानी जीव या सुरत ने सूक्ष्म शरीर को समेट कर आकाश में उठा लिया ॥

कड़ी

६–धरती चढ़ वृक्षा बैठो । पक्षी ने पवन चुगाई ॥

अर्थ–सुरत चढ़ करके त्रिकुटी में पहुंची–मन जो सैलानी था जब चढ़ कर त्रिकुटी में पहुंचा तब प्राण पवन को निगलता चला गया ॥

कड़ी

७–जंगल में बस्ती ब्याई । बस्ती सब ख़लक़त खाई ॥

अर्थ–बस्ती यानी रचना और रचना करने वाली नाम सुरत का है सो उसने पिण्ड रूपी जंगल में उतर कर रचना की और फिर जब उलट कर त्रिकुटी या दसवें द्वार में पहुंची तब पिण्ड और ब्रह्माण्ड की रचना को निगल गई यानी समेट गई ॥

कड़ी

८–मूसे से बिल्ली भागी । पानी में अगिनी लागी ॥

अर्थ–यानी चढ़ने वाली सुरत को देखकर माया हट गई–अमी की धार जोकि सहसदलकंवल के मुक़ाम पर आई वही जोतिस्वरूप होकर रोशन हो रही है और वही माया का स्वरूप है और वही अग्नी है ॥

कड़ी

९—कौवा धुन मधुरी बोले । मेंडक अब सागर तोले ॥

अर्थ—जो मन कि पहिले कडुवा वाक्य बोलता था और अपने मतलब के लिये औरों को दुःख देता था वही त्रिकुटो में चढ़ कर मीठी बोली के साथ राग रागिनी सुनाता है—पिण्ड में नीचे का मन जो मेंढक के मुवाफ़िक़ थोड़ी ही हद्द में उछलता कूदता था त्रिकुटी में चढ़ कर भौसागर की तौल और नाप करता है ॥

कड़ी

१०—मूरख से चतुरा हारा । धरती में गगन पुकारा ॥

अर्थ—मन जो कि पिण्ड में बैठ कर मूरखता से भोगों में फंस रहा था जब गुरु कृपा से घट में चढ़ कर त्रिकुटी में पहुंचा तब काल जिसने चतुराई करके जाल बिछाया था उससे हार गया और फिर धरती यानी पिण्ड में त्रिकुटी के शब्द की धुने फैलीं ॥

कड़ी

११—राधास्वामी उलटी गाई । उल्लू को सूर दिखाई ॥

अर्थ--राधास्वामी ने सुरत और मन के उलटने का यह हाल वर्णन किया और जो जीव कि उल्लू के मुवाफ़िक़ ब्रह्मरूपी सूरज का दर्शन नहीं कर सकते थे उनको त्रिकुटी में चढ़ा कर ब्रह्म का दर्शन कराया॥

बचन ५०

राधास्वामी अथवा सन्त मत की निन्द्या का सबब और निन्दकों का हाल।

१-मालूम होवे कि सन्त अथवा राधास्वामी मत (१) केवल प्रेम का मारग है और (२) इस मत में अभ्यास अन्तर के अन्तर में यानी निज घट में किया जाता है और (३) बाहर सिवाय सतगुरु या साध के सतसंग के और सतगुरु और साध और प्रेमी जन की सेवा के और कोई रसम या किसी क़िस्म का बरताव और ब्यौहार जारी नहीं है और (४) जो अभ्यास कि इस मत में कराया जाता है वह मन और रूह यानी सुरत के साथ किया जाता है और (५) इष्ट और निशाना सच्चे और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों का ऊंचे से ऊंचे देश में बांध कर और शब्द की डोरी (जिसकी धुन घट २ में हर दम और हर वक़्त हो रही है) पकड़ कर मन और सुरत को चढ़ाया जाता है ताकि महा निरमल और निरमाया परम चेतन्य के देश में पहुंच कर सुरत अपने सच्चे माता पिता राधास्वामी दयाल के चरनों का दर्शन पाकर अमर और अजर आनन्द को प्राप्त होवे और काल और माया के जाल और कष्ट और

कलेश और जनम मरन के दुख सुख से पूरी और सच्ची रिहाई पावे और (६) इसी नज़र से अभ्यासी को शुरू से धुरपद में पहुंचने और अपने सच्चे और कुल्ल मालिक के चरनों के दर्शन की प्राप्ती की अभिलाषा और आसा बंधवाई जाती है और दूसरी इच्छा और ख़्वाहिश का चाहे किसी क़िस्म की होवे अभाव कराया जाता है और (७) संसार और उसके भोग बिलास और माया के सामान और पदार्थों की तरफ़ से उनकी नाशमानता और तुच्छ क़ीमत और क़दर समझा कर सच्चे परमार्थी के चित्त में थोड़ा बहुत सच्चा वैराग्य दिलाया जाता है और (८) सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल और सन्त सतगुरु अथवा साधगुरू के चरनों की सच्ची प्रीत और इस तरह की प्रतीत दिल में पैदा की जाती है कि वे हर वक़्त परमार्थी जीव के अंग संग और अंतर में हाज़िर और नाज़िर और हर दम रक्षक और सहाई मौजूद हैं। और यह प्रीत और प्रतीत सिर्फ़ ज़ुबानी बातों और उपदेश से नहीं आती है, बल्कि थोड़ा बहुत अभ्यास सुरत शब्द मारग का करके और अन्तर में आनन्द और रस और परचे पाकर आपही आप सच्चे अभ्यासी के हिरदे में जागती है, और दिन २ बढ़ती और पकती जाती है, और उसके

साथ ही अभ्यासी की हालत और उसका बरताव और व्यौहारभी थोड़ा बहुत अन्तर और बाहर बदलता जाता है, यानी कुल्ल मालिक और सतगुरु और सतसंग में प्रीत ज़्यादा होती जाती है, और उसी क़दर संसार और संसारियों से मेल मिलाप कम होता जाता है ॥

२-अब मालूम होवे कि यही सबब है, कि राधास्वामी मत के सच्चे परमार्थी जीवों से संसारी जीवों का मेल दिन २ कम होता जाता है, और ऐसी हालत उनकी यानी संसार के भोग बिलास और नामबरी और धन और स्त्री और औलाद में उनकी तवज्जह कम देख कर, संसारी जीव अचरज करते हैं, और घबरा जाते हैं, कि कहीं ऐसा न होवे कि रफ़ा २ वह परमार्थी जीव क़तई घरबार छोड़ कर दुनिया से अलहदा हो जावे, और जो मतलब उनका उससे बरामद होता है वह ख़त्त हो जावे-इस वास्ते तरह २ के जतन और उपाय सोचते हैं, कि जिससे उस परमार्थी की प्रीत और प्रतीत में ख़लल आजावे, और वह राधास्वामी मतको छोड़ देवे, या यह कि सतसंग में जाना मौक़ूफ़ कर देवे, और जो उनका कहना कुछ उस पर असर नहीं करता है, तो अनेक तरह के इल्ज़ाम सतसंग

और सतसंगियों और सतसंगिनों पर लगाकर, और अपने मन से नई २ हजो की बातें पैदा करके मशहूर करते हैं, और उनको बदनामी देते हैं, और धमकाते हैं और डराते हैं, कि इसी शरम और ख़ौफ़ के मारे वह सतसंग छोड़ देवे, और जो जीव कि अभी सतसंग में शामिल नहीं हुए हैं, वह ख़ौफ़ और बदनामी के सबब से वहां के जाने और शामिल होने से परहेज करें और रुक जावें ॥

३-अनेक तरह की निन्द्या की बातें जो यह लोग बनाते हैं, और मर्द और औरतों को बेतकल्लुफ़ सुनाते हैं, इस जगह तफ़सील के साथ कहना फ़ज़ूल समझकर सिर्फ़ दो चार बातें कि जिन पर यह साहब ज्यादे ज़ोर देते हैं लिखी जाती हैं, कि जिससे सच्चे परमार्थी को ख़ास कर, और आम परमार्थियों को भी उन बातों की असलियत मालूम हो जावे, कि आया वह निन्द्या में दाख़िल हो सक्ती हैं, या ऐन परमार्थ की चाल हैं, और भक्ती मारग में ज़रूर दरकार हैं, और पुराने से पुराने वक्तों से सब मतों में जारी हैं ॥

१-पहिला ज़ात पांत का भेद-परमार्थ में आम तौर पर और भक्ती मारग में ख़ास कर ज़ात पांत का भेद

करना पाप में दाखिल है। यह क़ौल है कि—जात पांत पूछे नहिं कोय। हर को भजै सो हर का होय॥ बड़े २ महात्मा जो पिछले वक़्त में हुए, और जिनको कुल्ल हिन्दू बड़ा मानते हैं, जैसे बशिष्ठ जी और ब्यास जी और नारद जी और सूत पौरानिक—अब मालूम करो कि इनकी क्या जात थी—बशिष्ठ जी गनिका (कसबी) के पुत्र थे, ब्यास जी मच्छोदरी (मच्छली पकड़नेवाले की लड़की) के, और नारद जी और सूत जी दासी (लौंडी) सुत थे, फिर परमार्थ की कमाई करके इनकी किस क़दर महिमा बढ़ी, कि अब तक इनको सब कोई बड़ा मानते हैं और अपने वक़्त में यह बड़े २ महात्माओं के गुरू हुए, और उनके बचन और बानी अब तक सब लोग मानते हैं और भाव के साथ पढ़ते हैं और सुनाते है॥

भीलनी कैसी नीची ज़ात थी, और आप महाराज रामचन्द्रजी ने उसके जूठे बेर खाये और जिन पंडितों और भेषों ने कि उसका नीचा ज़ात के सबब से निरादर किया था, उन्हीं से महाराज ने उसका आदर और भाव करवाया, और उसी के चरन ताल में धुलवा कर उसके जल को जो सड़ गया था शुद्ध कराया॥

सुपच भक्त को जो ज़ात का भंगी था, कृष्णचन्द्र

महाराज ने पांडवों के यज्ञ में युधिष्ठिर जी को भेजकर बड़ी महिमा और आदर के साथ बुलवा कर और द्रोपदी के हाथ से रसोई बनवा कर चौके में बिठला कर भोजन करवाये, तब घंटा बजा और यज्ञ सुफल हुआ ॥

महाराज कृष्णचन्द्र ने अहीर के घर में परवरिश पाई, और ग्वालियों के संग अरसे तक उनका बरताव रहा और अब सब ज़ात के लोग उनकी पूजा करते है, और उनकी प्रसादी और चरनामृत मन्दिरों में लेते है–रामचन्द्र जी महाराज ज़ात के क्षत्री थे उनकी भी पूजा तमाम ज़माने में जारी है ॥

सिवाय इनके बहुत से भक्त हिन्दू और मुसलमान इस कलयुग के ज़माने में पैदा हुए, और उनमें से अकसरों की पूजा और भाव जगह २ जारी है–जैसे कबीर साहब ज़ात के जुलाहे यानी कोली बनारस में, और पलटू साहब ज़ात के बनियां अयोध्या में, और दादू साहब जात के धुनियां राजपूताने में, और ग़रीब दास जी ज़ात के जाट बांगर में, और नानक साहब ज़ात के खत्री, और नामदेव छीपी और सैना नाई और सरवर सुलतान मुल्क पंजाब में, और चेतन्य स्वामी बंगाले में, और गूंगा पीर जो पहिले क्षत्री थे और फिर पीछे मुसलमान हो गये, और मैनपुरी के

ज़िले मे जखइया भंगी, और अमरोहे और जलेसर में मियां साहब, और आगरे में कमालखां और कुए वाला भंगी मसानिया, और ज़ाहिरपीर मुसलमान, और बूढ़ाबाबू धोबो. और ख़्वाजह जी अजमेर में, और अनेक भक्त और अनेक भूत प्रेत जगह २ सर्व ज़ातवाले पूज रहे है। यह हाल सिर्फ़ इस मुल्क में ही नहीं है बल्कि तमाम पृथ्वी में यही दस्तूर भक्तों और भी भूत प्रेतों की पूजा का जारी है॥

विलायतों में जगह २ भक्तों के और शहीदों के मज़ार बने हुए हैं, और हर साल एक या दो दफ़े हर जगह मेले होते हैं, और सैकड़ों कोसों से लोग दर्शन के वास्ते आते हैं, और भेट पूजा चढ़ाते हैं और दुआयें मांगते हैं॥

इस मुल्क यानी हिन्दुस्तान में भी कोई ऐसा देश नहीं है, जैसे पंजाब, गुजरात, दक्षिण, राजपूताना, बंगाला और हिन्दुस्तान ख़ास यानी अंबाले से लगा कर बनारस तक, और उड़ीसा वग़ैरः कि जहां ऐसे स्थान न होवें और पूजा जारी न होवे। हजारहा हिन्दू मुसलमान भक्तों और फकीरों और शहीदों की जियारत और पूजा के वास्ते जाते हैं॥

सिवाय मालिक के भक्तों के और बहुत से कम

जात देवता और सिद्ध और भूत प्रेत बने हुए जा-बजा पुज रहे हैं, और कोई मर्द या औरत या पंडित या ब्राह्मण या भेष ऐसी पूजा पर तान नहीं मार सकते हैं, बल्कि आप उस पूजा में शामिल होते हैं और जो चीजे कि उनके देखने और छूने के क़ाबिल नहीं हैं, उन में बेतकल्लुफ़ बर्तते हैं–जैसे सूअर के बच्चे और बकरे और भैंसे कटवाते हैं, और शराब की बोतल भोग में ले जाते हैं, और ख़ून का टीका माथे पर लगवाते है, और गोश्त का परसाद बटता है ॥

जो लोग कि वेद और शास्त्र की पक्ष करते हैं, और उनको कभी आंख से भी नहीं देखा और न पढ़ा और न सुना, उन्हीं के घर में ऊपर की लिखी हुई नाक़िस पूजा जारी हैं, और वहां वे दम भी नहीं मार सकते बल्कि जोरू और लड़कों के साथ, आप उस नाक़िस पूजा में शामिल होते हैं, और जो परसाद वहां तकसीम होता है वह मांग २ कर लेते हैं, और अपने बच्चों को खिलाते हैं ॥

२–<u>दूसरा परसादी देने और लेने पर एतराज</u>–जाहिर है कि यह रसम गुरू की परसादी लेने की सब मतों में कदीम से जारी है, और उसी मुवाफ़िक़ मंदिरों में

परमादी और चरनामृत बांटने का दस्तूर जारी है। अब समझना चाहिये कि जिस वक़्त वे महात्मा जिन की मूर्ति कि मंदिर में पधराई गई है मौजूद होंगे, तो उस वक़्त वे भोग लगा कर यानी झूंठा करके परसाद सेवकों और भाव वालों को बांटते होंगे, क्योंकि वे अपने वक़्त के गुरू और मालिक से मिलने का रास्ता बताने वाले थ॥

इसी तरह से हर एक अस्थान जहां पर महात्मा और भक्तों की समाध या कोई निशान मौजूद है, और उसके दर्शन और पूजा के वास्ते सैकड़ों कोसों से लोग आते हैं, तो वहां पर भी परसाद बदस्तूर बांटा जाता है, और पहले बांटने से ध्यान करके उन महात्माओं को भोग लगाया जाता है, तो अब विचारना चाहिये कि जिस वक़्त वे महात्मा ज़िंदा थे, उस वक़्त उनके भाव वाले पहले उनको खिला कर परसादी लेते होंगे, और उन महात्मा की ज़ात पांत का कुछ ख्याल कोई नहीं करता होगा॥

और ज़ाहिर है कि जितने औतार और संत और साध और भक्त और महात्मा पिछले वक़्तों में पैदा हुए, और जिनकी पूजा आम तौर पर जाबजा हर एक देश मे (जैसा कि ऊपर की दफा में ज़िकर हो चुका है)

जारी है, इन में से कोई भी जात का ब्राह्मण नहीं था, बल्कि बहुत से नीची ज़ात में प्रगट हुए, पर उनको परसादी गुरू भाव करके उनकी मौजूदगी में, और भी बाद उनके चोला छोड़ने के सब सेवक और भाव वाले जीव लेते चले आये है, और इस ज़माने में भी हर कोई औरत और मर्द अपने २ गुरू की परसादी चाहे वे कबीर पंथी हैं, या नानक पंथी या दादू पंथी या कोई और भेष और पंथ में से हैं, या गुसांई वग़ैरह, बग़ैर दरियाफ़्त करने उनकी ज़ात पांत के लेते हैं, बल्कि गोकुलस्थी गुसाइयों का उगाल भी बड़े शौक़ और भाव के साथ गहरी भेंट और पूजा देकर लेते हैं, और जगन्नाथ जी में हर एक ज़ात के जात्रियों को जूंठन खुद वहां के पुजारी और पंडे और सब कोई आपस में खाते हैं, और उसको परसाद समझ कर दूर २ अपने घरों में ले जाकर खाते हैं, और अपने कुटुम्बियों को बांटते हैं ॥

और मथुरा बृन्दाबन में सब ज़ात वाले मंदिरों में एक जगह बैठ कर दाल रोटी और कढ़ी चावल और खिचड़ी वग़ैरः की परसादी खाते हैं, और सखरन निखरन का बिलकुल भेद नहीं करते, और बहुतेरे आदमियों के हाथ अपने मकान पर

मंगवा लेते है, और कभी २ गुसाईं लोग अपने आद-मियों के हाथ घरों पर भिजवा देते हैं, और मन्दिर से अपने घरों पर भी ले जाते हैं ॥

बहुतेरे लोग जो भेष नेष्ठा रखते हैं, वे कुल्ल भेषों की वग़ैर दरियाफ़ करने जात और पांत के चरनामृत परसादी लेते है, और यह दस्तूर पंजाब और सिंध वग़ैरह मे आम तौर पर जारी है ॥

और मुसलमानों मे भी गुरू का उलश यानी जूठन भाव के साथ लेकर खाते है ॥

खुलासा यह है कि गुरू और साध और महात्मा और गुसाईं और साहबज़ादे और हर एक पंथ के महन्तों और गद्दी नशीनों की परसादी खाना आम तौर पर सब देशों और सब मतों में जारी है, फिर जो लोग कि इसको बुरा समझते है, और इसकी निंद्या करते हैं, वह परमार्थ के हाल और चाल से बिलकुल बेख़बर है, और आप कुछ भी परमार्थ की करनी नहीं करते, और जात पांत या विद्या और बुद्धी या धन और हुकूमत के मान और अहंकार में डूबे हुए है, फिर ऐसे लोगों की निंद्या और तान और हँसी के बचनों का सच्चे परमार्थियों को किसी सूरत मे ख़्याल करना अपनी भक्ती और परमार्थ की कमाई में ख़लल डालना है ॥

देखो तमाशबीनों को कि मुसलमानी और ईसायन और और नीच ज़ातवाली औरतों के साथ मुहब्बत करते हैं, और उनके घरों पर रात दिन पड़े रहते हैं, और वहीं खाते पीते हैं, या ऐसी औरतों को अपने घरों में लाकर रखते हैं और जो उनसे औलाद पैदा होती है उसके साथ वैसा ही बरतावा करते है, जैसा कि शादी की हुई बीबी की औलाद के साथ बर्तते हैं, और अपनी बिरादरी और ज़ात वालों का कुछ भी ख़ौफ़ या ख़्याल न करके खुलाखुली ऐसे काम करते हैं और फिर उनसे कोई कुछ नहीं कहता, और न उनको ऐसे काम से रोक सकता है ॥

इसी तरह बहुत से ऊंची ज़ात वाले लोग गोश्त और शराब खाने पीने के वास्ते डाक बंगला और अंगरेज़ी होटल यानी मुसाफ़िर घर मे जहां मुसलमान बावरची सब तरह का गोश्त और खाना पकाते है, जाकर खाना खाते है और बे ख़ौफ़ इस काम में बर्ताव करते हैं ॥

बाज़े गोश्त वालों की दुकान से क़लिया और कबाब ख़रीद करके और अपने मकान पर लाकर खाते हैं, इन लोगों पर कोई बिरादरी के लोग तान नहीं मारते हैं, और न उनको इस काम से रोकने का जतन करते हैं ॥

और बहुतेरे ऊंची जातवाले नौकरी की हालत में उन चीज़ों को जिनका छूना उनकी बिरादरी में पाप और निहायत नापाक समझा जाता है, रोज-मर्रह अपने हाथ से उठाते और धरते हैं, और वे काम जो उन्हें नहीं करने चाहिएं हर रोज़ करते है, और कुछ छूत उसमें नहीं मानते, पर परमार्थ के स्थान में पहुंच कर और सच्चे परमार्थियों से बातचीत करने के वक्त बड़ा अहंकार अपनी ज़ात का दिखाते हैं, और अपने तईं महा पवित्र समझते हैं, और धन के लिये नीच से नीच जगह पर दीनता और आधीनता के साथ वर्ताव करते हैं, लेकिन परमार्थ के फ़ायदे के वास्ते कभी सिर भी नहीं झुकाते, और जो कुछ लाभ न होवे तो ऐसी जगह क़दम भी नहीं रखते हैं ॥

फिर जो लोग कि गुरुभक्ती अपने जीव के कल्यान के वास्ते कर रहे हैं उनको अपनी भक्ती की चाल के बरताव में मूरख और नादान और परमार्थ के विरोधी जीवों की निन्द्या का ख्याल करना किस तरह दुरुस्त हो सकता है ॥

वेद और शास्त्र के हुक्म के मुवाफ़िक़ पिछले वक़्तों में सब जीव पहले ब्रह्मचर्य अवस्था धारन करते थे, और उस अवस्था में बराबर गुरू के पास रह कर

उनकी सेवा करते थे और परशादी खाते थे, और ब्रह्म विद्या पढ़ते थे और गुरू से उपदेश लेकर अभ्यास करते थे, पर इस वक़्त में वह चाल बहुत कम जारी है बल्कि बन्द हो गई और इस सबब से लोग गुरू और गुरु भक्ती की महिमा से बेख़बर हैं, और अपनी ओछी समझ और अनजानता से सच्चे परमार्थी अभ्यासियों की काररवाई पर तान और तिश्ना लगा करके पापी और निन्दक बनते हैं ॥

अब जो कोई कि सच्चा परमार्थ कमाना चाहता है, वह खुद विचार ले कि ऐसे नादान अहंकारी और निगुरे संसारियों की बात क़ाबिल सुनने और मानने के है या नहीं। यह लोग रात दिन चूहों, बिल्लियों, कुत्तों, मक्खियों, चींटियों और चिड़ियों का जूठा खाते हैं और गुरू और भक्तजन की परशादी लेने वालों पर तान मारते हैं। इस जगह पर एक तुलसी दासजी का शब्द जो उन्होंने ऐसे लोगों की निस्बत कहा है लिखा जाता है-

शब्द

ऐसी चतुरता पर छार-टेक।

हरत पर धन धरत रुच २ भरत उद्र अहार ॥
नेकहू नहिं प्रीत गुरु से महा लम्पट जार ॥
ऐसी चतुरता० ॥ १ ॥

मात मरि है पितहु मरि है, मरि है कुल परिवार।
जानत एक दिन हमहु मरि हैं, तऊ न तजत बिकार॥
ऐसी०॥ २॥
गुरु प्रसाद में छूत लावत, करत लोकाचार।
नारि का मुख धाय चूमत अधर (होंठ) लिपटी लार
(थूक)॥ ऐसी०॥ ३॥
संत जन से द्रोह राखत नात साढू सार।
तुलसी ऐसे पतितजन को तजत न कीजे बार॥ऐसी०॥४॥

और एक पद दूसरा भी तुलसीदासजी ने निस्बत परमार्थ के बिरोधियों के लिखा है उसकी भी दो तीन कड़ी लिखी जाती हैं। इसमें समझाया है कि चाहे कैसे ही नज़दीक के रिश्तेदार होवें और जो वे परमार्थ में बिरोध करें तो उनको दुश्मन के मुवाफ़िक़ जान कर क़तई छोड़ देवे–

पद

जिनके प्रिय न राम बैदेही–टेक।
तजिये तिनहिं कोट बैरी सम यद्यपि परम सनेही॥१॥
पिता तजे प्रहलाद विभीषन बंध भरत महतारी
बलि गुरु तजे नाह (पति) बृज बनिता भए जग मंगलकारी॥ २॥

सतगुरु राधास्वामी दयाल ने भी ऐसे बाब में एक शब्द फ़रमाया है जिसमें हुक्म है कि जहां तक बने

कुटुम्बी और रिश्तेदारों से मेल रक्खे हुए भक्ती करे तो इसमें दोनों का फ़ायदा होगा, लेकिन जो उनमें से कोई परमार्थ में बेमतलब विघ्न डाले और सख़्त बिरोधी मालिक के भजन और गुरुभक्ती का होवे, और किसी तरह उस पर अपना क़ाबू न चले, तो दीनता और मुलायमियत के साथ उससे अलहिदा हो जाने में किसी तरह का पाप और दोष नहीं है, क्योंकि इस बात का बड़ा ख़्याल रखना चाहिये कि मूरख जीव जो अपनी अनजाता से परमार्थ में विघ्न डालते हैं, उनके संग और सबब करके किसी तरह अपनी भक्ती में ख़लल न पड़े, नहीं तो जनमान जनम पछताना पड़ेगा और उनका भी ऐसी चाल चलन से भारी नुक़सान होगा, यानी बजाय उनके जीव के कारज होने के सच्चे परमार्थी के संग साथ से उनके सिर पर निन्दक और विघ्नकारक होने का पाप का पहाड़ चढ़ेगा और उसके एवज़ में बहुत दुख उनको सहने पड़ेंगे, क्योंकि जैसे एक आदमी को सच्चे परमार्थ में लगाने का भारी पुन्य होता है और उपकारक पर मालिक की दया आती है और उसका उद्धार जल्दी होता है, ऐसे ही परमार्थ से हटानेवाले या परमार्थ की करनी में विघ्न डालनेवाले को ऐसा

भारी पाप होता है, कि जिसके सबब से उसको इस जनम में और भी आगे के जनम में दुख भोगने पड़ते हैं ॥

शब्द

धोखा मत खाना जग आय पियारे ।
धोखा मत खाना जग आय ॥ १ ॥
कोई मीत न जानो अपना ।
सब ठग बैठे फांसी लाय ॥ २ ॥
जब सच्चा होय चले डगर गुरु ।
तबही चौंकें रोकें आय ॥ ३ ॥
ऊंच नीच कहें बचन तोख के ।
मति को तेरे दें भरमाय ॥ ४ ॥
इन से रहना समझ बूझ कर ।
हैं यह बैरी हित दिखलाय ॥ ५ ॥
तेरी हानि लाभ नहिं सोचें ।
अपने स्वारथ रहे लिपटाय ॥ ६ ॥
तू भी चतुरा गुरु का प्यारा ।
उन संग रहु गुरु चरन समाय ॥ ७ ॥
उनको भी इस भांति भलाई ।
तेरी भक्ति न थकती जाय ॥ ८ ॥
जो बेमुख गुरु भक्ति नाम से ।

कोई तरह क़ाबू नहिं पाय ॥ ९ ॥
तौ जुगती से दीन बिधी से ।
छोड़ चलो संग दोष न ताय ॥ १० ॥
जो सन्मुख गुरु भक्ति नाम से ।
होय कदाचित मेल मिलाय ॥ ११ ॥
राधास्वामी कहत बनाई ।
बहुर बहुर तू भक्ति कमाय ॥ १२ ॥
भक्ति न छूटे कोई जुगत से ।
नहिं तो बहुबिधि रहो पछिताय ॥ १३ ॥

३–तीसरा पुर्ष और स्त्रियों को एक गुरू धारन करके दूसरा गुरू करना। यह निहायत कम समझ और ओछी बुद्धिवालों की बात है। वे कहते हैं कि स्त्रियों का गुरू उनका पति है। दूसरा गुरू धारन करने की उनको ज़रूरत नहीं है। और इसी तरह से पुर्षों का गुरू वह पण्डित या प्रोहित है कि जिसने उनको यज्ञोपवीत यानी जनेऊ पहिनाया। जो यही बात दुरुस्त है तो फिर परमार्थ की समझ और करनी तो ख़तम हुई। क्योंकि पुर्ष अपनी २ स्त्रियों से सिवाय दुनिया के कारोबार के या निहायत नीचे दरजे की सेवा और ख़िदमत के जैसे रोटी पकाना मकान और बर्तन साफ़ करना और लड़कों को

खिलाना या अपने भोग बिलास के और कोई काम नहीं लेता, और न उनको परमार्थ की बात सुनाता और समझाता है, फिर ऐसे गुरू से क्या फ़ायदा परमार्थ का या अंतर की आंख खुलने का या मालिक की पहिचान और उसके मुनासिब भजन और बंदगी करने का हासिल हो सकता है-जैसे कि वह पुर्ष परमार्थ और परमार्थी विद्या से ख़ाली है, ऐसेही उसकी स्त्री भी ख़ाली रहेगी। और जो हर एक ऊंची क़ौम का दस्तूर जो इस वक्त में जारी है देखा जाता है तो मालूम होता है कि बहुत सी जगह कुल्ल स्त्रियां बेवा और सुहागिन बराबर गुरू धारन करती हैं, और कहीं २ सिर्फ़ बेवा स्त्रियां गुरू धारन करती हैं। जो निन्दकों की यह बात सही है कि स्त्रियों को मुतलक़ गुरू करना ज़रूर नहीं, तो फिर बेवा होने पर उनको भेषों या पण्डितों या साहबज़ादों या गुसाइयों से क्यों उपदेश दिलाया जाता है, उनके पति का ही उपदेश क्यों नहीं काफ़ी समझा जाता है, पर किसी को भी अपने पति से कुछ परमार्थी मदद नहीं मिलती नहीं तो बेवा होने पर वह उसी की काररवाई करती। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि यह निन्दा की बातें उन लोगों की बिल्कुल नादानी और बेख़बरी का

सबब है, कि अपने और बिरादरी के घरों के हाल से अच्छी तरह से वाक़िफ़ नहीं हैं, और दूसरों पर तान मारने को तैयार होते हैं ॥

इसी तरह जो पुरुषों को जनेऊ देनेवालें से उपदेश काफ़ी मिल जाता, तो फिर वे उसी के मुवाफ़िक़ काररवाई करते, और परमार्थी फ़ायदा उससे उठाते, पर सब जगह यह बात देखने में आती है कि सिवाय उन लोगों के (कि जिनका मत यह है कि दुनिया के भोग बिलास करना और जैसे तैसे धन जमा कर के अपने मन की दुनियवी चाहों के पूरा करने में ख़र्च करना, और जिनका खुदा और परमेश्वर धन है कि उसकी प्राप्ती के वास्ते जैसी तैसी ख़िदमत और चाहें जिसकी नौकरी होवे बड़ी खुशी और उमंग के साथ बजा लाना, और जिनका गुरू स्त्री है कि जैसे वह हुकूम करे उसकी दिल और जान से तामील करना) और जितने ऊंची ज़ात वाले लोग हैं वे ज़रूर दूसरा गुरू धारन करते हैं, यानी जो टेकी हैं वह अपने घराने की चाल और रस्म के मुवाफ़िक़ बंशावली गुरू धारन करते हैं, और जो सच्चे खोजी परमार्थ के हैं, चाहे ऐसा खोज उनके मन में पहले ही यानी वंशावली गुरू करने से पैदा

होवे या पीछे, वे सच्चा और भेदी गुरू तलाश करके जिस मत और पन्थ में मिले उसको अपना गुरू धारन करके अपना जन्म सुफल करते हैं, फिर इस मुआमिले में भी उन निन्दक साहिबों की बेख़बरी और नादानी अपनी बिरादरी और कुल ऊंची क़ौमों की रसम और चाल से ज़ाहिर है ॥

अब समझना चाहिये कि गुरू नाम परमार्थ का रास्ता बतानेवाले और अन्धेरे में प्रकाश करानेवाले का है, सो जब कि यह ताक़त किसी में पाई नहीं जाती तो उसका नाम गुरू किस तरह हो सकता है। जो लोग कि टेकी हैं और सच्चे परमार्थ से बेखबर वे अपने बाप दादे के गुरू की औलाद से जो कोई मिले चाहे वह कुछ जानता है या नहीं उसीको गुरू बनाते हैं, लेकिन जब उनके दिल में सच्चा खोज पैदा होता है तब वे देखते हैं कि जिस को उन्होंने गुरू बनाया वह मुतलक़ गुरुवाई की चाल से और असली परमार्थ से आप बेख़बर है फिर दूसरे को वह क्या बतावेगा, और जीव के कल्यान के मुआमिले में उस की क्या मदद करेगा, तब लाचार हो कर वे भेदी और अभ्यासी गुरू खोज कर उसकी सरन लेते हैं, और अपने जीव का कारज उसके वसीले से बनवाते

हैं, तो अब समझना चाहिये कि ऐसे नादान गुरू के छोड़ने में क्या पाप और बुराई हुई। जो कोई अपने लड़के को पढ़ाना चाहता है और किसी उस्ताद के पास उसको भेजता है, तो जो वह उस्ताद क़ाबिल पढ़ाने के है तो ख़ैर नहीं तो फ़ौरन उसको दूसरा उस्ताद तलाश करके उसके सुपुर्द करता है, और जो विद्यार्थी कि एक उस्ताद से पढ़ता है और जब उस को ज़्यादा इल्म की चाह होती है या बड़ी २ किताबें पढ़ना चाहता है कि जो वह उस्ताद नहीं पढ़ा सकता और समझा सकता है, तो वह दूसरे उस्ताद को जो उससे ज़्यादा इल्म रखता है तलाश करके उससे इल्म पढ़ना शुरू करता है, जो वह यह टेक बांधता कि एक उस्ताद करके दूसरा नहीं करना चाहिये, या जो लड़के मदरसे में एक दरजे में पढ़ते हैं, वह उमर भर उसी उस्ताद से पढ़ने का इरादा करें, और ऊंचे दरजे में चढ़ना न चाहें, या दरजा चढ़ने पर भी उस उस्ताद को न छोड़ें, तो ये सब कौदन रहेंगे, और उन को तरक़्क़ी इल्म की कभी हासिल न होगी। इसी तरह जो बंशावली गुरू या अपने पति को गुरू मान कर बैठ रहेंगे, वे परमार्थ में हमेशा कौदन और मूरख बने रहेंगे, और उनको कुछ परमार्थी फ़ायदा हासिल न होगा। संतों ने कहा है कि :—

सुरत शब्द बिन जो गुरु होई ।
ताको छोड़ो पाप कटा ॥

दोहा

ओछे गुरु की टेक को, तजत न कीजै बार ।
द्वार न पावै शब्द का, भटके बारम्बार ॥
गुरू मिला है हद्द का, बेहद का गुरु और ।
बेहद का गुरु जब मिले, तब लगे ठिकाना ठौर ॥

गुरू सोई जो शब्द सनेही ।
शब्द बिना दूसर नहिं सेई ॥
शब्द कमावे सो गुरु पूरा ।
उन चरनन की होजा धूरा ॥
और पहिचान करो मत कोई ।
लच्छ अलच्छ न देखो सोई ॥
शब्द भेद लेकर तुम उनसे ।
शब्द कमाओ तुम तन मन से ॥

अब जो कोई ऐसी टेक बांधते हैं कि एक गुरू करके दूसरा नहीं करना चाहते उनको जानना चाहिये कि उनके मन में परमार्थ की चाह बिल्कुल नहीं है, नहीं तो वह परख कर गुरू धारन करते या जो गुरू पुरानी रसम के मुवाफ़िक उन दिनों में कि जब परमार्थ का खोज और शौक़ नहीं था कर लिया

था तो फिर सच्चा और पूरा गुरू खोज कर धारन करते, लेकिन संत अथवा राधास्वामी मत का उपदेश संसारी और टेकी जीवों के वास्ते नहीं है, सिर्फ़ उन लोगों के वास्ते है कि जिनको अपना और दुनिया की हालत देखकर सच्ची बिरह और ख़्वाहिश अपने जीव के कल्यान की हृदय में उपजी है। ऐसों की शान्ति सिवाय सच्चे और पूरे गुरू के कोई दूसरा नहीं कर सकता है, और इन्हीं जीवों को पूरे गुरू की क़दर और पहिचान भी आवेगी—कहा है कि—

गुरू कीजै जान। और पानी पीजै छान॥

जिसने बेजाने और समझ गुरू कर लिया उसे अंत में पछताना पड़ेगा॥

आज कल के बंशावली गुरुओं का यह हाल है कि अपने चेले को वसीयत करते हैं कि बाद उनके मरने के उनकी गया करे ताकि उनके जीव को स्वर्ग मिले। जब ऐसे गुरू मिले कि वह आप चेले की गया करने पर अपने जीव का कुछ कल्यान समझते हैं, तो अफ़सोस है ऐसी गुरुवाई के नाम पर, और हजार अफ़सोस है ऐसे मूर्खों की समझ पर कि जो ऐसे नादानों को अपना गुरू बनाते हैं। ऐसे गुरू और चेले ज़रूर संतों की और उनके सेवकों को निन्द्या

करेंगे, और उस निन्द्या के बचनों को वे जीव सुनेंगे और मानेंगे जो इन नादान और मूरख गुरू चेलों से भी बढ़ कर मूरख और निपट संसारी हैं ॥

४-चौथा औरतों के सतसंग में शामिल होने से लिहाज परदः का न रहना। मालूम होवे कि औरत और मर्द में सुरत बराबर मौजूद है और ताक़त भी उसकी सिवाय जिसमानी यानी देही के क़ूवत की (जिस में थोड़ी कमी व बेशी है) बराबर है ॥

देखो आज कल लड़कियां मदरसे में पढ़कर मिस्ल लड़कों के बी० ए० और एम० ए० और डाक्तरी का दर्जा हासिल करती हैं, और इसी तरह भक्तमाल की पोथी के पढ़ने से मालूम होगा कि पिछले वक्तों में बहुत सी स्त्रियां भक्त हुईं, और उनको भारी दर्जा मालिक के दरबार से मिला कि अब तक उनका नाम बड़े भाव और प्रेम के साथ लोग लेते हैं ॥

अब विचारना चाहिये कि यह दर्जे विद्या या भक्ती और परमार्थ के परदः में रहने से कभी हासिल नहीं हो सक्ते, और जो कि शुरू से बराबर परदे में रहती हैं उनकी समझ और अक़्ल निहायत मोटी और ओछी होती है, और अपने जीव के कल्यान की उन को कुछ भी ख़बर नहीं होती ॥

किस क़दर अफ़सोस की बात है कि जो औरतें क़ाबिल बिद्या के पढ़ने और भक्ती की कमाई करने के हैं, वे सिर्फ़ नीच से नीच कामों में जो कि दो चार रुपये महीने की मज़दूरनी कर सक्ती हैं लगाई जावे, और विद्या और भक्ती के फ़ायदे से महरूम रही आवें, बल्कि ऐसी अटकें उनके वास्ते लगाई जावें कि वे इस दौलत से बिलकुल बे नसीब रहे ॥

बहुत बिद्या पढ़ने की इस क़दर ज़रूरत नहीं है, लेकिन इतना जरूर चाहिये कि जिस में वह अपने मा बाप भाई बन्धु और ख़ाविन्द और लड़के को चिट्ठी लिख पढ़ सकें, और अपने घर का हिसाब किताब लिख लेवें और अपने मत की परमार्थी पोथी पढ़ कर समझ लेवें ॥

अब ख़्याल करो कि जो उनको इस क़दर ताक़त हासिल हो गई, और रास्ता भी परमार्थी अभ्यास का बता दिया गया, तो चाहे वे घर में रहें, और चाहे परदेश में अपने पति के साथ उनको अकेले रहना पड़े, उनके पास हमेशा सच्चा और निर्मल और प्रेम पैदा करने और बढ़ाने वाला संगी पोथी के स्वरूप में मौजूद रहेगा। जब सब कारोबार घर के से फुरसत हुई उसी वक्त पोथी को पढ़ने लगें तो किस क़दर

फ़ायदा होगा कि उनका वक़्त मालिक की याद या अपने मन और इन्द्रियों की सम्हाल के ख्याल में बसर होगा, और निन्द्या अस्तुती के पाप और फ़ज़ूल इधर उधर की बातें और इसकी उसकी गिलह और चबाव करने से बच जावेंगी ॥

स्त्रियों के जाहिल और मूरख रखने का सारा पाप और भार उनके पुरुषों की गर्दन पर है, क्योंकि जो पुरुष आप सच्चा परमार्थी होगा वह अपनी स्त्री को भी ज़रूर शरीक करेगा, और जो आप थोड़ी विद्या की क़दर जानेगा कि जिस से उसकी स्त्री उसको और वह अपनी स्त्री को चिट्ठी पत्री भेज सके, और घर का हिसाब किताब लिख सके, तो वह ज़रूर अपनी स्त्री को इस क़दर विद्या ज़ोर देकर पढ़वावेगा, और उसको पोथी पढ़ने और परमार्थी अभ्यास करने पर तवज्जह दिलाता रहेगा, कि जिस से उस स्त्री का और भी उस पुरुष का इस दुनिया में और फिर परलोक में भला होवे और पाप करमों से बचें ॥

और जो आप पूरे गुरू से नहीं मिले और कुछ परमार्थ की कार नहीं करते, और अपने वक़्त और अपनी नरदेही की क़दर नहीं जानते, वे आपही

अभागी रहे और अपनी स्त्री को भी अभागी बनावेंगे, और इस पाप का फल आगे भोगेंगे क्योंकि जिसने नरदेही पाकर उसको पशू की तरह मिहनत मज़दूरी और खान पान में खर्च किया, वह मनुष्य चाहे स्त्री होवे चाहे पुरुष पशू की समान है ॥

अब परदे के मुआमिले में ख्याल करो कि किस क़दर स्त्रियों की परदादारी लोग कर सक्ते हैं। जब स्त्रियां गंगा जमुना नहाने जाती हैं, या तीरथों के मेले और तमाशे में जाती हैं, और जाबजा तीरथ के मुक़ाम पर मन्दिरों में दर्शन करती फिरती हैं, या अपनी ज़ात और बिरादरी में तीज त्यौहार और ज्यौनार और सियापा और मुहकान वगैरः में जाती हैं, या जब अपने गुरू या इष्टदेव की सवारी के साथ बाज़ार में निकलती हैं, या सीतला और बराही और देवी भवानी या और कोई देवता की ख़ास २ वक्त पर पूजा को जाती हैं उस वक्त सरे बाज़ार और गली और कूचों में बेतकल्लुफ़ मुंह खोले हुए और उमदा उमदा पोशाक और ज़ेवर पहने हुए बराबर निकलती हैं, और सब की नज़र उन पर पड़ती है, और मन्दिरों में और मेलों में बराबर औरत और मर्दों की भीड़ भाड़ में धक्के खाती हैं, और दरिया पर

सैकड़ों मर्द और औरत के रूबरू नहाती हैं। अब बिचारो कि वहां किस क़दर परदा क़ायम रहता है और किस क़दर ग़ैर आदमियों की रोक और अटक हो सकती है–सिवाय इसके जब रेल में सवार हो कर पहरों और दिनों का सफ़र दिन और रात में करती हैं, और उसी रेल गाड़ी में ग़ैर मर्द ऊंची और नीची ज़ात वाले, और ग़ैर क़ौम वाले भी बैठे हुए हैं, और स्टेशन पर उतर कर भीड़ भाड़ में होकर गुज़रती हैं, वहां किस क़दर परदा हो सकता है, और शादी और ग़मी के वक़्त अपने घरों में किस क़दर मर्द जमा होते हैं, और वहां औरत और मर्द मिल-कर काररवाई करते हैं॥

और अब सतसंग का हाल सुनिये, कि वहां सिर्फ़ उमर रसीदह यानी बूढ़ी औरतें ख़ास कर शामिल होती हैं, और उनके साथ भी कोई न कोई उनका ख़ास रिश्तेदार संग होता है, और पहिले तो नौज-वान औरतें आम सतसंग में शामिल नहीं की जाती हैं, अलहिदा परदे में बिठाई जाती हैं, कि जहां से परदे में वे बचन सुन सकती हैं, और जो कोई सत-संग में कभी २ बैठती हैं तो उनके ख़ाविन्द या मा बाप या भाई या लड़के उनके संग होते हैं, और एक

तरफ़ जो औरतों के वास्ते मुक़र्रर है, और जहां कोई मर्द नहीं बैठता है, उनकी बैठक रहती है, और जब सतसंग बरख़ास्त होता है, तब उसी वक़्त अपने रिश्तेदारों के साथ बाद उठ जाने मरदों के, अपने २ घर चली जाती हैं, और जो कोई ठहरती हैं तो वह ज़नाने मकान में बैठती हैं, मर्दों की सफ़ में कोई औरत नहीं बैठती, और न किसी की आपस में बात चीत होती है, बल्कि मर्दों की भी आपस में बात चीत बहुत कम होती है, क्योंकि सब के सब या तो सतसंग के बचनों के सुनने में मशग़ूल रहते हैं, और बाद सतसंग के अपने अभ्यास में अलहिदा बैठ जाते हैं, औरतें ज़नाने मकान में और मर्द मर्दाने मकान में, और जब सतसंग में बैठती हैं, तो चादर ओढ़ कर कि जिससे उनका सर्ब अंग ढका रहता है, और सिवाय चन्द पुरानी और बूढ़ी औरतों के बाक़ी औरतें और ख़ास कर जवान औरतें कभी २ रात के सतसंग में आती हैं, हर रोज़ कोई नहीं आतीं, और जब आती हैं अपने ख़ास रिश्तेदारों के संग, और उन्हीं के संग घर को बाद सतसंग के वापस जाती हैं, और दिन के वक़्त जवान औरतें बहुत कम सतसंग में शामिल होती हैं, और जो कभी होती हैं तो वह परदे

के मकान में जो सतसंग घर से मिला हुआ है बैठती हैं। कोई २ साहेब अपनी स्त्री वा रिश्तेदार औरत का दूर और परदे में बैठना पसंद नहीं करते, तो उनकी स्त्री या रिश्तेदार औरत उनकी ख़ास इजाजत से चादर ओढ़ कर सतसंग में बैठती हैं, मगर ऐसी सूरत बहुत कम होती है, यानी जब परदेसी लोग आते है, और हफ़्ता अशरह या दो हफ़्ता ठहरते हैं, या कोई कभी एक या दो महीने ठहरते है, तो उनके संग जो औरतें ख़ास सतसंग और भजन के वास्ते आती हैं वे अलबत्ता अपने परमार्थी शौक़ और उमंग के साथ सतसंग मे बैठती हैं, मगर उनकी नज़र हमेशा दर्शन पर जमी रहती है, और इसी तरह कुल मर्द और औरत अपनी नज़र सतसंग में बचन कहने वाले पर जमाये रखते है-यह एक क़िस्म का खास अभ्यास सतसंग में जारी है, कि या तो नजर जमा कर बैठते हैं या आंखें बंद करके ध्यान की हालत में बैठते है, फिर बहुत कम ऐसा होता है, कि मर्द या औरत एक दूसरे को देखें, सब अपने २ अंतरी आनंद और फ़ायदे के वास्ते ध्यान के क़ायदे के मुवाफ़िक़ नज़र अपनी बाहर बचन सुनाने वाले पर और अंतर में ध्यान के स्वरूप पर जमा कर बैठते

हैं। अब ख़याल करो कि इस में किस क़दर बे पर-दगी है। सिर्फ़ मालिक की दया और दर्शन के प्राप्ती के वास्ते यह सब काम किया जाता है, और दुनिया और उसके ख़यालात उस वक़्त वहां बहुत दूर रहते हैं, और दूसरे मुक़ामों और मौक़ों पर जहां औरतें बाहर निकलती हैं, वहां कोई काम ख़ास परमार्थी नहीं करती हैं, बल्कि सैर और तमाशे देखती हैं। फिर ख़याल करो कि उस हालत में, और सतसंग की हालत में, किस क़दर भारी फ़र्क़ है, और वहां के और यहां के फ़ायदे में किस क़दर भारी तफ़ावत है॥

ऐसे सतसंग में जो कोई मर्द या औरत जावेंगे, वह अपना परलोक का फ़ायदा हासिल कर सकते हैं, और वह जुगत उनको मालूम हो सकती है, कि जिसकी कमाई घर बैठे करके मालिक के चरनों का रस और आनंद अपने घट में ले सकते हैं। कभी २ सतसंग में जाना उनका ज़रूर होगा, कि जिस से वे अपने अ-भ्यास में मदद और तरक़्क़ी के वास्ते हिदायत हासिल करें, और जो कुछ कमाई बनी है, उसका हाल ज़ाहिर करके जो कुछ उसमें कोई बात इसलाहतलब होवे, उसकी दुरुस्ती करावें। यह घट में अभ्यास करने की जुगत जो संतों ने, और ख़ास कर इस ज़माने में

सतगुरु राधास्वामी दयाल ने अब दया करके जारी फ़रमाई, और जिसको औरत और मर्द और लड़का और जवान और बूढ़ा आसानी के साथ, बग़ैर किसी ख़ौफ़ और ख़तरे के करके, अपने जीव का कल्यान होता हुआ, जीते जी अपनी आंख से देख सकता है, और किसी मत या पंथ या समाज में जो आज कल जारी हैं, वह आसान जुगत किसी को नहीं मालूम है, वह सिर्फ़ राधास्वामी मत की संगत में मालूम हो सक्ती है। जिस मर्द या औरत को अपने जीव के कल्यान की सच्ची चाह और ज़रूरत होवे, वह उस जुगत को राधास्वामी संगत से दरियाफ़्त करके, उसका अभ्यास गुप्त अपने घर में बैठकर कर सकता है, और अपनी नरदेही जीते जी घट का आनन्द और रस लेकर सुफल कर सक्ता है, और जो इस बात को नहीं मानते, उनको इख़्तियार है, पर अंत को उनको बहुत पछताना पड़ेगा, और उस वक़्त अफ़सोस करके हाथ मलने से कुछ फ़ायदा न होगा॥

४—अब ख़्याल करो कि ऐसे सतसंग में शामिल होने और ऐसे सच्चे और पूरे मत की पोथियों के पढ़ने, या उसकी जुगत की अंतरमुख अभ्यास करने से, किसी मर्द या औरत और ख़ास कर बेवा औरत

के रोकने में किस क़दर उस जीव का नुक़सान और हर्ज होगा, और ऐसे रोकने और अटक करनेवालों को किस क़दर पाप होगा ॥

अलबत्ता एहतियात और सम्हाल हर काम में ज़रूर है, चाहे मर्द होवे या औरत, उसको एहतियात और होशियारी और सम्हाल के साथ, अपना बर्ताव सतसंग में, और भी अपने मकान पर करना चाहिये, और जो इस में किसी क़दर ग़फ़लत या बेपरवाही नज़र आवे, और जो कोई उसको होशियार करे, और एहतियात का तरीक़ा बतावे, वह सच्चा हितकारी है, और उसका बचन मानना ज़रूर और मुनासिब है-क्योंकि परमार्थियों पर भी फ़र्ज़ है, कि जहां तक मुमकिन होवे, ऐसी चाल ढाल इख़्तियार करें, कि जिस में दुनिया के कारोबार में ख़लल न पड़े, और परमार्थ उनका बनता जावे, और इस वास्ते औसत यानी मध्य के दरजे की चाल चलना हर काम में चाहे परमार्थी होवे या दुनियवी हमेशा फ़ायदेमन्द होता है, और खैंच और तान में इस सिरे पर या उस सिरे पर हमेशा दुख या तकलीफ़ पैदा होती है। जिस क़दर मुनासिब और ज़रूरी एहतियात और परदा औरतों को चाहिये, वह उनको रखना

चाहिये, और जिस क़दर मरदों को एहतियात ज़रूर और मुनासिब है, उसके मुआफ़िक़ उनको बर्ताव करना चाहिये, मगर सतसंग और जुगत लेकर अभ्यास करना हर एक को मुनासिब और ज़रूर है। संतों ने कहा है कि–

लाज जग काज बिगाड़ारी। मोह जग फन्दा डारारी॥

दोहा

जो कामिन परदे रहें, और सुनें न गुरमुख बात।
सो तो होंगी शूकरी, फिरें उघाड़े गात॥ १॥

मुनासिब दर्जे की लाज और एहतियात दुनिया की ज़रूर है, और ग़ैर वाजिब और फ़ज़ूल लाज और परदा कि जिस मे परमार्थ का अकाज होवे नहीं करना चाहिये। अलबत्ता गहरे प्रेमी परमार्थियों की चाल सब से निराली होगी, और इसी तरह दुनिया में जिस किसी को किसी बात का गहरा शौक़ हो गया है, उसका बर्ताव भी और सब से न्यारा होगा, पर ऐसे लोग क्या परमार्थ और क्या दुनिया में बहुत कम और बिरले होते हैं, और उन पर किसी का हुक्म नहीं चल सकता और न वह किसी क़ायदे के पाबंद हो सकते हैं॥

अर्थ शब्द नम्बर २० सफ़ा ८३६ पोथी सार बचन नज़म ॥

कड़ी

१—अंत हुआ जग माहिं। आदि घर अपना भूली ॥

अर्थ

सुरत भोगों में फंस कर जड़खान में उतर गई और संतों के दसवें द्वार को जो तीन लोक की रचना का आदि है और जहां से सुरत पिंड में उतरी थी भूल गई ॥

कड़ी

२—मध्य गही पुन आय। अंत को फिर ले तोली ॥

अर्थ

और फिर मध्य यानी मृत्यु लोक में नरदेही पाकर तिरलोकी के अंत पद की जो कि वही दसवां द्वार है सुरत ने ख़बर ली ॥

कड़ी

३—आदि अंत मध्य छोड़। गही जा अपनी मूली ॥

अर्थ

और फिर इन तीनों स्थान यानी दसवां द्वार और मृत्युलोक और जड़खान को छोड़ कर अपने मूल

पद यानी सत्तपुर्ष राधास्वामी देश।में पहुंची, या उस का निशान और इष्ट बांधकर उस तरफ़ को चलने लगी ॥

कड़ी

४–जीवन पद्वी मिले । चढ़े जो अब्र के सूली ॥

अर्थ

सूली मतलब उस धार से है जो सहसदलकंवल से गुदा चक्र तक आई है, सो जो कोई इस धार को पकड़ कर ऊपर को चढ़े, वही छठे चक्र के पार जा कर मौत को जीत लेगा और फिर सत्तलोक में पहुंच कर अमर हो जावेगा ॥

कड़ी

५–ससे मारिया सिंह । कौन यह समझे बोली ॥

अर्थ

और फिर वही सुरत जो कि मोवाफ़िक़ ख़रगोश के पिंड में ग़रीब और निबल थी दसवें द्वार में पहुंच कर सिंह यानी काल को मार लेगी ॥

कड़ी

६–मात पिता दोउ जने। पूत ने बैठ खटोली ॥

अर्थ

जब सुरत गर्भ में यानी षटचक्र के देश में आई

तब पहिले उसने ब्रह्मांड और पिंड की रचना करी, यानी माया और ब्रह्म के पद उसी से प्रगट हुए, और जब सुरत जनमी यानी जीव गर्भ से बाहर आया, तब वही जीव पिंड में उतर कर बैठने से माया और ब्रह्म का पुत्र हो गया ॥

कड़ी

७-मछली चढ़ी अकाश। धरन कर डारी पोली ॥

अर्थ

और जब सुरत मछली की तरह शब्द की धार को पकड़ कर उलटी यानी ऊपर को चढ़ी तब वह धरन यानी पिंड को पोला या ख़ाली कर गई ॥

कड़ी

८-चान्द सूर्य्य पाताल से। निकले पट खोली ॥

अर्थ

और जब चढ़ते २ दसवें द्वार के परे गई तब सूरज और चांद यानी त्रिकुटी और सुन्न स्थान दोनों पाताल यानी नीचे नज़राई दिये ॥

कड़ी

९-चोरन पकड़ा साह। साह ने पहरी चोली ॥

अर्थ

जब सुरत यानी जीव का उतार हुआ तब काल

और कमर और काम क्रोध लोभ मोह और अहंकार वग़ैरह चोरों ने इसको घेर कर बंद यानी चोले में गिरिफ़्तार कर लिया ॥

कड़ी

१०–अमृत पी पी मरे । ज़हर की गांठी खोली ॥

अर्थ

और जब वही जीव यानी सुरत उलट कर अपने घर की तरफ़ को चली और ब्रह्मांड के परे चढ़ गई और अमी की धारा बहाने लगी तब वही सब चोर अमृत पी कर मर गये और उनकी ज़हर की गांठ खुल कर भस्म हो गई ॥

कड़ी

११–राधास्वामी गाइया । यह भेद अमोली ॥

अर्थ

राधास्वामी ने यह अमोल पद का अमोल भेद गाया ॥

कड़ी

१२–सन्त बिना को बूझि है । यह मरम अतोली ॥

अर्थ

और इसको बिना संत के कोई नहीं समझ सकता है ॥

कड़ी

१३–अजा मारिया भेड़िया। ले मिरगन टोली ॥

अर्थ

अजा बकरी को कहते हैं, सो यह सूरत सुरत की पिंड में थी, यानी काल भेड़िये का खाजा हो रही थी, सो जब सतगुरु की कृपा से उलट कर ब्रह्मांड और उस के परे पहुंची, तो मन और इन्द्रियों को संग लेकर काल भेड़िये पर चढ़ आई और उसको मार दिया ॥

कड़ी

१४–सुरत शब्द मेला भया। ले अनरस घोली ॥

अर्थ

और तब सुरत का शब्द के साथ मेला हो गया यानी अमृत का भंडार खोल दिया ॥

अर्थ शब्द नम्बर २१ ६३६ सफ़ा पोथी सार बचन नज़म

कड़ी

१–गुरु उलटी बात बताई। मूरखता ख़ूब सिखाई ॥

अर्थ

गुरू ने यह उलटी बात बताई, कि संसार में मूर्ख हो करके बर्त यानी चतुराई छोड़ दे, तो तेरा कोई दामन नहीं पकड़ सकेगा ॥

और दूसरे यह कि मूर यानी मूल पद की रक्षा और सम्हाल रख, यानी इस तरफ़ से उलट कर राधास्वामी के चरनों को दृढ़ करके पकड़ ॥

कड़ी

२-सोते ने जमा कमाई । जगते ने माल गंवाई ॥

अर्थ

जिस किसी ने संसार की तरफ़ से उदास होकर इसके कारोबार में दख़ल देना छोड़ दिया, यानी इस तरफ़ से सो गया और परमार्थ में लग गया, उसी ने जमा हासिल की, यानी परमार्थ की कमाई करके प्रेम की दौलत पाई, और जो संसार की तरफ़ मुतवज्जह रहा, और बहुत होशियारी और शौक़ से उसके कारोबार करता रहा, उसी ने परमार्थ की दौलत खोई, और अपनी चेतन्यता मुफ़्त गंवा दी ॥

कड़ी

३-बैठे ने रस्ता काटा । चलते ने बाट न पाई ॥

अर्थ

जो मन कि निश्चल हो करके घट में बैठा, वही ऊंचे की तरफ़ चढ़ने लगा, और परमार्थ का रास्ता तै करता हुआ घर की तरफ चला, और जो मन कि चंचल रहा, और इधर उधर संसार में दौड़ता रहा,

उसको घर का रास्ता नहीं मिला, और न उस तरफ़ चला ॥

कड़ी

४–धरती चढ़ गगना आई । सुन्नो पाताल समाई ॥

अर्थ

जो सुरत कि अभ्यास करके ब्रह्माण्ड में और उसके परे पहुंची, उसके संग धरती यानी माया भी जिसका आदि निकास त्रिकुटी से हुआ है, उलट कर अपने असल में जा मिली, और जो सुरत कि संसार में लिपट रही, वह माया के साथ नीचे से नीचे के मुक़ाम तक उतरती चली गई ॥

कड़ी

५–चोरी से ख़ाविन्द रीझा । सच्चे को मार खपाई ॥

अर्थ

जो शख़्स कि अपने परमार्थ की कमाई और तरक़्क़ी को जगत से छिपाये हुए चला, उससे मालिक प्रसन्न हुआ, और जिस किसी ने कि सचौटी के साथ अपने परमार्थ का भेद और कमाई का हाल जगत के जीवों से खोलकर कहा, उसी को अनेक तरह के बिघनों से मुक़ाबला करना पड़ा, और सख़्त तकलीफ़ उठानी पड़ी, और उसके परमार्थ में घाटा हुआ ॥

कड़ी

६–अगिनी को जाड़ा लागा। बरषा से सूखी साखा ॥

अर्थ

जब सुरत गगन की तरफ़ को चढ़ने लगी, तब अग्नी यानी माया (जो सुरत की मदद से चेतन्य थी) कांपने लगी, यानी उसकी चतन्यता खिंच गई, और जब अमृत की बरषा अंतर में चढ़ने वाली सुरत पर होने लगी, तब बसबब खिंचाव और सिमटाव सुरत के, जो उसकी धारें नीचे की तरफ़ जारी थीं, वह सूखने लगीं और सिमटती चलीं ॥

कड़ी

७–रोटी नित भूखी तरसे। पानी अब प्यासा तड़पे ॥

अर्थ

और तब रोटी यानी माया और उसके पदार्थ जो सुरत की धार से चेतन्य थे, अब उस चेतन्यता के लिये भूखे तड़पते हैं, और इसी तरह पानी यानी मन सुरत की चेतन्य धार के वास्ते प्यासा तड़पने लगा ॥

कड़ी

८–सोते पर खाट बिछाई। जगते को सुषपति आई ॥

अर्थ

जो परमार्थ की तरफ़ से ग़ाफ़िल यानी सोता रहा, वह माया के तले यानी षटचक्कर में दबा और फंसा रहा, और जो परमार्थ की कमाई चेत कर और होशियारी के साथ करने लगा, वह पिंड और संसार की तरफ़ से बेख़बर होता गया ॥

कड़ी

९–बंझा नित जनती हारी। जनती पुन बांझ कहाई ॥

बंझा यानी माया से (जब कि सुरत उसके घेर में उतर कर आई) अनेक प्रकार की रचना और अनेक पदार्थ पैदा हुए, और जब सुरत यानी जनती और असल करता उलट कर पिंड और ब्रह्माण्ड के परे पहुंची, तब सब रचना सिमट गई, और वह अकेली अपने घर को तरफ़ सिधारी ॥

कड़ी

१०–घोड़े पर पृथ्वी दौड़ी। ऊंटन चढ़ गगना फोड़ी ॥

अर्थ

जब कि सुरत जो पिंड में फंस कर देह यानी पृथ्वी रूप हो रही थी, उलट कर ब्रह्मांड की तरफ़ चली, तो वह मन रूपी घोड़े पर सवार होकर दौड़ी, और तब ही ऊंट यानी स्वांसा अथवा प्राण उलट

कर और गगन को फोड़ कर चढ़ गई ॥

कड़ी

११–राधास्वामी मौज दिखाई। सूरत अब शब्द लगाई॥

खुलासा इस शब्द का यह है कि राधास्वामी ने अपनी मेहर और मौज से सुरत को चढ़ा कर शब्द से मिला दिया ॥

अर्थ शब्द नम्बर २२ सफ़ा ६४२
पोथी सार वचन नज़म

कड़ी

१--सुनरी सखी इक मरम जनाऊं।
नई बात अब तोहि सुनाऊं ॥

अर्थ

हे सखी तुझको एक भेद जनाता हूं और नई बात सुनाता हूं ॥

कड़ी

२--दिन बिच नाचत चन्द दिखाऊं।
रैन उदय दिनकर दरसाऊं ॥

अर्थ

सुन्न में जहां कि सदा रोशनी रहती है यानी दिन रहता है, चन्द्रमा स्वरूप नज़र आता है, और त्रिकुटी के मुक़ाम पर जहां से कि माया यानी अंधेरा और रात शुरू हुई, सूरज रूप रोशनी देता है ॥

कड़ी

३--अगिन पूतरी जल से सिंचाऊं ।
जल की रम्भा अगिन नचाऊं ॥

अर्थ

यानी सहसदलकँवल में जोत स्वरूप अमृत की जल धार से (जो ऊंचे से आती है) रोशन है, और अमृत धार के संग जो धुन सहसदलकँवल से नीचे उतरी, वह अग्नी यानी माया के घेर में केल कर रही है ॥

कड़ी

४--गगन माहिं पृथ्वी चलवाऊं ।
पृथ्वी मध्य गगन लखवाऊं ॥

अर्थ

यानी आकाश में पृथ्वी यानी देह की बासी सुरत को चढ़ाऊं, और पृथ्वी यानी देही में गगन यानी आकाश का लखाव करूं ॥

कड़ी

५--व्यौम चलाय पवन थमवाऊं ।
सिंह मार और स्यार जिताऊं ॥

अर्थ

व्यौम यानी मन आकाश जब सुरत को चढ़ाई के

वक़्त ऊपर को सिमटे, तब प्राण यानी पवन धीमी होकर ठहर जाती है। स्यार जो जीव से मुराद है वह गगन में चढ़कर सिंह यानी काल को जीत लेता है॥

कड़ी

६–दुरबल से बलवान गिराऊं।
त्रिकुटी चढ़ यह धूम मचाऊं॥

अर्थ

दुरबल वही जीव या सुरत से मतलब है, जो पिंड में उतरकर निहायत बेताक़त हो जाती है, और त्रिकुटी में चढ़कर काल बली को पछाड़ कर ज़ेर कर लेती है॥

कड़ी

७–कागन झुण्ड हंस करवाऊं।
लूकन को अब सूर दिखाऊं॥

अर्थ

अनेक जीवों को जो पिंड में निपट काग यानी मनरूप होकर बर्त रहे है, दसवें द्वार में पहुंचा कर हंस स्वरूप बनाऊं, और निपट संसारी जो उल्लू के मुवाफ़िक मालिक की तरफ़ से अंधे और अजान हो रहे हैं, त्रिकुटी में पहुंचा कर सूरज ब्रह्म का दर्शन कराऊं॥

कड़ी

८–उलटी बात सभी कह गाऊं।
ऐसे समरथ राधास्वामी पाऊं॥

अर्थ

यह सब उलटी बातें समर्थ सतगुरु राधास्वामी दयाल की दया से सही करके दिखाई जा सकती हैं ॥

बचन ५१

राधास्वामी मत का अभ्यास और उसका फल

१-जो कोई सच्चे शौक़ के साथ राधास्वामी मत में इस मतलब से शामिल हुआ, कि अपने जीव का सच्चा कल्यान यानी उद्धार करावे, और देह के दुख सुख और जनम मरन के दुख से बच कर परम और अमर आनंद को प्राप्त होवे, उसको चाहिये कि शब्द भेदी और शब्द अभ्यासी गुरू ढूंढ़ कर सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल और उनके सतसंग की सच्ची सरन लेवे, और शब्द मारग की तरकीब दरियाफ़्त कर के नेम के साथ हर रोज दो बार तीन बार या चार बार अभ्यास करे, तो उसको जरूर थोड़ा बहुत रस मिलता रहेगा, और मन और सुरत उसके दिन २ पिंड देश से आहिस्ता २ अलहिदा होकर आकाश में और उसके परे घट में चढ़ेंगे, और एक दिन पिंड और ब्रह्मांड यानी माया की हद्द के पार पहुंच कर सुरत निरमाया देश यानी संतों के धाम में प्राप्त होकर

अमर और अजर आनंद पावेगी, और तब जनम मरन और देह के दुख सुख से सच्ची रिहाई हो जावेगी॥

२-सुरत शब्द मारग के अभ्यासी को घबराहट के साथ जल्दी करना, या निरास होकर अभ्यास छोड़ देना, किसी सूरत में मुनासिब नहीं है॥

देखो दुनिया में जिस काम का जिसको सच्चा शौक़ होता है वह उसको थोड़ा या बहुत दुरुस्ती के साथ अंजाम देता है, और कोई बिघन या ज़ाहिरी तकलीफ़ उसको उस काम के करने से रोक नहीं सकती, बल्कि जो मिहनत और तवज्जह वह उस काम के करने में करता है, उस मिहनत में उसको रस आता है, और वह नागवार नहीं मालूम होती, और चाहे जिस क़दर उस काम के पूरे होने में देर लगे, वह जल्दी के सबब से निरास होकर उसको नहीं छोड़ता है, इसी तरह परमार्थ के अभ्यासियों को मज़बूती के साथ अपना अभ्यास जारी रखना चाहिये, और जो प्रतीत के साथ कि एक दिन दया ज़रूर होगी इस काम को प्रीत के संग करे जावेगा, तो वह कभी ख़ाली नहीं रहेगा, और राधास्वामी दयाल उसको जब तब जैसा २ मुनासिब समझेंगे दया करके अंतर में रस और आनंद बख़्शते जावेंगे॥

३–जो लड़का कि मदर्से में पढ़ने को भेजा जाता है उसको फ़ौरन पढ़ने का रस नहीं आता है, पर जो वह खौफ़ और दबाव के साथ पढ़ना कुछ अरसे तक हर रोज़ जारी रखता है तो रफ़्ता २ उसको मज़ा आता जाता है, और फिर इस क़दर शौक़ बढ़ जाता है कि कोई उसको रोके तो अपने काम को नहीं छोड़ता है, बल्कि दिन दिन उसको बढ़ाता जाता है, इसी तरह परमार्थ में भी पहिले ख़ौफ़ चौरासी और नरकों के दुख और जनम मरन और देह की तकलीफ़ों का और शौक़ अपने जीव के कल्यान और मालिक से मिलने का चाहिये, जो यह शौक़ और ख़ौफ़ सच्चा होगा (चाहे शुरू में थोड़ा होवे) तो ज़रूर परमार्थी काररवाई यानी अभ्यास हर रोज़ बने जावेगा, और उसमें थोड़ा बहुत रस भी आवेगा, और जिस क़दर दुरुस्ती से अभ्यास बनेगा यानी दुनिया के ख़ियालात छोड़ कर मन और सुरत वक़्त ध्यान के स्वरूप में और वक़्त भजन के शब्द में लगेंगे, उसी क़दर दिन २ रस बढ़ता जावेगा, और अभ्यास करने की आदत मज़बूत होती जावेगी॥

४–जैसे वर्ष छः महीने के बालक को किसी खाने पीने की चीज़ का स्वाद ख़ास कर मालूम नहीं होता है, पर हर रोज़ या अकसर ख़ास २ चीज़ों के खाने से

उसको उनके स्वाद की ख़बर पड़ती जाती है, और फिर स्वभाव और आदत के मुवाफ़िक़ उन्हीं चीज़ों का खाना उसको पसन्द आता है, इसी तरह शुरू अभ्यास में सब जीव बालकों के मुवाफ़िक़ अभ्यास के रस और आनन्द की तमीज़ कम कर सकते हैं, और यहां उसका सबब यह है कि पुरानी आदत के मुवाफ़िक़ दुनिया के ख्यालात उनको घेरे रहते हैं, पर जब कोई दिन इसी तरह अभ्यास जारी रक्खेंगे और दुनिया के खयालों को हटाते रहेंगे तो कुछ २ रस आने लगेगा, और फिर आदत के मुवाफ़िक़ उन को बग़ैर हर रोज़ अभ्यास करने के कल नहीं पड़ेगी, तो इस क़दर अरसे तक कि आदत मज़बूत और क़ायम हो जावे, हर एक परमार्थी को चाहे तेज़ या सुस्त शौक़वाला होवे, अपना अभ्यास जारी रखना ज़रूर और मुनासिब है ॥

५–मालूम होवे, कि जैसे कुल्ल रचना और हर चीज़ में तीन दरजे है--उत्तम मध्यम और निकृष्ट, यानी आला औसत और अदना, ऐसे ही आदमियों में भी तीन दरजे या क़िस्म हैं। जो उत्तम लोग हैं वह बचन जल्द समझते हैं और पकड़ते हैं, और संदेह और भरम भी उनके जल्द दूर हो जाते हैं, और

जब वे करनी यानी अभ्यास में लगते हैं, तब उनको अंतर में उसका फ़ायदा भी जल्द नजर आता है, क्योंकि वे जो काम करते हैं उस में सर्ब अंग करके लगते हैं ॥

और जो मध्यम जीव हैं उनको यह सब बातें थोड़े अरसे में हासिल होंगी ॥

और जो निकृष्ट जीव हैं, उनकी समझ भी बहुत मंद और सुस्त होगी और संशय भरम भी उनके मन में अक्सर पैदा होते रहेंगे, और वक्त़ अभ्यास के दुनिया के ख़याल भी उनको बहुत सतावेंगे। इस सबब से शुरू में भजन और ध्यान का रस भी उनको कभी कभी और बहुत कम आवेगा, पर जो वे नेम से हर रोज़ अभ्यास करे जावेंगे, तो थोड़े अरसे में आदत पड़ जावेगी, और जो बिघन या मुश्किल मन के लगने और रस के मिलने में पेश आवेंगे, वह भी हलके और दूर होते जावेंगे ॥

६—मालूम होवे कि बिना सुरत और मन के अन्तर में लगने और ठहरने के रस और आनन्द नहीं आ सकता है, इस वास्ते परमार्थी अभ्यासी को मुनासिब है, कि इस बात का ख़याल और होशियारी ज्यादा रक्खे, कि मन दुनिया की गुनावन और ख़यालों में

वक्त अभ्यास के न पड़ जावे, नहीं तो अभ्यास का रस नहीं आवेगा ॥

गौर करने की बात है कि जब कोई शख्स खाना खाता है और कई तरह की चीजें खाने में मौजूद हैं, उस वक्त जो उसका मन किसी और फ़िक्र और ख्याल में लग जावे, तो किसी चीज का स्वाद उसको मालूम नहीं होता है, यानी हर एक चीज़ को खाया भी और फिर खबर न पड़ी कि क्या चीज खाई और उसका कैसा स्वाद था।

फिर परमार्थी अभ्यास संतों का जो निहायत नाज़ुक है बगैर मन और सुरत के लगाये कैसे रसीला लग सकता है, जैसे कि खाते वक्त हर एक चीज़ ज़बान से मिली पर तवज्जह दूसरी तरफ़ होने से स्वाद नहीं मालूम हुआ, इसी तरह से अभ्यासी के मन और सुरत भी मुकाम के स्वरूप तक पहुंचे या शब्द की धार से भी थोड़े बहुत मिले, पर तवज्जह दूसरी तरफ़ यानी दुनिया के ख्यालों में लगी होने से भजन और ध्यान का रस बिलकुल नहीं मालूम हो सकता है। इस वास्ते यह बात बहुत ज़रूर है कि तवज्जह की सम्हाल अभ्यास के वक्त रक्खी जावे, यानी स्वरूप और शब्द में ध्यान लगा रहे तो रस आवेगा

नहीं तो ख़ाली उठना पड़ेगा और मन दुखी होवेगा ॥

७–बाज़े लोग जल्दबाज़ी करते हैं कि हमको जल्द अभ्यास का रस आवे और नहीं तो निरास होकर मत पर या अभ्यास के फ़ायदे पर या गुरू पर तान मारते हैं, और अपनी हालत और लियाक़त के दरजे की परख नहीं करते हैं, और न अपनी कसर दूर करते हैं, फिर कैसे रस आवे। वे लोग यह चाहा करते हैं कि राधास्वामी दयाल अपनी दया से उनका कारज बनावें, यानी उनके मन और इन्द्रियों को मोड़ कर परमार्थ में लगावें, और अभ्यास के वक्त उन के अंतर में तरंगें न उठने देवें, और अपनी मेहर और दया से आप उनको अंतर में रस देवें, लेकिन जो जुगत कि उनको वास्ते हटाने विघ्नों और लगाने मन के बताई जाती है उसमें तवज्जह कम करते हैं, और उसका अमल दरामद भी दुरुस्ती से नहीं करते, फिर ऐसे लोगों की दुआ कैसे जल्द मंजूर हो सकती है, पर जो वे अभ्यास नेम से करे जावेंगे, और कुछ मन और इन्द्रियों की भी सम्हाल रक्खेंगे, और जो नई जुगत उनको समझाई जावे थोड़ी बहुत उसके मुआ-फ़िक़ काररवाई करेंगे, तो थोड़े अरसे में ज़रूर उनको भजन का रस मिलने लगेगा ॥

८-ज़ाहिर है कि कुल काररवाई अंतर और बाहर की सुरत और मन की धार के वसीले से होती है, और जिस तरफ़ कि आदमी सच्ची तवज्जह करे उसी तरफ़ को धार उठ कर रवां होती है, और जैसी कार-रवाई होवे करती है । फिर जो कोई परमार्थी अभ्यास के वक्त् तवज्जह अपनी अंतर में ऊपर की तरफ़ जैसे कि संतों ने फ़रमाया है, स्वरूप में या शब्द में या किसी मुक़ाम पर जमावेगा, तो जरूर उस तरफ़ मन और सुरत और दृष्टी की धार उठ कर रवां होगी, और जब तक कि दूसरा ख़्याल पैदा न होगा यानी दूसरी धार नहीं जारी होगी, तब तक उस धार का मुख ऊंचे की तरफ़ अंतर में रहेगा, और इस खिंचाव और तनाव का ज़रूर थोड़ा बहुत रस आवेगा, क्योंकि ऊंचा देश बनिस्बत उस मुक़ाम के जहां कि जागृत में सुरत की बैठक है ज्यादा रसीला और आनन्द का स्थान है, जैसा कि इस कडी में कहा है :-

उलट घट झांको गुरु प्यारी। नैन दोऊ तानो हो न्यारी ॥

आदमी की तवज्जह के साथ ही जिस तरफ़ को होवे सुरत और मन और नज़र की धार उसी तरफ़ को रवां होती है ॥

९—इस वास्ते किसी परमार्थी अभ्यासी राधास्वामी मत को किसी हालत में निरास नहीं होना चाहिये, बल्कि होशियारी के साथ अभ्यास में मन और इन्द्रियें को थोड़ा बहुत रोक कर रखना चाहिये, और जो कोई कसर होवे उसके दूर करने का जतन दरियाफ़ करके उसके मुआफ़िक़ काररवाई करना चाहिये। थोड़े अरसे में हालत बदलनी शुरू होगी, और जब मन और इन्द्री थोड़े बहुत रस के आदी (आदतवाले) हो जावेंगे, तब वे आपही अभ्यास के मुक़र्रर किये हुए वक्त़ पर उस तरफ़ को तवज्जह के साथ लगेंगे, और सब बिघ्न आहिस्ता २ दूर होते जावेंगे, और आनन्द और रस मिलता जावेगा ॥

बचन ५२

राधास्वामी मत के अभ्यासियों को दुनियादारों और दूसरे मतों के लोगों से और ख़ास कर बाचक ज्ञानियों और सूफ़ियों से किस तरह बरताव करना चाहिये ॥

१—दुनियादारों के साथ बर्ताव—राधास्वामी मत के अभ्यासियों को दुनियादारों और बिरादरी के

लोगों से ज़रूरत के मुवाफ़िक़ बर्तना चाहिये, यानी गहरी प्रीत के साथ इनसे जल्द २ मिलना और बहुत देर इनके साथ बैठना नहीं चाहिये, सिर्फ़ इस क़दर कि जितनी जरूरत है इनसे मिलना और बात चीत करना मुनासिब है, और ज्यादा बरताव इनसे नहीं चाहिये, नहीं तो इनके स्वभाव और आदत और संसारी चाहें परमार्थी के मन में असर करेंगी, और उसके अभ्यास में ख़लल और हर्ज डालेंगी, और उसके प्रेम और भक्ती के क़ायदे और रीत के बर्ताव में भी कसर पड़ेगी ॥

२–बाहरमुखी पूजावालों के साथ बर्ताव–जो पिछले संतों के मत या और किसी मत के लोग बाहरमुखी मूरत या किसी निशान या ग्रन्थ या पोथी या किताब की पूजा करते हैं, और सिवाय पोथी या ग्रन्थ या किताब के पढ़ने और सुनने के दूसरा काम नहीं करते, और ग्रन्थ या पोथी या किताब के अंतरी अर्थ और घट के भेद से बिल्कुल वाक़िफ़ नहीं हैं, और न उसकी तलाश और तहक़ीक़ात करते हैं, बल्कि जो कोई उनको भेद की बात सुनावे तो मन और चित्त से सुनना भी नहीं चाहते है, ऐसे लोग सब टेकी हैं, उनसे भी राधास्वामी मतवालों को बचना

चाहिये, यानी उनके साथ मेल और दोस्ती मुनासिब नहीं है, क्योंकि यह लोग भी संसारी हैं, और मालिक का खोज और प्यार इनके मन में बिल्कुल नहीं है, और जो कोई उनसे मेल मिलाप रक्खेगा। उसको भी संसार की तरफ़ झुकावेंगे, और सच्चे परमार्थ की तरफ़ से अपने मुवाफ़िक़ बेपरवाह करदेंगे, और तरह २ के शक सच्चे परमार्थी के मन में डालने को तैयार होवेंगे, और कहेंगे कि संसार में रहकर जिस किसी ने मन और इंद्रियों के भोगों को नहीं भोगा, या भोगना नहीं चाहता है, वह नादान और अभागी है, या यह कि परमार्थ के ख्याली सुखों के वास्ते दुनिया के मौजूदा मज़े और रसों को छोड़ देना बिल्कुल बे-समझी की बात है ॥

३--कर्मकांडी और हठयोग के करनेवाले जो अनेक तरह के देही के दुख और कष्ट भोगते हैं--करमकांडी लोग अनेक तरह के सुखों की आसा इस लोक की या स्वर्ग और बैकुंठ लोक की बांध कर बाहरमुखी करम और करतूत करते हैं, और हठयोगी जो कोई २ अंग की सफ़ाई के वास्ते या बीमारी दूर करने को या कोई सिद्धी हासिल करने के लिये कष्ट और तकलीफ़ उठाते हैं, इन सब से भी राधास्वामी

मत के अभ्यासियों को दूर रहना चाहिये, और किसी हालत में इन से मेल और मिलाप परमार्थी रखना मुनासिब नहीं, बल्कि जो संसारी भाव में इनसे रिश्तेदारी या पिछली मुहब्बत या संग होवे, तो उस को आहिस्ता २ कम करना और सिर्फ़ ज़रूरत के मुवाफ़िक़ मिलना और बात चीत व्योहार की करना चाहिये, परमार्थी बात इन लोगों से करना ज़रूर नहीं, क्योंकि इनके मन में सच्चे मालिक का भाव और प्यार नहीं है, और न उसका खोज और तलाश है। यह तो संसार के या स्वर्ग और बैकुंठ के भोग बिलास के चाहनेवाले हैं, या दुनिया में तमाशा और खेल दिखाकर धन और मान बड़ाई के पैदा करनेवाले हैं, सच्चे परमार्थ की चाह इनके मन में बिल्कुल नहीं है, और न पैदा हो सकती है। इस वास्ते जो बचन बिलास या मिहनत इनके समझाने के वास्ते की जावेगी, वह मुफ़्त बरबाद जावेगी, और फिर क़ायल होकर यह लोग अपनी नादानी से संत मत की निन्द्या और हँसी करेंगे ॥

४--अन्तरी सुमिरन और ध्यानवालों के साथ बर्ताव--

यह लोग अन्तर में नाफ़ या हिरदे के अस्थान पर सुमिरन और ध्यान करते हैं, या नाम की ज़र्ब लगाते

हैं, या नाम की धुन नीचे से उठा कर दोनों आंखों या दोनों भवों के मध्य तक पहुंचाते हैं, या दायें बायें सुर से पूरक रेचक करके गायत्री मंत्र या दूसरे नामों का कुम्भक के साथ सुमिरन करते हैं, मगर इस अभ्यास में ठहराव दो तीन या चार मिनट से ज़्यादा नहीं होता, और जो कि ध्यान करते हैं, उसमें भी स्वरूप या अस्थान का भेद सही २ नहीं जानते, इस वास्ते इन सबका अभ्यास इन्हीं अस्थानों में पिंड के अंदर ख़तम हो जाता है ॥

यह सब लोग अपने तईं अन्तरमुख अभ्यासी समझते हैं, और इस क़दर सही है कि इनके अभ्यास से सफ़ाई और कुछ रस अन्तरी हासिल होता है, पर संतमत में यह भी बाहरमुखी शुमार किये जाते हैं, क्योंकि इनका अभ्यास नीचे के घट यानी छः चक्रों की हद्द में है। इन लोगों से भी राधास्वामी मत के अभ्यासियों को परमार्थी मेल मिलाप रखना ज़रूर नहीं है ॥

५—मुद्राओं का साधन करनेवालों से बर्ताव—इन लोगों में से दृष्टी और शब्द का साधन करनेवाले बेहतर हैं, पर उनका भी अभ्यास सहसदलकँवल के नीचे ख़तम हो जाता है, और आइन्दा का भेद और पता

उनको मालूम नहीं हैं—और शब्द और स्वरूप का अभ्यास इन्होंने सिर्फ़ मन के एकाग्र करने और ठहराने के वास्ते जारी रक्खा है, चढ़ाई बिल्कुल नहीं है, और न शब्द और शब्दी का भेद बयान करते हैं और न उसका खोज और तलाश है, इस वास्ते इन लोगों के साथ भी राधास्वामी मत के अभ्यासियों का मेल नहीं हो सकता। यह सब लोग थोड़ा २ आनन्द पाकर और कुछ प्रकाश देखकर तृप्त हो गये, और बसबब न मिलने पूरे गुरू के इतने ही में इस क़दर अहंकार इनको हो जाता है, कि इससे जियादा का भेद सुनना और समझना और उसके मुआफ़िक़ करनी करना नहीं चाहते, और जो ऊंचे का भेद मुआफ़िक़ संत मत उनको सुनाया जावे, तो हंसी करने को तैयार हो जाते हैं॥

६—अष्टाङ्ग योग के अभ्यासी—अष्टाङ्ग योग या प्राणायाम के करनेवाले इस वक़्त में बहुत कम होंगे, बल्कि ऐसा मालूम होता है, कि पूरा अभ्यासी इस योग का इस वक़्त में बिल्कुल नायाब है। जिस किसी ने यह अभ्यास शुरू भी किया, तो कोई न कोई बिघन या ख़तरे के सबब से उसका अभ्यास बन्द हो गया, या सख़्त बीमार पड़ गया। जो

कोई पूरा योगी मिले, तो वह संत मत की महिमा जल्द समझ कर उसके अभ्यास में शामिल हो जावेगा, पर जो शुरू करनेवाले इस अभ्यास के मिलते हैं, और उन्होंने प्राणायाम के वसीले से कोई चक्र भी नहीं बेधे, वे निहायत दर्जे के अहंकारी हो जाते हैं, और इस सबब से राधास्वामी मत के अभ्यासियों से उनका मेल किसी तरह नहीं हो सकता ॥

७–<u>वाममार्गी और भैरवी चक्र वाले</u>--इस फ़िरक़े में अभ्यासी बहुत कमयाब हैं, खान पान में सब के सब भूल रहे हैं और जो जो ज़ाहिरी रस्में इन्होंने जारी करी हैं, वे भी इस समय में निहायत नाक़िस फल की देने वाली हैं, क्योंकि महात्मा और समरथ अभ्यासी की गत और है, और जीवों की गत और। जो जीव महात्मा पुरुषों की चाल की बग़ैर उनका अभ्यास किये, याने बग़ैर मन और इन्द्रियों को बस किये नक़ल करेंगे, वे धोखा खावेंगे और माया के घेर में पड़े रहेंगे, पस यही हाल इस मत के लोगों का सुना जाता है। संत मत के अभ्यासियों को इनसे हमेशा दूर रहना, और इनके संग से क़तई परहेज़ करना चाहिये, और इनसे किसी क़िस्म की चर्चा या परमार्थी बचन बिलास करना

नहीं चाहिये, क्योंकि यह संतों के बचन को हरगिज़ नहीं मानेंगे—इनकी काररवाई बहुत नीचे के दर्जे की है, और सच्चे परमार्थ याने जीव के उद्धार का फ़िक्र इस फ़िरक़े में बहुत कम बल्कि बिल्कुल मालूम नहीं होता है ॥

८—वाचक ज्ञानी और सूफ़ी—इन लोगों से भी राधास्वामी मत के अभ्यासियों को मेल रखना मुनासिब नहीं है, क्योंकि इन साहबों ने बचन सच्चे और पूरे ज्ञानियों के पढ़ कर और अपनी एकता ब्रह्म के साथ बुद्धि से मानकर अभ्यास छोड़ दिया, और जो कोई इनको मिलता है उसको एकताई के बचन सुना कर और समझा कर ब्रह्म बना देते हैं, और चौरासी और नरकों के डर से आज़ाद कर देते हैं ॥

९—जो कोई संतमत के मुआफ़िक़ इनसे अभ्यास की निस्बत चर्चा करे और दरियाफ़्त करे कि तुमको ब्रह्मपद की प्राप्ती किस तरह हुई, तो जवाब देते हैं कि जाना आना कहां है, ब्रह्म सब जगह व्यापक है, और देह और जिस क़दर नाम रूप की रचना नजर आती है सब मिथ्या और भरम है, सिर्फ़ इसी क़दर काम करना है, कि ज्ञान के बचन को अच्छी तरह

से समझ कर अपने तईं ब्रह्म मानना और इसी निश्चय को पकाना और मज़बूत करना और मन और इन्द्री और देही और सब पदार्थों को जड़ समझना।

इन सब से ब्रह्म न्यारा है और निर्लेप है और पाप और पुन्य उसको नहीं लगते या छू सकते हैं, और जब ऐसा निश्चय पुख़्ता हो गया, तब विदेह मुक्ती का अधिकारी हो गया, यानी जब देह छूटेगी तब अपने निश्चय के मुवाफ़िक़ जीव चेतन्य देही वग़ैरः के बन्धन से छूट कर व्यापक चेतन्य से मिल जावेगा॥

२-अब समझना चाहिये कि जो चेतन्य इस मलीन माया के देश में व्यापक है वह सदा देहियों के बंधन में गिरफ़्तार रहता है, और जब तक कि देहियों के ख़ोल यानी आवर्ण अभ्यास करके दूर न किये जावेंगे, तब तक वह आज़ाद यानी बिदेह नहीं हो सकता है॥

वेदांत शास्त्र में दो दरजे माया के लिखे हैं एक शुद्ध सत्य प्रधान, दूसरा मलीन सत्य प्रधान, और शुद्ध ब्रह्म अथवा पार ब्रह्म पद इन दोनों दरजों के परे कहा है, और वास्ते जुदा होने माया के देश से योग अभ्यास की हिदायत की है कि अपने प्राणों को छः चक्र के पार चढ़ा कर ब्रह्म का दर्शन करे, और

फिर वहां से पार ब्रह्म पद में पहुंचे, तब सच्ची मुक्ती हासिल होगी और तबही शुद्ध ब्रह्म के साथ एकता होगी, उस वक्त जो बचन कि यह बाचक ज्ञानी पोथियों को पढ़ २ के कहते हैं सच्चे दरसेंगे, यानी सच्चा योगी अपने आपको वहां ब्रह्म स्वरूप देखेगा और वही ब्रह्म तमाम नीचे के देश यानी रचना में व्यापक नज़र आवेगा, और जब तक कि कोई अभ्यास करके ब्रह्म और पारब्रह्म पद तक न पहुंचे, तब तक एकताई के वचन कहना सिर्फ़ ज़बानी जमा ख़र्च है, असल में उनकी हालत नहीं बदलती, यानी अज्ञानियों के मुवाफ़िक़ यह बाचक ज्ञानी भी अविद्या के घेर में रह कर मन और इन्द्रियों के कहे में चल रहे है, और ब्रह्म या आत्मा का आनन्द एक ज़र्रा भी इनको प्राप्त नहीं होता, और न अपने रूप को देख सकते हैं और न ब्रह्म का दर्शन पाते हैं ॥

३–सिवाय इसके वेदान्त शास्त्र में यह भी लिखा है कि तीन शरीर यानी अस्थूल, सूक्ष्म और कारन और इन्हीं तीनों शरीरों के अन्तरगत पांच कोश है, और जीव चेतन्य की बैठक पांचवें कोश अन्न मई में है, जो कि सब से नीचे और बाहर है, और वह पांचों कोश यह है अन्नमई कोश यानी अस्थूल शरीर,

प्राणमई कोश मनोमई कोश, और ज्ञान मई कोश, यह तीनों कोश सूक्ष्म शरीर में दाख़िल हैं, और आनंद मई कोश कारन शरीर कहलाता है, और चौथा जीव साक्षी यानी तुरिया पद है। कारन शरीर अभिमानी जीव को प्राग और सूक्ष्म को तेजस और अस्थूल को विश्व कहते हैं॥

अब ख़्याल करो कि पांचों कोश यानी तीनों शरीरों के अन्दर मनुष्य का निज रूप यानी आत्मा पोशीदा है, और जब तक इन कोशों या शरीरों यानी ग़िलाफ़ों को अभ्यास करके नहीं छेदेगा, तब तक अपने स्वरूप यानी आत्मा का दर्शन नहीं पावेगा। यह सब ग़िलाफ़ पिंड में हैं, जो कि मलीन माया का देश है और जिसकी हद्द छः चक्र में है। इसी तरह ब्रह्मांड में जहां कि शुद्ध माया है, ब्रह्म के भी चार स्वरूप है– एक बैराट यानी माया सबल ब्रह्म जो माया से मिल कर रचना कर रहा है, दूसरा हिरन्यगर्भ जो माया सबल को मदद दे रहा है और जहां से सूक्ष्म मसाला रचना का प्रगट हुआ और तीसरा अव्याकृत जहां से बीज रूप माया ज़ाहिर हुई और चौथा शुद्ध ब्रह्म है। जब इन सब ग़िलाफ़ों को अभ्यास की मदद से तोड़कर पार जावे तब शुद्ध ब्रह्म से मेला होवे, और

वहां जो वचन सच्चे ज्ञानी और जोगेश्वरों ने एकताई के कहे हैं सब सही और दुरुस्त मालूम पड़ेंगे, और जो कोई बिना अभ्यास किये हुए नीचे के देश में चाहे शुद्ध माया होवे चाहे मलीन उन वचनों को सुन कर और पढ़ कर अपने तईं शुद्ध ब्रह्म स्वरूप मानता है यह बड़ी ग़लती है, और देखने में आता है कि ऐसे कहनेवालों की हालत बिल्कुल नहीं बदलती. यानी उनके स्वभाव और आदत मुवाफ़िक़ संसारी जीवों के हैं, और मन और इन्द्री उन पर सवार रहते है और मेलों और तमाशों और शहरों और क़सबों में उनको नचाते रहते हैं—क्या ब्रह्म या आतम आनन्द में इस क़दर गत भी नहीं कि जो एक अस्थान पर ठहर कर अपने अन्तर में रस लेकर शांती हासिल करें ॥

४—यह भी ग़ौर करने के लायक़ है कि जो चेतन्य सर्व व्यापक है वह सब जगह माया के खोलों में चाहे वे भारी हैं या हलके ढका हुआ है, और इस देश में जो मलीन माया का अस्थान है वह व्यापक चेतन्य बहुत भारी खोलों में छिप रहा है, और इस सबब से उसकी ताक़त भी गुप्त है, अब जब तक कि बिशेष चेतन्य की जिस पर कि खोल हलके हैं मदद

न पहुंचे तब तक यह व्यापक चेतन्य कुछ काररवाई नहीं कर सकता है, अचेत पड़ा हुआ है इसका नमूना इसी लोक में ज़ाहिर है, यानी जो व्यापक चेतन्य इस लोक में मोजूद है, वह आप कुछ काम नहीं कर सकता जब तक कि बिशेष सूरज के चेतन्य की धार किरनियों के वसीले से इस अचेत चेतन्य को ताक़त देकर न जगावे। इसी तरह ऊपर के और नीचे के लोकों का हाल समझ लो। महाविशेष चेतन्य वह है जो बिल्कुल बेपरदा और बेख़ोल है, जिसको निर-मल और निरमाया चेतन्य कहना चाहिये—ऐसे देश में पहुंच कर, जीव चेतन्य जिसको संत सुरत कहते हैं ग़िलाफ़ों यानी देहियों के बंधन से छूट कर अपने अमर और पूरन आनंद स्वरूप को प्राप्त होगा, और जनम मरन और काल कलेश और देहियों के साथ के दुख सुख के फंदे सब कट जावेंगे और बिल्कुल दूर हो जावेंगे ॥

५—संत उस रास्ते और एक से एक विशेष चेतन्य के मंडलों का और फिर महाविशेष चेतन्य के धुर मंडल तक का भेद बताते हैं, और फ़रमाते हैं कि

जिस डोरी या धार पर कि सुरत चेतन्य उतरी है (क्योंकि कुल्ल रचना धारों की है, चाहे वे धारें सूक्ष्म से सूक्ष्म हैं या अस्थूल और चाहे वे नज़र आवें या नहीं) उसी डोरी या धार को पकड़ कर अपने निज देश में उलट कर जा सकती है। और मालूम होवे कि महा विशेष चेतन्य के मंडल के नीचे जिस क़दर रचना कि निरमाया और शुद्ध माया और मलीन माया के देश में हुई, वह उस धार ने करी जो महा विशेष चेतन्य के मंडल के नीचे की तरफ़ से निकली, और फिर किसी २ क़दर फ़ासले पर ठहरती और मंडल बांध कर रचना करती हुई चली आई है—फिर वही धार जिसको सुरत कहते हैं, और पिंड में उतर कर जागृत अवस्था में जिसका नेत्रों में बासा है, सन्तों की दया से उनकी जुगत यानी सुरत शब्द योग की कमाई करके, अपने निज देश में पिंड और ब्रह्मांड के परे उलट कर जा सकता है, और वहां पहुंच कर जनम मरन और दुःख सुख से सच्ची रिहाई हासिल कर सकती है। इसी का नाम सच्चा उद्धार है। और जब तक कि कोई भेद लेकर और अभ्यास करके घर की तरफ़ नहीं उलटेगा, तब तक ख़ाली बातें बनाने से उसका उद्धार होना किसी

सूरत में मुमकिन नहीं है। इसी सबब से वाचक ज्ञानी और सूफ़ी ख़ाली रह गये, और पारब्रह्म पद तक कि जो ब्रह्माण्ड में है न पहुंचे, और संतों का देश तो एक दर्जे उसके ऊपर रहा, जिसका भेद और पता योगी और योगेश्वर ज्ञानियों को नहीं मिला, उसका हाल सिर्फ़ संतों ने प्रगट किया, और जो कोई उनकी सरन लेकर चलना चाहे, वह उनकी दया से उनकी जुगती की कमाई करके पहुंच सकता है॥

॥ इति समाप्तम् ॥